"અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્" ગ્રંથ જીર્ણોધ્ધાર ૧૩૨

દૈવજ્ઞ કામધેનુ

: દ્રવ્ય સહાયક :

પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી પ્રેમભુવનભાનુસૂરિજી સમુદાયના
દીક્ષા દાનેશ્વરી પ.પૂ.આ.શ્રી ગુણરત્નસૂરીશ્વરજી મ.સા.ના
આજ્ઞાવર્તિની પૂજ્ય પ્રવર્તિની પૂણ્યરેખાશ્રીજી મ.સા.ની સુશિષ્યા
પૂજ્ય સાધ્વિજી શ્રી ચિરાગરેખાશ્રીજી મ.સા.ની પ્રેરણાથી
સં. ૨૦૬૭ ના ચાતુર્માસમાં શ્રી સવિતાબેન હીરાભાઈ
ગીરધરનગર, અમદાવાદના બંગલામાં
આરાધક શ્રાવિકાઓની જ્ઞાનખાતાની ઉપજમાંથી

: સંયોજક :

શાહ બાબુલાલ સરેમલ બેડાવાળા
શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર
શા. વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, સાબરમતી, અમદાવાદ-380005
(મો.) 9426585904 (ઓ.) 22132543

સંવત ૨૦૬૮ ઈ.સ. ૨૦૧૨

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ
શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન
હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.
(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૫ (ઈ. ૨૦૦૯) – સેટ નં-૧

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમાંક	પુસ્તકનું નામ	કર્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
001	श्री नंदीसूत्र अवचूरी	पू. विक्रमसूरिजी म.सा.	238
002	श्री उत्तराध्ययन सूत्र चूर्णी	पू. जिनदासगणि चूर्णीकार	286
003	श्री अर्हद्गीता-भगवद्गीता	पू. मेघविजयजी गणि म.सा.	84
004	श्री अर्हच्चूडामणि सारसटीकः	पू. भद्रबाहुस्वामी म.सा.	18
005	श्री यूक्ति प्रकाशसूत्रं	पू. पद्मसागरजी गणि म.सा.	48
006	श्री मानतुङ्गशास्त्रम्	पू. मानतुंगविजयजी म.सा.	54
007	अपराजितपृच्छा	श्री बी. भट्टाचार्य	810
008	शिल्प स्मृति वास्तु विद्यायाम्	श्री नंदलाल चुनिलाल सोमपुरा	850
009	शिल्परत्नम् भाग-१	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	322
010	शिल्परत्नम् भाग-२	श्रीकुमार के. सभात्सव शास्त्री	280
011	प्रासादतिलक	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	162
012	काश्यशिल्पम्	श्री विनायक गणेश आपटे	302
013	प्रासादमञ्जरी	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	156
014	राजवल्लभ याने शिल्पशास्त्र	श्री नारायण भारती गोंसाई	352
015	शिल्पदीपक	श्री गंगाधरजी प्रणीत	120
016	वास्तुसार	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	88
017	दीपार्णव उत्तरार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	110
018	જિનપ્રાસાદ માર્તણ્ડ	શ્રી નંદલાલ ચુનીલાલ સોમપુરા	498
019	जैन ग्रंथावली	श्री जैन श्वेताम्बर कोन्फ्रन्स	502
020	હીરકલશ જૈન જ્યોતિષ	શ્રી હિમ્મતરામ મહાશંકર જાની	454
021	न्यायप्रवेशः भाग-१	श्री आनंदशंकर बी. ध्रुव	226
022	दीपार्णव पूर्वार्ध	श्री प्रभाशंकर ओघडभाई	640
023	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-१	पू. मुनिचंद्रसूरिजी म.सा.	452
024	अनेकान्त जयपताकाख्यं भाग-२	श्री एच. आर. कापडीआ	500
025	प्राकृत व्याकरण भाषांतर सह	श्री बेचरदास जीवराज दोशी	454

026	**तत्त्पोपप्लवसिंहः**	**श्री जयराशी भट्ट, बी. भट्टाचार्य**	**188**
027	**शक्तिवादादर्शः**	**श्री सुदर्शनाचार्य शास्त्री**	**214**
028	**क्षीरार्णव**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**414**
029	**वेधवास्तु प्रभाकर**	**श्री प्रभाशंकर ओघडभाई**	**192**
030	**शिल्परत्नाकर**	**श्री नर्मदाशंकर शास्त्री**	**824**
031	**प्रासाद मंडन**	**पं. भगवानदास जैन**	**288**
032	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-१**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**520**
033	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-२**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**578**
034	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-३ (१)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**278**
035	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-3 (२) (३)**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**252**
036	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहन्न्यास अध्याय-५**	**पू. लावण्यसूरिजी म.सा.**	**324**
037	વાસ્તુનિઘંટુ	પ્રભાશંકર ઓઘડભાઈ સોમપુરા	302
038	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૧	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	196
039	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૨	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	190
040	તિલકમઞ્જરી ભાગ-૩	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	202
041	સપ્તસન્ધાન મહાકાવ્યમ્	પૂ. વિજયઅમૃતસૂરિશ્વરજી	480
042	સપ્તભઙ્ગીમિમાંસા	પૂ. પં. શિવાનન્દવિજયજી	228
043	ન્યાયાવતાર	સતિષચંદ્ર વિદ્યાભૂષણ	60
044	વ્યુત્પત્તિવાદ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	218
045	સામાન્યનિર્યુક્તિ ગુઢાર્થતત્ત્વાલોક	શ્રી ધર્મદત્તસૂરિ (બચ્છા ઝા)	190
046	સપ્તભઙ્ગીનયપ્રદીપ બાલબોધિનીવિવૃત્તિઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	138
047	વ્યુત્પત્તિવાદ શાસ્ત્રાર્થકલા ટીકા	શ્રીવેણીમાધવ શાસ્ત્રી	296
048	નયોપદેશ ભાગ-૧ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	210
049	નયોપદેશ ભાગ-૨ તરઙ્ગિણીતરણી	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	274
050	ન્યાયસમુચ્ચય	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	286
051	સ્યાદ્યાર્થપ્રકાશઃ	પૂ. લાવણ્યસૂરિજી	216
052	દિન શુદ્ધિ પ્રકરણ	પૂ. દર્શનવિજયજી	532
053	બૃહદ્ ધારણા યંત્ર	પૂ. દર્શનવિજયજી	113
054	જ્યોતિર્મહોદય	સં. પૂ. અક્ષયવિજયજી	112

શ્રી આશાપૂરણ પાર્શ્વનાથ જૈન જ્ઞાનભંડાર

સંયોજક – શાહ બાબુલાલ સરેમલ

શાહ વીમળાબેન સરેમલ જવેરચંદજી બેડાવાળા ભવન

હીરાજૈન સોસાયટી, રામનગર, સાબરમતી, અમદાવાદ-૦૫.

(મો.) ૯૪૨૬૫૮૫૯૦૪ (ઓ) ૨૨૧૩૨૫૪૩ (ઇ-મેલ) ahoshrut.bs@gmail.com

અહો શ્રુતજ્ઞાનમ્ ગ્રંથ જીર્ણોદ્ધાર – સંવત ૨૦૬૬ (ઈ. ૨૦૧૦) – સેટ નં-૨

પ્રાયઃ જીર્ણ અપ્રાપ્ય પુસ્તકોને સ્કેન કરાવીને ડી.વી.ડી. બનાવી તેની યાદી.

આ પુસ્તકો www.jainelibrary.org વેબસાઇટ પરથી પણ ડાઉનલોડ કરી શકાશે.

ક્રમ	પુસ્તકનું નામ	ભાષા	કર્ત્તા-ટીકાકાર-સંપાદક	પૃષ્ઠ
055	**श्री सिद्धहेम बृहद्वृत्ति बृहद्न्यास अध्याय-६**	सं	पू. लावण्यसूरिजी म.सा.	296
056	**विविध तीर्थ कल्प**	सं	पू. जिनविजयजी म.सा.	160
057	ભારતીય જૈન શ્રમણ સંસ્કૃતિ અને લેખનકળા	ગુજ.	पू. पूण्यविजयजी म.सा.	164
058	**सिद्धान्तलक्षणगूढार्थ तत्त्वलोकः**	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	202
059	**व्याप्ति पञ्चक विवृत्ति टीका**	सं	श्री धर्मदत्तसूरि	48
060	જૈન સંગીત રાગમાળા	ગુ.	श्री मांगरोळ जैन संगीत मंडळी	306
061	**चतुर्विंशतीप्रबन्ध (प्रबंध कोश)**	सं	श्री रसिकलाल एच. कापडीआ	322
062	**व्युत्पत्तिवाद आदर्श व्याख्यया संपूर्ण ६ अध्याय**	सं	श्री सुदर्शनाचार्य	668
063	**चन्द्रप्रभा हेमकौमुदी**	सं	पू. मेघविजयजी गणि	516
064	**विवेक विलास**	सं/गु.	श्री दामोदर गोविंदाचार्य	268
065	**पञ्चशती प्रबोध प्रबंध**	सं	पू. मृगेन्द्रविजयजी म.सा.	456
066	**सन्मतितत्त्वसोपानम्**	सं	पू. लब्धिसूरिजी म.सा.	420
067	ઉપદેશમાલા દોઘટ્ટી ટીકા ગુર્જરાનુવાદ	ગુજ.	पू. हेमसागरसूरिजी म.सा.	638
068	**मोहराजापराजयम्**	सं	पू. चतुरविजयजी म.सा.	192
069	**क्रियाकोश**	सं/हिं	श्री मोहनलाल बांठिया	428
070	**कालिकाचार्यकथासंग्रह**	सं/गु.	श्री अंबालाल प्रेमचंद	406
071	**सामान्यनिरुक्ति चंद्रकला कलाविलास टीका**	सं.	श्री वामाचरण भट्टाचार्य	308
072	**जन्मसमुद्रजातक**	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	128
073	**मेघमहोदय वर्षप्रबोध**	सं/हिं	श्री भगवानदास जैन	532
074	જૈન સામુદ્રિકનાં પાંચ ગ્રંથો	ગુજ.	श्री हिम्मतराम महाशंकर जानी	376

075	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	374
076	જૈન ચિત્ર કલ્પદ્રૂમ ભાગ-૨	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	238
077	સંગીત નાટ્ય રૂપાવલી	ગુજ.	**श्री विद्या साराभाई नवाब**	194
078	ભારતનાં જૈન તીર્થો અને તેનું શિલ્પસ્થાપત્ય	ગુજ.	**श्री साराभाई नवाब**	192
079	શિલ્પ ચિન્તામણિ ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री मनसुखलाल भुदरमल**	254
080	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૧	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	260
081	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-૨	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	238
082	બૃહદ્ શિલ્પ શાસ્ત્ર ભાગ-3	ગુજ.	**श्री जगन्नाथ अंबाराम**	260
083	આયુર્વેદના અનુભૂત પ્રયોગો ભાગ-૧	ગુજ.	**पू. कान्तिसागरजी**	114
084	કલ્યાણ કારક	ગુજ.	**श्री वर्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री**	910
085	**विश्वलोचन कोश**	**सं./हिं**	**श्री नंदलाल शर्मा**	436
086	કથા રત્ન કોશ ભાગ-1	ગુજ.	**श्री बेचरदास जीवराज दोशी**	336
087	કથા રત્ન કોશ ભાગ-2	ગુજ.	**श्री बेचरदास जीवराज दोशी**	230
088	હસ્તસઞ્જીવનમ્	સં.	**पू. मेघविजयजीगणि**	322
089	ઐન્દ્રચતુર્વિંશતિકા	સં.	**पू.यशोविजयजी, पू. पुण्यविजयजी**	114
090	સમ્મતિ તર્ક મહાર્ણવાવતારિકા	સં.	**आचार्य श्री विजयदर्शनसूरिजी**	560

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६७ (ई. 2011) सेट नं.-३

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची । *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / टीकाकार	भाषा	संपादक / प्रकाशक	पृष्ठ
91	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-१	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	272
92	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-२	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	240
93	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-३	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	254
94	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-४	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	282
95	स्याद्वाद रत्नाकर भाग-५	वादिदेवसूरिजी	सं.	मोतीलाल लाघाजी पुना	118
96	पवित्र कल्पसूत्र	पुण्यविजयजी	सं./अं	साराभाई नवाब	466
97	समराङ्गण सूत्रधार भाग-१	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	342
98	समराङ्गण सूत्रधार भाग-२	भोजदेव	सं.	टी. गणपति शास्त्री	362
99	भुवनदीपक	पद्मप्रभसूरिजी	सं.	वेंकटेश प्रेस	134
100	गाथासहस्त्री	समयसुंदरजी	सं.	सुखलालजी	70
101	भारतीय प्राचीन लिपीमाला	गौरीशंकर ओझा	हिन्दी	मुन्शीराम मनोहरराम	316
102	शब्दरत्नाकर	साधुसुन्दरजी	सं.	हरगोविन्ददास बेचरदास	224
103	सुबोधवाणी प्रकाश	न्यायविजयजी	सं./गु	हेमचंद्राचार्य जैन सभा	612
104	लघु प्रबंध संग्रह	जयंत पी. ठाकर	सं.	ओरीएन्ट इन्स्टीट्युट बरोडा	307
105	जैन स्तोत्र संचय-१-२-३	माणिक्यसागरसूरिजी	सं,	आगमोद्धारक सभा	250
106	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-१,२,३	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	514
107	सन्मति तर्क प्रकरण भाग-४,५	सिद्धसेन दिवाकर	सं.	सुखलाल संघवी	454
108	न्यायसार – न्यायतात्पर्यदीपिका	सतिषचंद्र विद्याभूषण	सं.	एसियाटीक सोसायटी	354
109	जैन लेख संग्रह भाग-१	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	337
110	जैन लेख संग्रह भाग-२	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	354
111	जैन लेख संग्रह भाग-३	पुरणचंद्र नाहर	सं./हि	पुरणचंद्र नाहर	372
112	जैन धातु प्रतिमा लेख भाग-१	कांतिविजयजी	सं./हि	जिनदत्तसूरि ज्ञानभंडार	142
113	जैन प्रतिमा लेख संग्रह	दौलतसिंह लोढा	सं./हि	अरविन्द धामणिया	336
114	राधनपुर प्रतिमा लेख संदोह	विशालविजयजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	364
115	प्राचिन लेख संग्रह-१	विजयधर्मसूरिजी	सं./गु	यशोविजयजी ग्रंथमाळा	218
116	बीकानेर जैन लेख संग्रह	अगरचंद नाहटा	सं./हि	नाहटा ब्रधर्स	656
117	प्राचीन जैन लेख संग्रह भाग-१	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	122
118	प्राचिन जैन लेख संग्रह भाग-२	जिनविजयजी	सं./हि	जैन आत्मानंद सभा	764
119	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-१	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
120	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-२	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	404
121	गुजरातना ऐतिहासिक लेखो-३	गिरजाशंकर शास्त्री	सं./गु	फार्बस गुजराती सभा	540
122	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-१	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	274
123	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-४	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	414
124	ऑपरेशन इन सर्च ऑफ संस्कृत मेन्यु. इन मुंबई सर्कल-५	पी. पीटरसन	अं.	रॉयल एशियाटीक जर्नल	400
125	कलेक्शन ऑफ प्राकृत एन्ड संस्कृत इन्स्क्रीप्शन्स	पी. पीटरसन	अं.	भावनगर आर्चीऑलॉजीकल डिपा.	320
126	विजयदेव माहात्म्यम्	जिनविजयजी	सं.	जैन सत्य संशोधक	148

श्री आशापूरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार

संयोजक – शाह बाबुलाल सरेमल - (मो.) 9426585904 (ओ.) 22132543 - ahoshrut.bs@gmail.com
शाह वीमळाबेन सरेमल जवेरचंदजी बेडावाळा भवन
हीराजैन सोसायटी, रामनगर, साबरमती, अमदावाद-05.

अहो श्रुतज्ञानम् ग्रंथ जीर्णोद्धार – संवत २०६८ (ई. 2012) सेट नं.-४

प्रायः अप्राप्य प्राचीन पुस्तकों की स्केन डीवीडी बनाई उसकी सूची । *यह पुस्तके www.jainelibrary.org वेबसाइट से भी डाउनलोड कर सकते हैं।*

क्रम	पुस्तक नाम	कर्त्ता / संपादक	भाषा	प्रकाशक	पृष्ठ
127	महाप्रभाविक नवस्मरण	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	754
128	जैन चित्र कल्पलता	साराभाई नवाब	गुज.	साराभाई नवाब	84
129	जैन धर्मनो प्राचीन इतिहास भाग-२	हीरालाल हंसराज	गुज.	हीरालाल हंसराज	194
130	ओपरेशन इन सर्च ओफ सं. मेन्यु. भाग-६	पी. पीटरसन	अंग्रेजी	एशियाटीक सोसायटी	171
131	जैन गणित विचार	कुंवरजी आणंदजी	गुज.	जैन धर्म प्रसारक सभा	90
132	दैवज्ञ कामधेनु (प्राचिन ज्योतिष ग्रंथ)	शील खंड	सं.	ब्रज. बी. दास बनारस	310
133	करण प्रकाश	ब्रह्मदेव	सं./अं.	सुधाकर द्विवेदि	276
134	न्यायविशारद महो. यशोविजयजी स्वहस्तलिखित कृति संग्रह	यशोदेवसूरिजी	गुज.	यशोभारती प्रकाशन	69
135	भौगोलिक कोश-१	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	100
136	भौगोलिक कोश-२	डाह्याभाई पीतांबरदास	गुज.	गुजरात वर्नाक्युलर सोसायटी	136
137	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	266
138	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-१ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	244
139	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	274
140	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-२ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	168
141	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-१, २	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	282
142	जैन साहित्य संशोधक वर्ष-३ अंक-३, ४	जिनविजयजी	हिन्दी	जैन साहित्य संशोधक पुना	182
143	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-१	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	384
144	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-२	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	376
145	नवपदोनी आनुपूर्वी भाग-३	सोमविजयजी	गुज.	शाह बाबुलाल सवचंद	387
146	भास्वति	शतानंद मारछता	सं./हि	एच.बी. गुप्ता एन्ड सन्स बनारस	174
147	जैन सिद्धांत कौमुदी (अर्धमागधी व्याकरण)	रत्नचंद्र स्वामी	प्रा./सं.	भैरोदान सेठीया	320
148	मंत्रराज गुणकल्प महोदधि	जयदयाल शर्मा	हिन्दी	जयदयाल शर्मा	286
149	फक्कीका रत्नमंजूषा-१, २	कनकलाल ठाकूर	सं.	हरिकृष्ण निबंध	272
150	अनुभूत सिद्ध विशायंत्र (छ कल्प संग्रह)	मेघविजयजी	सं./गुज	महावीर ग्रंथमाळा	142
151	सारावलि	कल्याण वर्धन	सं.	पांडुरंग जीवाजी	260
152	ज्योतिष सिद्धांत संग्रह	विश्वेश्वरप्रसाद द्विवेदी	सं.	ब्रीजभूषणदास बनारस	232
153	ज्ञान प्रदीपिका तथा सामुद्रिक शास्त्रम्	रामव्यास पान्डेय	सं.	जैन सिद्धांत भवन	160
	नूतन संकलन				
१	आ. चंद्रसागरसूरिजी ज्ञानभंडार – उज्जैन	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	
२	श्री गुजराती श्वे.मू. जैन संघ-हस्तप्रत भंडार – कलकत्ता	हस्तप्रत सूचीपत्र	हिन्दी	श्री आशापुरण पार्श्वनाथ जैन ज्ञानभंडार	

8 ||| 3-21

BENARES SANSKRIT SERIES;

A

COLLECTION OF SANSKRIT WORKS

EDITED BY THE

PANDITS OF THE BENARES SANSKRIT COLLEGE,

UNDER THE SUPERINTENDENCE OF

R. T. H. GRIFFITH, M. A., C. I. E.

AND

G. THIBAUT, PH. D.

No. 97.

दैवज्ञकामधेनुः ।

अर्थात्

प्राचीनज्योतिषग्रन्थः ।

लङ्कायाम् हस्तवनगल्यनामकेमहाविहारेऽध्युषितेन महामहोपाध्यायेन श्रीमताअनवमदर्शीसङ्घराजवरेण सङ्कलिता ॥

DAIWAGNAKÂMADHÊNU,

A Treatise on Astrology

BY the very Venerable Anavamadarsî Sangharâja Mahâsthavira of the Hastavanagalya Parivena, Ceylon.

Edited by the Very REV. C. A. Seelakkhandha Sthavira of the "Sailabimbârâma" Vihâra, DODANDUWÂ, CEYLON

& *Seetarama Upadhyaya, Sanskrit College Benares.*

Fasciculus I.

BENARES.

Published by the Proprietors Messrs. Braj B. Das & Co.,

AND SOLD BY H. D. GUPTA,

Secretary, Chowkhamba Sanskrit Book Depot.

Printed at T. P. W. & the Vidyâvilâs Press.

BENARES.

1905.

Registered under Act XXV. of 1867. (ALL RIGHTS RESERVED.)

Aho ! Shrutgyanam

सूचीपत्रम् ।

गणपाठः	०	४	०
गोलप्रकाशः	२	८	०
गंगालहरी	०	१	०
गुरुसारणी	०	४	०
जातकतत्त्वम्	०	१२	०
तत्त्वदीप	०	१	०
तर्कसंग्रहः	०	१	६
दत्तकमीमांसा	०	८	०
धर्म्मशास्त्रसंग्रहः	०	१	६
धातुपाठः (शिला -))	०	२	०
धातुरूपावली	०	२	६
नैषध चरित नारायणी टीका टाइप	४	०	०
परिभाषापाठः	०	१	०
पाणिनीयशिक्षा भाष्यसहिता	०	२	०
प्रथम परीक्षा	०	२	०
प्रथमपुस्तक हिन्दी	०	१	०
प्रश्नभूषणम् (प्रश्न विचार का बहुत उत्तम ग्रन्थ)	०	४	०
बीजगणितम् (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	८	०
भट्टीकाव्य ५ सर्ग	०	६	०
मनोरमा शब्दरत्नसहिता (टाइप)	९	०	०
लघुकौमुदी टिप्पणीसहिता	०	४	०
लक्षणावली	०	२	०
लीलावती (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	०	०
वसिष्ठसिद्धान्तः	०	१	६
वार्तिकपाठः	०	४	०
विष्णुसहस्रनाम	०	१	०
शब्दरूपावली	०	१	६
शृङ्गार सप्तशती	१	८	०
समासचक्रम्	०	१	०
समासचन्द्रिका	०	१	०
सरस्वतीकण्ठाभरणम्	३	०	०
साङ्ख्यचन्द्रिका टिप्पणीसहिता	०	८	०
साङ्ख्यतत्त्वकौमुदी	०	६	०
सिद्धान्तकौमुदी	४	०	०
सिद्धान्तमुक्तावली दिनकरीटिप्पणीसहिता	३	०	०
उपसर्गवृत्ति	०	१	०

Aho ! Shrutgyanam

दैवज्ञकामधेनुः ।

नमः शाक्यसिंहाय ॥

प्रथमोऽध्यायः

अथ प्रारम्भः

प्रतिफलन्ति जगन्ति समन्ततो-
महति यद्धिषणा[1]मणिदर्पणे ।
स भगवान् मुनिरीहितसिद्धये
हृदि चिरं मम गन्धकुटीयताम् ॥ १ ॥
अनुगतजिनशिष्टिर्ब्रह्मवंशैक दृष्टि-
र्मुनिरनवमदर्शी पारदर्शी कलानाम् ।
प्रणयति सकलां सद्ग्रन्थ[2]सारार्थदोग्ध्रीं
विबुधजननिषेव्यां दैववित्कामधेनुम् ॥ २ ॥
ईर्ष्याः पिशाचाश्चपलात्मभाजो-
निन्दन्ति ये तेषु ममास्ति नास्था ।
आराधकोऽहं महतान्तु तेषां
येऽत्रश्रमज्ञाश्च परार्थकामाः ॥ ३ ॥
प्राच्यैर्वराहमिहिरादिभिरभ्यधायि[3]
व्यासेन यच्चरितमम्बरगोचराणाम् ।

---

१ मतिः ॥ २ षट्ग्रन्थ ॥ ३ रभ्ययायि ॥

Aho ! Shrutgyanam

संहृत्य तत् प्रथममत्र विभावयामि
सङ्ख्यानसंस्करणनिर्णययुक्तियुक्तम् ॥ ४ ॥
अब्दं द्विधाकेलय्याऽधमूर्ध्वस्थं वर्द्धयेत् सुखैः ।
धीरनागैरधोन्यस्तं नदीतीर्थेन भाजयेत् ॥ ५ ॥
लब्धं दिनादिकं मूर्ध्नि दत्वा तत्तत्परादिकम् ।
हित्वा कोमलनामानि मासवाक्यानि पूरयेत् ॥ ६ ॥

विशुद्धनिधिपातः । विमर्द्दनपुरस्त्री । कुशान्धयखरोरुः । वशीतिलकरुद्रः । शिवाब्धिबुधपुत्री । नेयाम्बुनीषुयात्रा । नयाम्बुनवपूरः । दिवानवरिपुस्त्री । दशाङ्गनरकारी । प्रवीरगुरुयन्त्रः । विवासनविकारी । मृगाकुलीतपोस्त्री । स्वैरजगृहादितः प्रभृति मासवाक्यानि ॥

नाभिना सर्व्वमाहृत्य नीचाप्तमुपरिक्षिपत् ।
लीनेनोर्ध्वस्थमाहृत्य घटिकादिञ्च साधयेत् ॥ ७ ॥
दिनानि दद्याच्छुक्रादीन्याकलोयमहर्गणात् ।
ततो धीदण्डनेयश्रीलब्धं खण्डयुगं भवेत् ॥ ८ ॥
शिष्टमिष्टदिनम्प्रोक्तं युगोदयदिनादिमम् ।
युगोदयदिनेशः स्याद् युगमानेन वा हृते ॥ ९ ॥
गुणकारः फलं नाम भागहारं प्रमाणकम् ।
प्राप्तलाभो भवेदब्दसंस्कारे तु यथाह्वयम् ॥ १० ॥
दिनराशिर्भवेदिच्छा हन्यात्तम्फलराशिना ।
विभाजयेत् प्रमाणेन लाभताराकलादिकम् ॥ ११ ॥
वर्त्तमानयुगाब्दानि भागहारैर्विभाजयेत् ।
लब्धं धनमृणं वा स्याद् ग्रहाणां स्वस्वमध्यमे॥ १२ ॥

---

१ कलय्यात ॥ २ रसो ॥ ३ कुशान्वषखरोरुः ॥ ४ नरा ॥ ५ नयाल ॥ ६ नाह्निना सर्व्वमाहृत्य ॥ ७ नीवास ॥

Aho ! Shrutgyanam

चक्रपादञ्च चक्रार्द्धं दध्याश्चन्द्रोच्चपातयोः ।
यथास्वं निक्षिपेत्तत्र ध्रुवाणि च यथाक्रमम् ॥ १३ ॥
चन्द्रात्ततुङ्गभौमज्ञजीवशुक्रार्किराहुषु ।
ध्रुवाणि युगमानेन प्रक्षुण्णयुगभुक्तयः ॥ १४ ॥
तण्डुललाभी । लीन नरः स्याद् । भैरवपूजा । कोशलराज्ञः ।
भीरुररन्धः । शौण्डगतीनां । ज्ञानरयाब्दे । कान्तिपताका॥१५
भीरुरनागोरुद्रयमः स्याद् दैवजराजावंशगजानाम् ।
वारिचराब्धिर्भूसुलभोयं चण्डसमाजे भिन्ननतोजिः ।
सत्रुटिकास्ते भूयुग भोगाः † ॥ १६ ॥
भेनाभ्यस्ते स्वदेशक्षितिपरिधिमतो भाजकाकर्णलब्ध-
स्तेन स्वभ्यस्तभुक्तिर्गणितहृदयविद् भाजयित्वा विलिप्ताम् ।
या रेखामेरुलङ्कान्तरमृजुपतिता तत्र पूर्व्वापरार्द्धैः
शोध्यः योज्यं क्रमेण प्रणयति विहिते मध्यमेखे चराणाम् १७
सुमेरु हिमवान् वत्सपुर्य्यवन्ति चकोरकः ।
वायुः खरश्च लङ्केति रेखामध्यगतास्त्रिहि ॥ १८ ॥
देशान्तरविधिं हित्वा केचिद्बीजक्रियां जगुः ।
कल्याब्दे गात्रतुङ्गोने नानादीपा हृतं तथा ॥ १९ ॥
यथा स्वम्भाजकैः प्राप्तं हन्याद् बीजफलम्भवेत् ।
भवेत् सुधामयूखस्य भाजको मम शाषणम् ॥ २० ॥
अस्य तुङ्गे ध्रुवोच्चाटा क्षमापुत्रस्य सत्कविः ।
बुधशीघ्रे जितामासाः ससुरेड्येननोनटः ॥ २१ ॥
भृगुशीघ्रे धरारूपं शनेः याज्ञाविधुर्नेनु ।
तमसो धूर्त्तधूर्पश्चेसमीभिर्भादिकं हरेत् ॥ २२ ॥

---

१ चन्द्रातन्तुङ्ग ॥ २ नरा ॥ ३ मिछा ॥ ४ चथा ॥ ५ शतायोज्ञा ।
६ श्वेदमीभिः ।

† अस्य तु अन्त्यचरणमुपलब्धेषु सर्व्वपुस्तकेषु ऊनमेव दृश्यते॥

यद्वा प्रवर्त्तितं वर्षं स्वस्वबीजेन ताडयेत् ।
विभज्य विम्बयोगेण लब्धा लिप्तादयस्ततः ॥ २३ ॥
शरोभयार्य नागानां नागवंन्निशिनिर्द्दयम् ।
परेचोल इतिन्वादि क्रमात् स्युर्वाजिराशयः ॥ २४ ॥
तदेतद्योजयेद् भौमबुधभास्करसूनुषु ।
शोधयेच्चन्द्रचान्द्राच्च जीवभार्गवराहुषु ॥ २५ ॥
युगाब्दं भास्करादीनां भागहारैर्विभाजयेत् ।
लब्धा लिप्तादयः प्राग्वत् तेषामृणधनाक्रिया ॥ २६ ॥
तुलांशकोरतिर्ज्जा याद्दत्तीसूनुस्समापुरी ।
भूभेकचन्द्र इत्येते भागहारा यथाक्रमम् ॥ २७ ॥
आर्य्यादिसुतभान्तेषु रवेर्बीजं विशोधयेत् ।
इदंवा बीजकर्म्मोक्तं चक्षुस्साम्यप्रतीतये ॥ २८ ॥
ज्ञानतुलां पुरस्कृत्य सूर्य्यादीनां यथाविधि ।
इच्छादि न क्रियां कुर्य्याल्लिब्धा भोगविनाड़िका ॥ २९ ॥
चतुरो हिममौलिनगः कवयो
मुनिकोटिखरः खगविद् ध्वनिना ।
भयवित्सुरगान्तममी क्रमशो
दिनभुक्तिविलिप्तिगणा विहिता ॥ ३० ॥
अभीष्टविघटी हित्वा ज्ञानतुलात् पुरस्थितात् ।
शेषं भागविनाड़ीभिस्ताड़यित्वा यथाविधि ॥ ३१ ॥
अनुज्ञा तत्परैर्भक्ता ततो लब्धकलादिकम् ।
एष्य मध्यमतो जह्याद्युञ्जीतातीतमध्यमैः ॥ ३२ ॥

इतिसामान्यविधिनामप्रथमोध्यायः ।

---

१ याद्वापवर्त्तितम् । २ याना । ३ निशिर्द्दयम् । ४ वर्ज्ज ।
५ चान्द्र । ६ ज्ञाण । ७ ज्ञाणं ।

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथ वक्ष्यामि संक्षेपाच्चरितं द्वादशात्मनः ।
ज्ञानतुलाफलं तस्य यजासञ्जीवनम्प्रभा ॥ १ ॥
ऋणेनर्षे[2] भगादीनां धर्म्मवाक्येन[3] भाजकः ।
रवेर्मध्यममेव स्यान्मध्यमं बुधशुक्रयोः ॥ २ ॥
भौमजीवशनीनां तु शीघ्रोच्चन्तदुदाहृतम् ।
रवेर्मध्यमतो हित्वा लिप्ताद्यं पौर्णमीं ततः ॥ ३ ॥
शेषे गोलपदञ्चैव ज्ञात्वा कर्म्म समाचरेत् ।
पूर्व्वार्धमुत्तरं गोलमाचित्रादर्धमादिशेत् ॥ ४ ॥
चित्रान्तार्द्धं महत्सैव पश्चिमार्धञ्च दक्षिणाम् ।
पादोनास्तारकाःसप्तपाद इसत्र [4]निश्चितः ॥ ५ ॥
सपादं तारकाद्वन्द्वं राशिरित्यभिधीयते ।
नागालयाख्यं यद्यस्ति मण्डलार्द्धं तमुद्धरेत् ॥ ६ ॥
शुभार्च्चनाख्यपादो वा तमप्यस्माद्विशोधयेत् ।
पादास्थितञ्च विज्ञेयं समश्चेद्विषमात् पदात् ॥ ७ ॥
तं विशोध्य स्थिताञ् शेषान् द्विगुणीकृत्य [5]कोविदः ।
सपादताराद्वन्द्वस्य गुणमेकं समुद्धरेत् ॥ ८ ॥
तत्तङ्ख्याया गुणान्मूर्ध्नि पूरयेद्विकलामयान् ।
शेषे चान्त्यगुणाभ्यस्ते माङ्गल्येन हृतं क्षिपेत् ॥ ९ ॥
तदेतद्विकालापिण्डं पूर्व्वार्द्धे तस्य मध्यमात् ।
शोधयेदपरार्धे तु योजयेत् स रविस्फुटः ॥ १० ॥
दीर्घिका धूलिका कारिका वर्धनी
वाणिनी लेखिनी षड्गुणा भास्वता ।

---

१ ज्ञाण । २ साणायवर्षेभ्भादीनाम् । ३ वाक्याय । ४ निश्चयाः ।
५ ताविदः ।

अष्टनुद् धाननुद् दाननुद् बीननुद्
भिन्ननुव् किन्नुना तत्फला तिक्रमाव् ॥ ११ ॥
चातुरीशचतुर्भुक्तिस्तत्रान्तज्याफलं न्यसेत् ।
मध्ययोः पादयोर्जह्याादन्ययोः स स्फुटो भवेत् ॥ १२ ॥
स्फुटन्तु विकलीकृत्य ज्ञानपादेन भाजयेत् ।
लब्धंराशिर्भवेच्छिष्टमतीतमिति निर्दिशेत् ॥ १३ ॥
अतीतश्चेदतस्त्यक्ता शेषं विद्यादनागतम् ।
उभयं स्फुटभोगेन भाजयित्वा ततो हृतम् ॥ १४ ॥
अतीतमनतीतञ्च दिवसादि विनिर्दिशेत् ।
ज्ञानपादावशिष्टं यत्प्रागतीतमुदाहृतम् ॥ १५ ॥
तच्चेदल्पतरं भुक्ते सङ्क्रमःस्यात्तदानतैः ।
हृत्वा भोगहृतं नीतिशुद्धसङ्क्रमनाड़िका ॥ १६ ॥
अस्ति लङ्केतिविख्याता राजधानी सुरद्विषाम् ।
भर्त्तुःसामध्यरेखाया स्थलस्य च जलस्यच ॥ १७ ॥
सैव सीमा भवेत्भानोर्दक्षिणोत्तरगोलयोः ।
न तत्रविषुवन्मध्यश्छाया स्याद् गोलयोन्तरः ॥ १८ ॥
योजने नोनषष्ठ्यंशे नैकव्यङ्गुलमेधते ।
विषुवद्व्यङ्गुलं नाम तदेतत्परिकीर्त्तितम् ॥ १९ ॥
आश्विनीतारकाङ्कच्छेदुत्तरस्यां दिवाकरः ।
दक्षिणस्यान्तु सङ्क्रान्तमन्तरालं दिवांशकम् ॥ २० ॥
विसुवन्मण्डलादूर्ध्वमधस्ताद्याम्यसौम्ययोः ।
चतुर्विंशतिभागान्ते प्रवृत्तमपमण्डलम् ॥ २१ ॥
तारा[2]ग्रहेन्दुपातार्क्का भ्रमन्त्यस्मिंस्तमन्तरम् ।
क्षितिच्छाया च तत्रैवं मण्डलार्धे विवस्वतः ॥ २२ ॥

---

१ त्राण ॥ २ ताराग्रहेन्दुसुपातार्कं ॥

Aho ! Shrutgyanam

चत्वारिंशत्कलायुक्तं भागद्वितयमङ्गुलम् ।
विद्यादानेन मानेन मध्यमष्टादशाङ्गुलम् ॥ २३ ॥
पार्श्वयोर्मध्यसूत्रस्य सन्धिमार्गेस्त्रयन्त्रयम् ।
प्रत्येकं त्र्यङ्गुलस्थे च खण्डमेकं नवाङ्गुलम् ॥ २४ ॥
मेषादित्रितये संज्ञा मध्यसूत्रादुदीक्रषु ।
मीनादित्रितयनामानि विलोमाद्याम्यतस्त्रिषु ॥ २५ ॥
कोणतो विनिवृत्तिःस्यादयनं नाम भास्वतः ।
लङ्घनं मध्यसूत्रस्य गोलोच्चलनमुच्यते ॥ २६ ॥
विधाय पद्मिनीबन्धोः स्फुटं विघटिकामयम् ।
भाजयेत् ज्ञानगम्भीरैर्यदिनैकोपि लभ्यते ॥ २७ ॥
उत्तरायनगोमध्यसूत्रादन्तम् प्रवर्त्तते ।
यद्येको लभ्यते भानुस्तदा याम्यायनोन्मुखः ॥ २८ ॥
द्वितयं यदि लभ्येत शेषस्तत्र च नास्ति चेत् ।
मध्यसूत्रे स्थितः शेषे विद्यतेऽब्दे बहिर्गतम् ॥ २९ ॥
त्रितयं यदिलभ्येत तदायाम्याय नोन्मुखम् ।
यदि चत्वारि लभ्यन्ते मध्यसूत्रे पुनःस्थितम् ॥ ३० ॥
चतुर्विकल्पे शून्ये द्वे क्रमाच्छेषं विवर्धयेत् ।
विधिना बन्धुना नालैर्वीजैस्तेनैव भाजयेत् ॥ ३१ ॥
लब्धं दिनादिकं भानोस्तत्तत्सूत्रादपेयुषः ।
पूर्वोक्तानेव ताञ् शेषान्नानासूत्रैर्विभाजयेत् ॥ ३२ ॥
सम्प्राप्तमगुङ्लं भानोस्तत्तत्सूत्रादपेयुषः ।
स्वदेशोदयरेखान्तु ज्ञातुकामो विचक्षणः ॥ ३३ ॥
विषुवद्व्यगुङ्लं भक्त्वा शम्भुना लब्धमङ्गुलम् ।
स्वदेशरेखाभूमध्ये रेखयोरन्तरम्भवेत् ॥ ३४ ॥

---

१ लघनम् ॥ २ पर्य्यादि ॥ ३ शून्यद्वये ॥ ४ मध्यरेखयोरन्तरम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

स्वदेशोदयरेखायामुदयसंशुमालिनि ।
मध्यच्छाया च न भवेद् दृष्टिच्छाया चे सम्भवेत् ॥ ३५ ॥
विषुवद्व्यङ्गुलं ज्ञानसूत्राभ्यस्तम्भवेत्त्रिधा ।
काञ्चनैर्विंशदैश्चाथ कन्दर्पैश्च विभाजयेत् ॥ ३६ ॥
लब्धं चरार्धवाक्यानि मेषादीनां क्रमोत्क्रमात् ।
लङ्कार्कोदयवाक्येषु तेषामृणधनक्रिया ॥ ३७ ॥
अमात्यशाषणं मांससूनुजिच्छाषणार्थदम् ।
लङ्कार्कोदयवाक्यानि मेषादीनां क्रमोत्क्रमात् ॥ ३८ ॥
क्रमोत्क्रमेण संस्थाप्य वाक्यान्येतानि कोविदः ।
ततश्चरार्द्धवाक्यानि शोधयेत् प्रथमत्रये ॥ ३९ ॥
पश्चिमात्रितये तानि व्युत्क्रमेण च योजयेत् ।
नाम्ना संस्कृत वाक्यानि तानि विद्याद्विचक्षणः ॥४०॥
मेषादिषट्के क्रमशो व्युत्क्रमेण तुलादिषु ।
असुरैस्तानि विभजे लब्धा लग्नविनाडिका ॥ ४१ ॥
ततो धनेन लब्धास्तु मेषाद्यंशकभुक्तयः ।
मध्याह्नार्कस्फुटं ज्ञात्वा गोलं कुर्यात्पदक्रियाम् ॥ ४२ ॥
सपादताराद्रन्द्रस्य वाक्यमेकं समुद्धरेत् ।
चरार्धवाक्यैनैतेषां सङ्ख्यया मूर्ध्नि पूरयेत् ॥ ४३ ॥
शेषन्तु विकलीकृत्य परवाक्येन वर्द्धयेत् ।
विभज्य ज्ञानपादेन लब्धं चोपरि निक्षिपेत् ॥ ४४ ॥
नानानागवरेतश्च याम्यदक्षिणगोलयोः ।
योजयेच्छोधयेच्चाथ यथाविधि विचक्षणः ॥ ४५ ॥
ततो ज्ञानमतापाप्तं दिनार्धघटिकादिकम् ।
तच्चनागात् समुद्धृत्य निशार्धं स्थितमिष्यते ॥ ४६ ॥

---

१ शंकवे ॥ २ ज्ञाण ॥ ३ धषने ॥ ४ मध्यान्भार्कस्फुटम् ।

Aho ! Shrutgyanam

मध्यार्कस्योजपादन्तु विलिप्तीकृत्य कोविदः ।
दिनार्धविकलाप्राप्तं घटिकादि विनिर्द्दिशेत् ॥ ४६ ॥
नवेनाभ्यस्य तत्सर्व्वं नीचाप्तमुपरि क्षिपेत् ।
लीनोनोर्ध्वस्थमाहृत्य लब्धव्यङ्गुलमिष्यते ॥ ४७ ॥
विसुवद्व्यङ्गुलेनाथ दक्षिणोत्तरगोलयोः ।
योज्यं शोध्यन्न चेच्छोध्यं व्यक्तये न विशोधयेत् ॥४८॥
मध्यं[1] च्छायामिमां विद्यादुदयार्कस्फुटं पुनः ।
विलिप्तीकृत्य तत्रापि[2] ज्ञानपादहृतं वृथा ॥ ४९ ॥
शेषन्तु तत्र सन्ताड्य निजोदयविलिप्तिभिः ।
ज्ञा[3]नपादैः समाहृत्य लब्ध[4]भुक्तिर्विनाडिका ॥५०॥
विशोध्य स्वोदये शेषमभुक्तं विकलां वदेत् ।
क्षिप्त[5]लग्नान्तरं तस्य मिष्टकालञ्च साधयेत् ॥ ५१ ॥
अर्कभुक्तिहतायातलग्नसंख्या भवेत् ततः ।
वीराङ्गेण विभज्याप्ता विलिप्ताश्च विशोधयेत् ॥ ५२ ॥
पूर्व्वापराह्णयोर्यातगन्तव्यविकलांगणे ।
दिनार्धविकलांशुद्ध्यशेषं सप्तपदस्य चेत् ॥ ५३ ॥
भाग्येन वर्द्धयेद् गोपैः षडर्द्धचरणस्य चेत् ।
ष[6]ट्पदस्यान्तराज्येन वर्धयित्वा स्थितं पुनः ॥ ५४ ॥
क्रमेण यातयातव्यविकलाभिर्विभाजयेत् ।
अङ्गुलादि ततो लब्धं मध्यच्छायामिह क्षिपेत् ॥ ५५ ॥
अर्द्धीकृतं तदेकश्च तस्य तस्य पदम्भवेत् ।
पदं रत्नहतं तत् तद् गुणाकारेण संयुतम् ॥ ५६ ॥
पूर्व्वापराह्णयोर्मध्यच्छायाविरहितं ततः ।
नीचेन वर्धयेदेष भागहारो भविष्यति ॥ ५७ ॥

---

१ ध्य । २ स्या । ३ ज्ञाण । ४ लब्धं । ५ त्तिप्ता लग्नान्तरन्तस्य ।
६ षट्पदस्यन्तु ।

Aho ! Shrutgyanam

तत्तद्गुणीकृताभ्यस्यदिनार्द्धविकलागणम् ।
भाजकेन हृतायातयातव्यघटिकादयः ॥ ५८ ॥
स्थापयेद् दृष्टविकलां युक्तां भुक्तिविलिप्तिभिः ।
ततोऽर्कराशेरारभ्य लग्नभुक्तिर्विशोधयेत् ॥ ५९ ॥
अशोध्यशेषमास्थाप्य भानुनाऽतीतराशिषु ।
सङ्ख्याशोधितलग्नानां दत्वा तन्मूर्ध्नि निक्षिपेत् ॥ ६० ॥
व्यङ्गुलेरुभयं राशिमभ्यसेत्तदधःस्थितात् ।
तदानीं लग्नभोगाप्तं लिप्तादुपरि निक्षिपेत्॥ ६१ ॥
ततश्चनूतनैः प्राप्तं नक्षत्रमिति निर्दिशेत् ।
भक्तेष्टविघटीमर्के भुक्त्या ज्ञानोन्नतांकुरैः ॥ ६२ ॥
भाजितानि कलादीनि क्षिप्त्वा लग्नस्फुटं वदेत् ।
लग्नस्फुटं कलीकृत्य व्यङ्गुलेन विभाजयेत् ॥ ६३ ॥
लब्धं राशिरितिज्ञेयं शेषं कृत्वा च पञ्चधा ।
रत्नलग्नधनप्रायं नागैराहत्य च क्रमात् ॥ ६४ ॥
व्यङ्गुलेन विभज्याप्तास्ततो होरादयः स्मृताः ।
एवं राशिश्च होराश्च द्रेष्काण्णाश्च नवांशकाः ॥
द्वादशत्रिंशभागाश्च षट्वर्गइति कीर्त्तिताः ॥ ६५ ॥
यथाषण्णां हि वर्गाणां विधिं लग्नस्फुटे कृतः ।
तथा शेषां ग्रहाणाञ्च स्फुटे षट्वर्ग इष्यते ॥ ६६ ॥

वेदार्क बिम्बा दिवसे नियोज्य
व्यतीतखण्डा हतधावकाञ्च ।
विभज्य निम्नेन फलं द्विधातः
प्रियाहृतञ्चोपरि संस्थितञ्च ॥ ६७ ॥

---

१ भुक्त्या ज्ञाणोन्नतां । २ मांगुल्येन । ३ पञ्चथा । ४ व्यंगुलेन । ५ द्रेकां नश्च । ६ मिच्छा ।

Aho ! Shrutgyanam

क्षेमेन रत्नेन च संगुणय्य
सैनाद्राशिष्टैरुभयत्र विद्यात् ।
बुधादिकं शीतकरादिकञ्च
वर्षेश्वरं मासयुगं क्रमेण ॥ ६८ ॥

स्रवन्ति सरितः स्वल्पजीमूतानातिवारिदाः ।
पृथवी सस्याविरला व्यालदंष्ट्रिसमाकुला ॥ ६९ ॥
पित्तं कुप्यति सीदन्ति तापसाः सहगोकुलैः ।
नभोमलिनवद् दृश्यं तीव्रं तपति भास्करः ॥ ७० ॥
नृपाः युधिबलैराढ्याः देशान् घ्नन्ति परस्परम् ।
संवत्सरे च मासे च वारे च द्वादशात्मनः ॥ ७१ ॥

इति संवत्सरफलम् ॥

---o---

दक्षिणायनमुशन्ति भास्वतः कर्कटादिमकरादि वा परम् ।
उक्तकालसममेव वा परं तन्निवृत्तिरणघान्यथा यथा॥१॥
कलहाय भवेद् भानू रजतादर्शवन्मधौ ।
भयाय घर्मे रक्ताभः श्वेतो वर्षस्य वृष्टिकृत् ॥ २ ॥
धूसरः शरदि क्रूरो हेमन्ते कर्णिणकारवत् ।
रोगकृच्छिशिरे पिङ्गश्चौरशत्रुभयावहः ॥ ३ ॥
शिरीषपुष्पवर्णः सद्यो वृष्टिकाले सुवृष्टिकृत् ।
धत्ते चन्द्रकपिच्छाभो द्वादशाब्दमवग्रहम् ॥ ४ ॥
श्यामः कीटभयं भष्मसादृक् परबलागमम् ।
शशिवत् सकलक्षोभं विदधाति दिवाकरः ॥ ५ ॥
उल्कया यदि च विद्युदादिना तिग्मरश्मिरुदयाचलस्थितः॥

---

१ शेना । २ वासविभुम । ३ वृष्टिकालेषु च ।

हन्यते यदि तदा महीभुजो मृत्युरन्यनृपतेरिहोदयः ॥ ६ ॥
परिधिमान् प्रतिवासरमुष्णगुर्यदि चिरादतिराजति सन्ध्ययोः ।
प्रहरणाकृतिकीलकमूर्त्तिमानपि करोति रविर्नृपतिं नवम् ॥ ७ ॥
उदग्गतः[1] प्रतिरविरुष्णरोचिषो जलाय वाताय च दक्षिणोदितः ।
द्विपार्श्वगः सलिलभयाय भूभुजां वधाय तस्योर्ध्वमधोऽपि वा स्थितः ८

उल्काऽतिवृष्टिपरिवेषणतामसा द्रीं
दर्शे[2] रवौ हिमकरेऽपि च पौर्णमास्याम् ।
पापेक्षितानिकृशताञ्चतयोर्विघाता
यार्घस्य[3] सस्य विपरीतमतः समृद्ध्यै ॥ ९ ॥
अर्केन्दुमण्डलोत्भूतो दोषो देशस्य यस्य हि ।
प्राग्गोचरमुपायाति[4] स तत्रापि विपच्यते ॥ १० ॥
ब्राह्मीका मगधाः शकाश्च शबराः काम्बोजवङ्गाङ्गजाः ।
पम्पोदुम्बरयाम्ययामुनभुवः प्राङ्नर्मदातीरजाः ।
विन्ध्यश्रीगिरिवर्धमानगिरयः पूर्व्वो महेन्द्राचलः ।
शुक्राः[5] पित्तशरीरिणश्च कटुकाद्रव्याणि वर्गे रवौ ॥११॥
भास्वतश्चरितं तस्य वर्गे तत्तारकाश्रिते ।
विसंयोज्य च पक्षेण शरदावा विपच्यते ॥ १२ ॥
विमलवपुरवक्रमन्डलः स्फुटविपुलामलदीर्घदीधितिः ।
अविकृततनुवर्णचिह्नभृज्जगति करोति शिवं दिवाकरः १३

इत्यादित्यचरितं नाम द्वितीयोध्यायः ।

तृतीयोध्यायः ।

अथेन्दोश्चरितं साधु विवृणोमि[6] समासतः ।

---

१ उदग्गतः २ दर्शे । ३ माध्यस्य । ४ दृग्गोचार । ५ शुक्ताम्पित्त-शरीरिणश्च । ६ श्रीयो ।

Aho ! Shrutgyanam

ज्ञानदीपपलं तस्य सिंहहोरांशकप्रमा ॥ १ ॥
लब्धमृक्षादिकं तादृग् दिनतः शोधयेच्च तम् ।
धनाय लिप्तिकादीनां नन्दशाखीविभाजकः ॥ २ ॥
तदंशः फलमिन्दुश्चेत् प्रमाणं कालमौलिनाम् ।
वत्सरे धनलिप्तानां वर्गधर्मो विभाजकः ॥ ३ ॥
चन्द्रमध्यमतो हित्वा चन्द्रोच्चं गोलपादवित् ।
विदध्याद्रविवच्छेपं चन्द्रज्याभिर्भुजाफलम् ॥ ४ ॥
कमलावरगाविदुरश्चिकुरो मलया शिवनुत् शशिनः स्वगुणाः
जिनगो विदुरो धिवरो नलिकाधिपतुर्नवकश्चपलानिनतः॥५
इन्दोर्भुक्तिदशाशालि स्फुटं कृत्वार्कभोगवत् ।
गत्यन्तरं स्याद्विवरं चन्द्रार्कस्फुटभोगयोः ॥ ६ ॥
चन्द्रार्कदृष्टिनक्षत्रे विलिप्तीकृत्य लिप्तिकाम् ।
पुनर्नीचेन चोभ्यस्य शुद्धभुक्त्या विभाजयेत् ॥ ७ ॥
लब्धं नीति विशुद्धं तत् दृष्टनक्षत्र नाडिका ।
दस्रौ यमोऽनलो धाता शशिरुद्रौ दितिर्गुरुः ॥ ८ ॥
सर्प्पश्च पितरश्चाथ भगश्चैवार्य्यमारविः ।
त्वष्टमारुत इन्द्राग्निमित्रेन्द्राः निर्ऋतिर्जलम् ॥ ९ ॥
विश्वदेवः हृषीकेशो वसवः सलिलाधिपः ।
अजैकपादहिर्बुध्नः पूषा च दिनदेवता ॥ १० ॥
शिखिगुणरसेन्द्रियानलशिखिविषयगुणर्तुपञ्चे वसुपक्षाः ।
विषयैकचन्द्रभूतार्णवाग्निरुद्राश्विवसुदहनाः ॥ ११ ॥
भूतशतपक्षवसवो द्वात्रिंशश्चेति तारका मानम् ।
क्रमशोऽश्विन्यादीनां वराहमिहिरेण निर्दिष्टम् ॥ १२ ॥

---

१ ज्ञाण । २ माह्यस्य । ३ इन्द्राग्निमित्रेन्द्रा निरतिज्वलम् ।
४ वसु: । ५ विशयैक ।

Aho ! Shrutgyanam

मासादिवासरान्तः कालस्ताराप्रमाणेन ।
सत्तन्नक्षत्रसंज्ञाः ज्वरादिपीडासु विज्ञेयाः ॥ १३ ॥
इन्द्रानिलादिसब्रह्मसौम्ये शाकी हि वारुणः ।
चित्राश्वयाम्यगोलाः स्युः शेषाश्चोत्तरगोलकाः ॥ १४ ॥

वर्गोश्विनोविषतरुर्भिषजस्तुरङ्गाः
तत्पोषकास्तदधिरोहजनाश्चमूपाः ।
युक्ताः जनाश्च तुरगक्रयविक्रयेषु
सैन्यानि मालवकिरात पुलिन्द[2]चीनाः ॥ १५ ॥

वर्गो यमस्य कनकक्षितिमुञ्जवैरी
गान्धर्ववारिवसनास्त्रिदशस्वदेशाः ।
क्रव्यादनाश्च तरुरामलकश्च फल्गु
वस्तूनिबन्धवधताडणलालसाश्च ॥ १६ ॥

वर्गोग्निभस्य तु मरुद्भवसालगोषा
कर्णाटयामुनभुवश्च सरस्वतीजाः ।
अब्दज्ञमन्त्रिजननापितकुम्भकाराः
विप्राश्व वह्निशरणास्तरु[3]रुप्रपूणाः ॥ १७ ॥

[4]वर्गः प्रजेशनियतः खलु शूरसेनाः ।
पञ्चालमाथुरकनिर्व्वसनाश्च गौडाः ।
गोजातवारिचरकर्षकरै[5]न्यवस्तु
जम्बुद्रमाश्च धनिनः शकटाधिकाराः ॥ १८ ॥

वर्गो भवेन्मृगशिरोनियतो गजाश्व
साङ्केतकापिलकुरुक्षितिपारियात्रा ।
शानोद्यताः सुरभिपुष्पफलांशुकानि
रत्नानि व्रीश्चकहराः खदिर[6]माश्च ॥ १९ ॥

---

१ घ । २ कुलिन्द । ३ तरुरुहसुनः । ४ वर्ग ।
५ रण्यवस्तु । ६ पञ्चक=पावक ।

वर्गस्तु रौद्रनियतो वृषभध्वजाब्ज-
श्रीमाल्यवद्गिरिजसुम्भकशूर्पकर्णः ।
मन्त्राभिचारनिपुणः परदारसक्ताः
पैशून्यशाठ्यनिरतः विटपीचकृष्णाः ॥ २० ॥
वर्गोदितेश्च[1] पुरुषादपयः पयोधि
प्राग्ज्योतिषाश्चमगधाः मिथिलाभुवश्च ।
सत्यादिभद्रगुणरूपयशः[2] कुलाढ्याः
सेवारताश्च वणिजोजटिनश्च वंशा ॥ २१ ॥
पुष्यस्य वर्गउदयाचलकाशिचोला
श्रीताम्रलिप्तपुरकोशलवर्धमानाः ।
गोधूमशालियवधान्यरसेक्षुचाटी-
नीरोपजीविसचिवाश्च गजाशनाश्च ॥ २२ ॥
वर्गो भवेत् भुजगशस्य कलिङ्गवङ्ग
वैदर्भवत्सविषया प्रवरोर्ध्वकर्णाः ।
कीटाः विषाः[3] विषधराः परवस्तुकामाः
नन्दाश्च नाग विटपी तृणधान्यकश्च ॥ २३ ॥
वर्गो मसासुनियतो वृषनारिकेल-
विन्ध्याः सचर्म्मवसनास्त्रिपुराश्चपाण्ड्वः ।
कोष्टालयः सवणिजः पितृभक्तशूराः
स्त्रीवेषिणो वटतरुर्गिरिनिश्रयाश्च[4] ॥ २४ ॥
वर्गो भगस्य शबराश्रय राजधानी
ये वालिराज्यसहनार्हदशार्णदेशाः ।
कार्प्पासयाज्ञिकतिलालवनम्पलास[5]—

१ वर्गोदितेस्व । २ भुद्र । ३ विशः । ४ गिरिनिश्रियश्च ।
५ पलासो ।

रूपोन्नताः युवतयश्च कुशीलवाश्च ॥ २५ ॥
वर्गस्तूत्तरफाल्गुणो नियमितो लङ्कापुरी कोङ्कणः
स्वर्णानाम नदी महेन्द्रमलयः शैलोच्चयो दर्दुरः ।
ग्रामादासपुराश्च केरलभुवो ये कर्णतालाकटाः
प्राक्षादुर्ध्वनिनश्च सौम्य नियमाः पाषाण्डशास्त्राश्रया ॥२६
हस्तर्क्षस्य हि चित्रकूटशिखरी कर्णाटराष्ट्रम्महा-
राष्ट्रं कोलगिरिश्च चोलविषया नेल्लूरसूर्य्यादयः ।
क्रौञ्चद्वीपमधेस्य शृङ्गशिखरी वैदूर्य्यमुक्ताकरा
स्वाम्बष्ठो गजवाहनाश्च रजकाः फल्गूनि धान्यानि च २७
चित्रायाम्बलदेव पत्तनभुवः कच्चोलकाः सिंहलाः
वेदण्डाटविचीयपत्तनजनाः येताम्रवर्णाश्रयाः ।
भद्राख्याश्च किलासनागजदरी ग्रामाश्चबिल्वद्रुमाः
रत्नालङ्कृतिरागलेख्यगणितंख्याताश्च सौगन्धिकाः २८

स्वातेस्तु वर्गः खलु पल्लवाख्याः
काम्बोजसौवीरवधूमुखाश्च ।
तुरङ्गसारङ्गविहङ्गमाश्च
निःसत्वसत्वास्तरुरर्ज्जुनश्च ॥ २९ ॥

वर्गो विशाखासु किरातशूद्र
पाषाण्डदेशायवनाश्च मेनाः ।
वैकङ्कतद्रुश्चनमाष मुद्गा
भक्तो महेन्द्रो नलदैवयोश्च ॥ ३० ॥

वर्गोनुराधानियतः सुराष्ट्र
हेमाद्रिकालामलरैवताश्च ।
सन्तः शरत्सस्य सुदारशूर-

Aho ! Shrutgyanam

भावा गणे शावकुलन्माश्च ॥ ३१ ॥
शक्रस्य[1] वर्गो मघवान् पराद्री
पुराणभूमिर्भयराजिदेशः ।
कीर्सिर्थवंशभकटापरश्च
सक्तावलेशा अपि वृष्टिवृक्षः ॥ ३२ ॥
मूलस्य वर्गस्तापी च शैवालापवनाश्रयाः ।
सद्योमूलफलपत्रबीजान्नैरुपजीविनः[2] ॥ ३३ ॥
आपस्य वर्गो म्लेच्छाश्च वैश्याश्च कनकाकराः ।
वञ्जुलो जलजानाश्च जलयात्रोपजीविनः ॥ ३४ ॥
उत्तराषाढवर्गस्तु मद्रतालहलाश्मकाः ।
महामात्राश्च मल्लाश्च धनिनः पनसद्रुमाः ॥ ३५ ॥
वर्गे श्रवणनक्षत्रे कूटतालहठास्तथा[3] ।
मायाविनोऽर्कवृक्षाश्च ये च भाववतात्मनाः ॥ ३६ ॥
वर्गे धनिष्ठानक्षत्रे स्त्रीराजा वैकलोचनः ।
दीर्घग्रीवास्य केशाश्च शमीबन्धुधनात्मनाः ॥ ३७ ॥
वर्गो भवेद्वारुणभे हिमाद्रि-
कैलाशकैकेयनृपाश्रयाश्च ।
तोयोद्भवाः शौण्डिकनेजकाश्च
कैवर्त्तकाः पाशभृताः कदम्बाः ॥ ३८ ॥
वर्गोऽजपादे तुरगाननाश्च
दासेरकास्तक्षशिलाभुवश्च ।
गोपालचोरव्रतधर्म्महीनाः
शुद्धोर्द्ध ताश्चूततरुश्च हिंसाः ॥ ३९ ।
उपान्त्यभे वर्गमुदाहरन्ति

---

१ शक्रश्च । २ सज्यो मूलम्फलम्पत्र । ३ कुलुतालहडास्तथा ।

Aho ! Shrutgyanam

गन्धारिकान् पिङ्गलसिन्धुदेशान् ।
विप्रांस्तपोदान युतान् धनाढ्यान्
निम्बद्रुमान् धूर्त्तजनान् नृपांश्च ॥ ४० ॥
पौष्णस्य वर्गः पशुपालकीर
काश्मीरनागा वटकङ्कताश्च ।
वस्तूनि तोयाशयसम्भवानि
फलानि बीजानि मधूकवृक्षाः ॥ ४१ ॥
पूर्व्वत्रयं सानलमग्रजानां
राज्ञञ्च पुष्येण सहोत्तराणि ।
सपौष्णमित्रं पितृ दैवतञ्च
प्रजापतेर्भञ्च कृषी वलानाम् ॥ ४२ ॥
आदित्य हस्ताभिजिदश्विभानि
वाणिज्यकानां प्रवदन्ति तज्ज्ञाः ।
मूलत्रिनेत्रानिलवारुणानि
भान्युग्रजातेः प्रभविष्णुवृत्तेः ॥ ४३ ॥
सोमेन्दुचित्रावसुदेवतानि
सेवाजनाः साम्यमुपागतानाम् ।
सार्पाविशाखाश्रवणम्भरण्या-
श्चण्डालजातेरपि निर्दिशन्ति ॥ ४४ ॥
यद्भिन्नक्षितिजेन वक्रगतिना तेनैव यद्दूषितं
यन्मन्दास्पदमुल्कया च निहतं यत् स्योपरागश्च यत् ।
यप्रोतकृष्टसुधाकरेण मलिनं यत् स्या कृती व्यक्तया
तत्तत्पीडति यत्स्ववर्गमितरं नक्षत्र मारक्षति ॥ ४५ ॥
वर्षस्यात्मा नलादिद्वितयमिह तथा ऽऽषाढयुग्मञ्च नाभिः
सर्पाञ्चेत्तत्प्रसूणं पितृभमविहतैरेभिरिष्टं विशुद्धैः ।

१ वणिग्जनानाम् । २ सर्पाश्चैतप्रसूनम् ।

क्रूराक्रान्ते शरीरे मरुदनलभयक्षुद्द्रवञ्चाथ नाभौ
सस्यध्वंसश्चवित्ते फलदलसुमनोमूलहानिश्च पुष्पे ॥४६॥

इति नक्षत्रवर्गनिर्णयः ।

---o---

भानुनेन्दुं कलीकृत्य प्रतिलब्धा तिथिर्भवेत् ।
शेषन्तु विकलीकृत्य पुनर्नीचेन ताडयेत् ॥ १ ॥
विवरेण विभज्याप्तमदृष्टतिथिनाडिका ।
अग्निर्दस्रावमावश्यो नागस्कन्दो दिवाकरः ॥ २ ॥
मातृदुर्गादिशोर्थेशः[१] कृष्णो वैवस्वतः शिवः ।
पञ्चदश्यो शशाङ्कश्च पितरस्तिथिदेवताः ॥ ३ ॥
नन्दा भद्रा जया रिक्तापूर्णा चेति क्रमादिमाः ।
पक्षयोरुभयोरेव तिथयः स्युः पुनःपुनः ॥ ४ ॥

इति तिथिनिर्णयः ।

---ooo---

चन्द्रमर्केन संस्कृत्य दृष्टो योग उदाहृतः ।
विधाय पूर्ववच्छेषं योगे भोगहृताः कलाः ॥ १ ॥
विष्कुम्भः प्रीतिरायुष्मान् सौभाग्यं शोभनस्तथा ।
अतिगण्डः सुकर्म्मा च धृतिशूलं तथैवच ॥ २ ॥
गण्डो वृद्धिध्रुवश्चैव व्याघातो हर्षणं तथा ।
वज्रं सिद्धिर्व्यतिपातो वरीयान् परिघः शिवः ॥ ३ ॥
सिद्धः साध्यः शुभः शुभ्रो ब्राह्मो माहेन्द्रवैधृती ।
स्वनामतुल्याः देवाख्याः योगाः स्युः सप्तविंशतिः ॥ ४ ॥

इति योगनिर्णयः ।

---o---

१ दिशोस्थेशः ।

Aho ! Shrutgyanam

तिथेः खेनासजेदेकं शुक्ले कृष्णे तु योजयेत् ।
विभज्य सूनुना शेषं जानीयात् करणं चरम् ॥ १ ॥
बवञ्च बालवञ्चैव कौलवन्तैतिलं तथा ।
गरजो वणिजो विष्टिश्चरतः करणसप्तकम् ॥ २ ॥
कृष्णपक्षे चतुर्दश्यामारभ्याचरमं दलम् ।
शुक्ले प्रतिपदः पूर्व्वदलो यावद्यथाक्रमम् ॥ ३ ॥
शकुनिश्च चतुष्पादो नागः किंस्तुघ्न इत्यपि ।
एवमर्द्धानि चत्वारि ध्रुवाणि करणानि च ॥ ४ ॥

इति करणनिर्णयः ।

भानुः कलिदिने क्षिप्ता खेनाहत्य लुनाहृतम् ।
अभीष्टतिथिसङ्ख्याः स्युः दत्वा तानवशेषितैः ॥ १ ॥
लक्ष्मी कलिश्च नन्दा च कालकर्णिजयाविधिः ।
धनुर्नमितिविज्ञेयं वाराणामिह सप्तकम् ॥ २ ॥
हरो दुर्गा गुहो विष्णु ब्रह्मा लक्ष्मीर्धनेश्वरः ।
एते सूर्य्यादिवारेनाः सर्व्वे स्वाख्याः क्रियाशुभाः ॥३॥

इति वारदेवताः ।

एवमृक्षं तिथिर्य्योगः करणञ्च चराचरम् ।
वारश्चेति विजानीयात् पञ्चाङ्गं दैवचिन्तकः ॥ १ ॥

इति पञ्चाङ्गनिर्णयः ।

---

१ खना । २ चरम् । ३ प्रतिपदः । ४ खेनाहत्य ।

Aho ! Shrutgyanam

इन्दुरस्तमितः प्राच्याम्प्रतीच्यामुदयं व्रजेत् ।
विशोध्य चन्द्रतः सूर्य्यं शेषं कुर्य्याद्विलिप्तिकाम् ॥ १ ॥
नीवाराम्बुनि वाक्यस्य सा चेदूना भविष्यति ।
शशाङ्कं नोदितं विद्यात् तनुनायदि सा भवेत् ॥ २ ॥
तामर्कोदयराशेस्तु यो राशिः सप्तमो भवेत् ।
तस्य संस्कृतवाक्येन ताडयित्वा तथा पुनः ॥ ३ ॥
अनूनपादैर्विभजेत् ततो लब्धविनाडिकाः ।
समाश्वेत् पूर्व्ववाक्येन तदा दृग्गोचरः शशी ॥ ४ ॥

इत्यस्तोदयनिर्णयः ।

अस्तार्को नेन्दुतः पूर्व्वमस्ति चेत् तत्परित्यजेत् ।
शेषन्तु विकलीकृत्य सूत्रलब्धा विनाडिका ॥ १ ॥
अन्तरख्यारपेरस्तादाचन्द्रास्तं सिते स्थिताः ।
कृष्णे दिनकरस्यास्तादाचन्द्रोदयमन्तराः ॥ २ ॥
निशार्धचन्द्रगोलघ्नो विषमाङ्घ्री विलिप्तिकाः ।
भाजयित्वा निशार्धेन कलां च विकलां ततः ॥ ३ ॥
नवभिः सर्व्वमाहृत्य नीचाप्तमुपरि क्षिपेत् ।
लीनेनोर्ध्वस्थमाहृत्य लब्धं व्यङ्गुलमिष्यते ॥ ४ ॥
विषुवद् व्यङ्गुलेनैव दक्षिणोत्तरगोलयोः ।
योज्यं शोध्यान्न चेच्छोध्यं व्यक्तये न विशोधयेत् ॥ ५ ॥
यावच्छाया भवेत्तश्च शोधयेद्द्विगुणात् पदात् ।
न तैश्चाहृत्य नीरार्थयुक्तो सौ भाजको भवेत् ॥ ६ ॥
निशार्द्धविकलाक्षुणसन्नीराः तेन भाजयेत् ।
प्राप्तास्तु विकलाः ज्ञेयाश्शुक्ले पक्षे पराम्बरे ॥ ७ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शोध्यात्तेऽन्तरकालार्त्ताः शेषा यात्रा निशि स्मृताः ।
सान्तराद् विकलाः पिण्डान्निशामानाद्विशोधयेत् ॥८॥
शेषं पूर्व्वाम्बरे शुक्ले व्यतीताः स्यु र्विनाडिकाः ।
स एव विकलापिण्डः संयुक्तोत्तरसंज्ञितैः ॥ ९ ॥
पूर्व्वाम्बरस्थे शशिनि कृष्णे याता विनाडिकाः ।
निशामानविलिप्तीषु सान्तरो विकलागणः ॥ १० ॥
शोध्यशेषांगणाः ज्ञेयाः बहुले पश्चिमाम्बरे ।
घटिकाः साधयेदेवं चन्द्रच्छायापदैर्बुधः ॥ ११ ॥
इदानीं लिप्तिकाभिस्तु पदमुत्पादयेद्यथा ।
अन्तरञ्च निशानाथप्रमाणञ्च परस्परम् ॥ १२ ॥
शोधयेद् भागहारः स्याच्छेषः शुक्ले पराम्बरे ।
अन्तरञ्च निशानाथयुक्तरात्रिप्रमाणकम् ॥ १३ ॥
जह्यात् परस्परं शुक्ले भाजकः प्राग्विहायसि ।
निशि व्यतीतकालस्य चान्तरस्य यदन्तरम् ॥ १४ ॥
तदिदम्भागहारः स्यात् प्राच्यां कृष्णे निशाकरे ।
सान्तरस्तु निशा याता निशामानविशोधिताः ॥१५॥
कृष्णे तु पश्चिमाकाशे भागहार इति स्मृतः ।
नरसेना निशार्धेन ताडयित्वा तथा पुनः ॥ १६ ॥
इष्टेन भाजकेनाप्तं फलं तीरे समुत्त्यजेत् ।
नताप्तमङ्गुलं शेषं व्यङ्गुलं परिदीपयेत् ॥ १७ ॥
अवच्छायामिह क्षिप्ता दलयेत् पुनरेव तत् ।
चन्द्रच्छायापदं नाम शेषमत्र स्थितम्भवेत् ॥ १८ ॥

इति च्छायानिर्णयः ।

——000——

१ यात्रा । २ निशामान । ३ गता । ४ मन्द्रस्काया ।

दिवाकरे तत्स्पृशि मीनमेषयोः
शशीशिशुर्दक्षिणतुङ्गशृङ्गवान् ।
घटोक्षयोस्तुल्यवृषाणवानतोऽ
वशेषराशिश्च यमुत्तरोन्नतः ॥ १ ॥
प्रतिपच्छशिनः शृङ्गं तुङ्गमुत्तरतो मनाक्
नौका चेन्नाविकापत्सः शेषाणां शोभना वचः ॥ २ ॥
अर्द्धोन्नतौ लाङ्गुलवत् पीडातदुपजीविनाम् ।
सुभिक्षञ्च महीपानां शश्वत् प्रीतिरनुत्तरा ॥ ३ ॥
अर्द्धोन्नतं यदा याम्यं शृङ्गं दृष्टहलाह्वयम् ।
बलमुद्योजयेदाशु पाण्ड्यराज्यं निहन्ति च ॥ ४ ॥
उदिते दण्डवच्चन्द्रे गवां पीडा नृपोग्रता ।
समयोः शृङ्गयोः क्षेमसुभिक्षवृष्टयः शुभाः ॥ ५ ॥
मही यस्य शशाङ्कस्य रेखा दुर्भिक्षहारिणी ।
अल्पीयसी तु दुर्भिक्षभयं वितनुते नृणाम् ॥ ६ ॥
उक्तसंस्थानविरहादुत्तरोन्नतशृङ्गवान् ।
शस्यवृष्टिकरो याम्यतुङ्गो दुर्भिक्षकृच्छशी ॥ ७ ॥

इति बिम्बनिर्णयः ।

———ooo———

प्रथमादिषु सन्दृष्टा रेखा चान्द्रमसो नृणाम् !
आयुष्यमर्थमारोग्यं दुर्यशश्च प्रयच्छति ॥ १ ॥
सौभाग्यमर्थलोपञ्च भयं शोकं शिवं शुभम् ।
व्याधिञ्च धत्ते सूर्यादि वारदृष्टः शशीशिशुः ॥ २ ॥
तृतीयाञ्चानुकूलोक्तादिने भार्गववासरे ।
दृष्टो नवशशी कुर्याद्वस्त्राप्तिर्मासिकस्त्रिभिः ॥ ३ ॥

१ यमुत्तरोन्नतः ।

Aho ! Shrutgyanam

नवेन्दुर्याम्यतिक्रान्तः षड्पौर्णाद्यान्यनागतः ।
मेषादिद्वादशर्क्षाणि समोवसतिचन्द्रमाः ॥ ४ ॥
याम्येन शुक्रादिचतुष्टयस्य
यदा शशीचारवशेन याति ।
बीजान्यरण्यम्बुचराश्चहन्या-
द्विशेषतः पावकभीतिकृच्च ॥ ५ ॥
पापो दक्षिणभागिन्दुरनुराधाविशाखयोः ।
प्रशस्तो मध्यनिर्यातः पितृदेवविशाखयोः ॥ ६ ॥
भूयोभानां ग्रहाणाञ्च पापो याम्यगतः शशी ।
प्रादक्षिण्योत्तरगतो राजानाञ्च प्रियङ्करः ॥ ७ ॥
भौमस्योत्तरगे चन्द्रे [2]क्षत्रियाञ्च यायिनाम् ।
पार्व्वती बलशालिनां जयो धान्यञ्च वर्द्धते ॥ ८ ॥
सौम्यस्योदग्गतः सोमः कुरुते कोशवर्द्धनम् ।
पूर्णानि सस्यवृन्दानि पौरप्रीतिसुभिक्षकृत् ॥ ९ ॥
गुरोरुत्तरगश्चन्द्रो ब्रह्मक्षत्रियधीधनम् ।
पुष्णाति मध्यदेशस्य सुभिक्षां कुरुतेतराम् ॥ १० ॥
भृगोरिन्दुरुदग्यायी गजवाजी धनुष्मताम् ।
जयकृत्सस्यवृन्दानि पुष्णाति निरुपद्रवम् ॥ ११ ॥
चरन् प्रदक्षिणीकृत्य प्रभाकरसुतं शशी ।
पौराणां बुधमाधत्ते क्षत्रियाणां जयश्रियम् ॥ १२ ॥
यदिदंफलमादिष्टमुत्तरस्थे निशाकरे ।
ग्रहाणामपसव्यस्थे सर्व्वमेतद्विपर्य्ययम् ॥ १३ ॥
प्रसन्तांस्तु नृपांश्च हन्त्युडुपतिः शृङ्गे कुजेनाहते
शत्रुक्षुद्भयकृद्यमेन शशिजेनावृष्टिदुर्भिक्षकृत् ।

---

१ देसा । २ क्षत्रियानावयायिनाम् ।

Aho ! Shrutgyanam

श्रेष्ठान् हन्ति नृपान् महेन्द्रगुरुणा शुक्रेण चाल्पान् नृपान्
शुक्रे याप्यमिदं फलं ग्रहकृतं कृष्णे यथोक्तागमः ॥१४॥

इति समागमनिर्णयः ।

आषाढमासे शशिनि स्वात्साषाढप्रजापतीम् ।
प्राप्ते परीक्ष्य प्रत्यब्दम्ब्रूयाल्लोकेशुभाशुभम् ॥ १ ॥
स्वस्रातषाढा भेवत्तत्र प्रथमांशैः प्रवर्षणम् ।
सुवृष्टिकारणंतद्वद्द्वितीये सस्यकीटकृत् ॥ २ ॥
तृतीये वृष्टिमा द्याय चतुर्थे सर्व्वसस्यकृत् ।
पञ्चमे तिलमुद्गानांश्लेष्मिकानाञ्च वृद्धिदम् ॥ ३ ॥
षष्ठे शारदसस्यानामभिवृद्धिकरम्भवेत् ।
भर्क्कं दिनं प्रविष्टे तु वृष्टिरस्ति निरन्तरम् ॥ ४ ॥
स्वातियोगशिवायेन्दुरपां वत्ससमीपगः ।
अपां वत्सस्तु चित्रायां समसूत्रमुदस्थितः ॥ ५ ॥

इति स्वातियोगः ।

आषाढयोगे शशिनः सर्व्वबीजानि दैववित् ।
पृथक् पृथक् समान्येव तुलितान्यधिवासयेत् ॥ १ ॥
अधिकं यद्यदन्यत्तु तत्तदब्देभिवृद्धिभाक् ।
यद्बीजमल्पतां यान्ति तस्य हानिं विनिर्द्दिशेत् ॥ २ ॥

इत्याषाढयोगः ।

प्राजापत्येन संयोगे तस्येन्दुर्दक्षिणस्थितः ।
नेदीयान् वा दवीयान् वा जगतामशुभावहम् ॥१॥

४

Aho ! Shrutgyanam

रोहिणीमुत्तरेणेन्दुः स्पृशन् याति यदा तदा ।
वृष्टयः शोभनाः किन्तु सोपसर्गा प्रजा भवेत् ॥ २ ॥
रोहिणीमस्पृशन्निन्दुरुत्तरेण व्रजेद् यदा ।
तदा च वृष्टिर्जगतश्शिवञ्च बहु निर्दिशेत् ॥ ३ ॥
रोहिणीशकटारूढे चन्द्रे निःशरणो जनः ।
पीड्यमानोन्नपानार्थं शिशुभिः क्वापि गच्छति ॥४ ॥
पूर्व्वोदितस्य शशिनो रोहिणी यदि पृष्ठतः ।
चरेच्छुभं तदालोके स्त्रियस्तु पुरुषानुगाः ॥ ५ ॥
पूर्व्वोदितायाः रोहिण्याः पृष्ठतो विचरन् शशी ।
कुरुते कामिनं लोकं प्रमदानां वशे स्थितम् ॥ ६ ॥
रोहिण्यां यदि शीतांशुराग्नेयीं दिशमाश्रयेत् ।
तत्रोपसर्गः सुलभो भस्मपावकसम्भवः ॥ ७ ॥
नैर्ऋत्यामाश्रिते सोमे शस्यानि निहतानि च ।
निचयं यन्ति वायव्यां मध्यमानि भवन्ति हि ॥ ८ ॥
यथेष्टानुदिशां चन्द्रे शोभना वृष्टिसम्पदः ।
अभिवृद्धिःतदार्घस्य शिवञ्च जगतो भवेत् ॥ ९ ॥
छादयेद्यदि बिम्बेन रोहिणी शकटं शशी ।
तदानराधिराजस्य विदधावि वधं वधूः ॥ १० ॥
रोहिणीसहितश्चन्द्रो घनच्छन्नाम्बरेयदि ।
न लक्ष्यते महाव्याधिर्जलं स्यञ्च शोभनम् ॥ ११ ॥
उदकस्थो यदि पौरस्त्येमेघः स्यं शुभं तथा ।
आग्नेय्यामग्निकोपश्च याम्ये शस्यक्षयो भवेत् ॥ १२ ॥
नैर्ऋत्यां मध्यमं शस्यं वारुण्यां वृष्टिकारणम् ।
वायव्यामधिका वृष्टिः सौम्यायां वृष्टिरुत्तमा ॥ १३ ॥

---

१ संस्वायाति यदा तदा ।

Aho ! Shrutgyanam

घनोदयो यदीशानकोणे स्याद्वृष्टिरुत्तमा ।
तत्तद्दिशि समुद्भूतो वायुश्चेत्तत्फलोदयः ॥ १४ ॥
मासानां श्रावणादीनामीभव्यक्षरमण्डितान् ।
घटान् गन्धपयःपूर्णानुदगादिप्रदक्षिणान् ॥ १५ ॥
महावृत्तेन मन्त्रेण परिजप्याधि वासयेत् ।
अन्येद्युर्घनवृष्टिघ्नः पूर्णश्शोभनवृष्टिदः ॥ १६ ॥
नृपाणाञ्चाथ देशानां नामान्यालिख्य पूर्ववत् ।
इममेव विधिं कुर्य्यात् तेषां भाग्यादिवीक्षणे ॥ १७ ॥
प्रविशत्सु व्रजङ्गोषु विशेद्यद्यग्रतो वृषः ।
पशुर्वा कृष्णवर्णात्मा विज्ञेया वृष्टिरुत्तमा ॥ १८ ॥
शबलो यदि मध्योसावधमो धवलो यदि ।
प्रविशेद्रक्तवर्णश्चेद् व्याधिभिः पीड्यते प्रजा ॥ १९ ॥

इति रोहिणीयोगः ।

यवगोधूमशाल्यादि शस्यनिष्पत्तिरुत्तमा ।
पाल्यते भूमिपालैश्च भूमिर्नातिकरक्षता ॥ १ ॥
गावो बहुपयस्विन्यो वारिदा भूरिवारिदाः ।
समृद्धिः कुसुमानाञ्च काले हारिणलक्षणे ॥ २ ॥

इति वर्षाधिपतिफलम् ।

पश्चार्द्धेन सरस्वती [1]मलयजश्रीचन्द्रभागानदी
स्वर्णाल्लूपपुलिन्दशैलविपिनं सिद्धाश्चविद्याधराः ।

---

१ मलयतः श्रीचन्द्रभागानदी ।

Aho ! Shrutgyanam

अम्भोजन्मसमस्तवस्तुवनिताः सेनाधिपाः वाजिनः
सर्व्वाः स्वौषधशालयश्चमधुरद्रव्याणितारापतेः ॥ १ ॥
चन्द्रस्य चारस्तद्वर्गे नक्षत्रविषयेषु च ।
षच्यतेमासमात्रेण षस्मासाभ्यन्तरे च वा ॥ २ ॥
यदि कुमुदमृणालहारगौर-
स्थितिनियमात् क्षयमेति वर्धते वा ।
अविकृतगतिमण्डलांशुयोगी
भवति नृणां विजयाय शीतरश्मिः ॥ ३ ॥

इति चन्द्रचरितं नाम तृतीयोध्यायः ।

चतुर्थोध्यायः ।

—०*०—

अथ भौमस्य चरितं समासेन विभाव्यते ।
फलराशिर्धनं तस्य धीररत्नप्रमा भवेत् ॥ १ ॥
युगाब्दे धनलिप्तानां चाटुकालोपि भाजकः ।
ध्रुवोंचं कुमुदं विद्याद् भौमस्य घटिकादिकम् ॥ २ ॥
तां हित्वा मध्यमांतस्य रविवच्छेषमाचरेत् ।
ध्रुवज्ञौ विकलाभिस्तु भुजाफलमुपानयेत् ॥ ३ ॥
तदिहार्धीकृतं गोलवशादेतस्य मध्यमे ।
योजयेच्छोधयेद्वासौ ध्रुवार्धं प्रथमस्फुटम् ॥ ४ ॥
तच्चलोच्चात् समुधृत्य विद्याद्गोलपदं तथा ।
विधाय पूर्व्ववच्छेषमोजपादफलम्पुनः ॥ ५ ॥
इहाद्यन्ते पदे निसमाद्यन्तज्याभिरानयेत् ।
मध्ययोः पादयोश्चाथ मध्यमज्याभिरानयेत् ॥ ६ ॥

तदध्यर्द्धीकृतं गोलविलोमात् प्रथमस्फुटे ।
योजयेच्छोधयेद्वासौ द्वितयोच्चदले स्फुटः ॥ ७ ॥
ततो ध्रुवोच्चमुद्धृत्य ध्रुवाज्ज्याफलमानयेत् ।
अनधीतं यथागोलं विदध्यात्तस्य मध्यमे ॥ ८ ॥
अयं तृतीयः सकलः ध्रुवस्फुट उदाहृतः ।
तच्चलोच्चात् समुद्धृत्य पादज्ज्याभिर्भुजाफलम् ॥ ९ ॥
आनीय सकलं तच्च गोलक्रमविलोमतः ।
योजयेच्छोधयेच्चाथ तृतीयस्फुटमध्यमे ॥ १० ॥
अयं चतुर्थः सकलस्तुङ्ग स्फुट उदाहृतः ।
अनेनैव यथाविद्यात्तदवशिष्टस्फुटक्रियाम् ॥ ११ ॥
ध्रुवार्द्धस्फुटशून्यत्वात् त्रिस्फुटौ बुधभार्गवौ ।
तयोर्हि मध्यमं विद्यात् प्रथमार्द्धध्रुवस्फुटम् ॥ १२ ॥
ध्रुवोच्चानि कलादीनि सर्व्वेषामेव शोधयेत् ।
सर्व्वत्र तुङ्गविश्लिष्टं मध्यमं केन्द्रमादिशेत् ॥ १३ ॥
रुधिर, ध्रुवका, किमसै, स्तुलसी ।
नतथा, नयता, गुरवो, जुवकाः ॥ १४ ॥
आद्यन्तपादयोर्भौमे रत्नचैत्येन साश्रयः ।
शखामध्येहिमे चायुस्सार्थलोको यशःप्रियः ॥ १५ ॥
कुजमध्यो गुरुस्सक्तो जातजालो धनी धनम् ।
दाधिकक्षम शेपीत नृपतेः शोधयेत्त्रयम् ॥ १६ ॥
तृतीयस्फुटसंसिद्धो वर्त्तमानगुणम्बुधः ।
मध्यभोगेन गुणयेद्दूर्णनाभेन भाजयेत् ॥ १७ ॥
लब्धमध्यमभोगस्य[1] शोध्यमाद्यन्तपादयोः ।
मध्ययोः पादयोरेवं ध्रुवभुक्तिरियं मता ॥ १८ ॥

---

१ भोगेस्थ ।

Aho ! Shrutgyanam

तामुच्चभोगतो हित्वा परिशेषेण ताडयेत् ।
तुरीयस्फुटसंसिद्धो वर्त्तमानगुणं पुनः ॥ १९ ॥
ऊर्णनाभेन तं हृत्वा फलन्तु ध्रुवभोगतः ।
आद्यन्तपादयोर्देयं शोध्यं मध्यमपादयोः ॥ २० ॥
वर्त्तमानगुणस्त्वत्र यदि शोध्यं भविष्यति ।
अनाहृत्य तदा पादौ व्यवस्थां योजयेत् सदा ॥ २१ ॥
अशोध्यध्रुवभोगश्चेत् विश्लेषस्साम्प्रतं तदा ।
स्फुटभुक्तिरियं यद्वा स्फुटयोरन्तरम्भवेत् ॥ २२ ॥
अतीतमनतीतञ्च संक्रान्तिञ्चार्कवद् वदेत् ।
हृतास्फुटविलिप्तासु ज्ञानपादेन राशयः ॥ २३ ॥
छेदतश्शोधितं शेषं भुक्तेरल्पतरं यदि ।
तदा वक्रस्य सङ्क्रान्तिनाडिः प्राग्वाद्विधीयते ॥ २४ ॥

इति सङ्क्रान्तिनिर्णयः ।

ग्रहाः कुजादयः सूर्य्यस्फुटादभ्यधिकस्फुटाः ।
प्रतीच्यां दिशि दृश्यन्ते प्राच्यामूनस्फुटाः पुनः ॥ १ ॥
कुजोस्तमेति वारुण्यां पूर्व्वस्यामुदयस्तथ ।
विद्यादन्तरवाक्यञ्च भौमस्य निधिशोभनम् ॥ २ ॥
उद्धृत्य भौमतः सूर्य्यं शेषंकुर्य्याद्विलिप्तिकाम् ।
सा चेन्महीयसी वाक्याद् ग्रहो नास्तमितो भवेत् ॥ ३ ॥
अल्पीयसी यदि भवेत् तदा यातोस्तमिष्यते ।
किञ्चिदना यदि भवेदस्तमायाति तद्दिने ॥ ४ ॥
हित्वा वाक्ये महीयसीस्य विवरेण विभाजयेत् ।
लब्धं दिवसनाड्यादि जानीयादस्तमेष्यति ॥ ५ ॥
वाक्यादल्पीयसीं हित्वा दिनादस्तस्य भाजितम् ।

Aho ! Shrutgyanam

किञ्चिदूनान्तु विश्लिष्य लब्धमस्तमये कलाः ॥ ६ ॥
ज्ञीप्सुरस्तोदयं व्यक्तं ग्रहाद् भास्करमुत्त्यजेत् ।
शेषे विलिप्तिकामूर्त्तौ नास्तो वाक्यं महीयसी ॥ ७ ॥
यदा तु वाक्यं देशीयस्तदार्कात् सप्तमस्य तु ।
राशेः संस्कृतवाक्येन ताडयित्वाथतम् पुनः ॥ ८ ॥
अनूनपादैर्विभजेत् ततो लब्धविनाडिकाः ।
समाश्चेत् पूर्व्ववाक्येन तदा यातोस्तमिष्यते ॥ ९ ॥
अर्कग्रहान्तरं कृत्वा विकलं वाक्यतस्त्यजेत् ।
शेषेगस्यन्तरेणाप्तं दिनादिकमुदेष्यतः ॥ १० ॥
उदयँद्रष्टुकामस्य स्फुटं भास्करतस्त्यजेत् ।
शेषे विलिप्तिकामूर्तौ वाक्यादूने तु नोदितः ॥ ११ ॥
देश्यश्चेदुदितस्तत्तु यो राशिर्भास्कराश्रितः ।
तस्य संस्कृतवाक्येन ताडयित्वाथ पूर्व्ववत् ॥ १२ ॥
लब्धाः विनाडिकाः पूर्व्ववाक्येन सदृशाः यदि ।
तदादिगोचरो भौमस्तादृशौ धिषणासितौ ॥ १३ ॥

इति उदयास्तमयनिर्णयः ।

———oco———

मध्यमस्य च शुद्धस्य स्फुटस्य च यदन्तरम् ।
तदर्द्धीकृत्य संशोध्यमुभयोरधिकान्तयोः ॥ १ ॥
शुद्धश्चलोश्चतस्त्यक्त्वा शेषं कुर्य्याद्विलिप्तिकाम् ।
ज्ञानप्रतापैराहृत्य लब्धा ग्रहगतिर्भवेत् ॥ २ ॥
आद्या शीघ्रा परा मन्दा वक्रा नाम ततः परम् ।
अतिवक्रा नु वक्रा च षष्ठी चारगतिः क्रमात् ॥३॥
तृतीयस्फुटसंसिद्धौ पादश्चेत् प्रथमो भवेत् ।
तदाचारगति विद्याच्चतुर्थं चेत् पदम्भवेत् ॥ ४ ॥
वक्रारम्भं द्वितीयश्चेदतिवक्रगतिं तथा ।

Aho ! Shrutgyanam

तृतीये क्रवनिर्य्याणमेवं विद्याद्विचक्षणः ॥ ५ ॥
स्फुटग्रहश्चे च्छीघ्रोच्च ग्रहतोनवमो यदा ।
वक्रारीम्भतदाप्रायः पञ्चमश्चेन्निवर्त्तते ॥ ६ ॥
अतिशीघ्रस्य भौमस्य स्फुटभोगविनाडिकाः ॥
समयान्तातिरिच्येत न्यूनता तु गतेर्व्वशात् ॥ ७ ॥
चलोच्चतस्समुद्धृत्य तृतीयस्फुटमध्यमम् ।
विलिप्तीकृत्य विभजेत् तद्ध्रुवस्फुटभोगयोः ॥ ८ ॥
विवरेण ततो लब्धं केन्द्रे गतिदिनम्भवेत् ।
विलिप्तीकृत्य वक्रार्द्धं विवरेण विभाजिते ॥ ९ ॥
लब्धं वक्रार्धदिवसं तादिदं भवति त्रिधा ।
मूर्ध्नि वक्रगुणश्शोध्यस्तृतीये योज्य इष्यते ॥ १० ॥
एतेषु त्रिषु यद्येको राशिः केन्द्रदिनैस्समम् ।
तेविद्यात्क्रमाद्वक्रस्यादिमध्यान्तगं ग्रहम् ॥११॥
भूमिपुत्रस्य वक्रजूज्या नाभिरित्यभिधीयते ।
अथ चैवं विजानीयाद्वक्रारम्भनिवर्त्तनम् ॥ १२ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेज्जीवशर्म्मप्रियो यदा ।
वत्सलः केन्द्रचारो वा वक्रारम्भी तदाकुजः ॥ १३ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेत् सामप्रभवयोगदः ।
चन्द्रामं केन्द्रचारो वा तदासौ विनिवर्त्तते ॥ १४ ॥
सवर्णमिष्टकेन्द्रस्य वक्राद्यन्तोक्तयोरपि ।
विश्लेषं विभजेद् भुक्तयोर्विवरेणोच्चमध्ययोः ॥ १५ ॥
दिनादिराप्यते काले वक्रारम्भावसानयोः ।
हीनैश्च केन्द्रे भावित्वं तयोर्भूतत्वमन्यथा ॥ १६ ॥
चारोदयास्तवक्रादौ सर्व्वेषां गणितक्रिया ।
इयमेव विशेषस्तु तत्र तत्रैव वक्ष्यते ॥ १७ ॥

इति गतिनिर्णयः ।

Aho ! Shrutgyanam

सप्ताष्टनवमर्क्षेषु वक्रमुष्णं महीभुवः ।
उदयाद् वह्निवृत्तीनां पीडाकरमिदं मतम् ॥ १ ॥
वक्रमश्रु मुखानां हि दशादर्क्षत्रयेऽपि च ।
उदयार्क्षाद्रसान् हन्ति कुर्याद्रोगान् नवग्रहम् ॥ २ ॥
वक्रंत्रयोदशर्क्षादि द्वितयोऽव्याल उच्यते ।
सूर्य्योदयर्क्षादृव्यालेभ्यो भयं धत्ते सुभिक्षताम् ॥ ३ ॥
वक्रं रक्तानन पञ्च दशर्क्षात् षोडशादपि ।
तदा सुभिक्षासमयो मुखरोगश्च जायते ॥ ४ ॥
तत्खड्गमुशलं सप्तदशादष्टादशादपि ।
अवृष्टिशस्त्रदस्युभ्यः पीडां धत्ते भयोत्तरम् ॥ ५ ॥
भाग्यादिद्वितये दृष्टो विश्वे यदि निवर्त्तते ।
अस्तमायाति रोहिण्यां भौमस्त्रैलोक्यघातकः ॥ ६ ॥
श्रवणाभ्युदितः पुष्ये वक्रकृद्राजपीडकः ।
यत्रर्क्षेऽभ्युदितस्तत्र जातान् हन्ति जनान् कुजः ॥ ७ ॥
श्रवणादित्यहस्तैकपादमूले मघासु च ।
रोहिण्याश्विविशाखासु भौमचारोदयाहितः ॥ ८ ॥
उत्तरत्रितये मूलप्रजापत्येन्द्रविष्णुषु ।
विचरन्क्षितिजो वारी वाहानामुपघातकृत् ॥ ९ ॥
मघानां यदि मध्येन निर्गच्छेल्लोहितस्तदा ।
विनश्येत् पाण्डुराज्यन्तु शस्त्रानावृष्टिभिर्भयम् ॥ १० ॥
भिन्दन् मघां विशाखां वा भौमो दुर्भिक्षकृन्मतः ।
भिनत्ति रोहिणीं यद्वा कुरुते मरकं नृणाम् ॥ ११ ॥
रोहिणीयाम्यगो भौमो वृष्टिमर्घञ्च नाशयेत् ।
धूमायमानः सशिखः पारियात्रान् विनाशयेत् ॥ १२ ॥
भयं सुमरुतो वह्निर्जृम्भं नो पश्यते हतः ॥
वृष्टिःकुत्रचिदेव स्यात् सस्यं शुष्यति नूतनम् ॥ १३ ॥

Aho ! Shrutgyanam

निष्पन्नान्यपि सस्यानि हरन्त्यविनयात् परे ।
भूपैर्निस्त्रीकृतो लोको न सम्यक् परिपाल्यते ॥ १४ ॥
व्यथन्ते व्याधयो भूयो भुजङ्गाश्च विषोल्बणाः ॥
सम्वत्सरे च मासे च वारे च वसुधा भुवः ॥ १५ ॥

इति वर्षाधिपतिफलम् ॥

तापी शोणः पयोष्णी त्रिदशपतिसरिद्गोमतीवेत्रवत्त्य ।
श्चोलानाशिक्यविन्ध्याक्षितिधरनिलयाः ये विदेहाश्चकाशी
देशाः कोङ्कणाख्या मलयपरिसराः कुन्तलाः केरला वा
मध्याः भूपाः कुमाराः सकटुकमखिलं सौगते चापि भौमे १
भौमस्य चारे तद्वर्गे नक्षत्रविषयेषु च ।
मासेनत्वाष्टभिर्मासैर्विदधाति शुभाशुभम् ॥ २ ॥
विपुलविमलमूर्तिः किंशुकाशोकवर्णः
स्फुटरुचिरमयूखस्तप्ततामप्रभाभः ।
विचरति यदि मार्गञ्चोत्तरं मेदिनीजः
शुभकृदवनिपानां हार्दकृच्च प्रजानाम् ॥ ३ ॥

इति भौमचरितनाम चतुर्थोध्यायः ।

पञ्चमोऽध्यायः ।

अथ प्रस्तूयते सोमपुत्रस्य चरितं लघु ।
अनुनीतिफलं तस्य प्रमाणं दिवसाधिपः ॥ १ ॥
कर्पूरो नीपवृद्धाब्दे धनलिप्ता विभाजकः ।
ध्रुवोच्चं रोहिणेयस्य शुभांशक इति स्मृतम् ॥ २ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शशिजा ध्रुवका वरगश्चमती ।
विजयं सय गतिनुत् खरनुतो ॥ ३ ॥
बुधाद्यन्तस्तदाक न्या सोमो नान्ये नदीधनतो ।
क्रूरोथानन्तरोर्थज्ञो नदीमानमिति क्रमात् ॥ ४ ॥
बुधमध्यादधोगौरी युधि सर्पो नदीनृपः ।
धर्म्मोभानुर्वने नूनं सलिलान्ते द्वयन्त्यजेत् ॥ ५ ॥
आशयोरुभयोरेव बुधस्यास्तोदयौ मतौ ।
एतस्यान्तरवाक्यञ्च नृपमौलिरितिस्थितम् ॥ ६ ॥
उदयोस्तमयोर्वास्य यदा स्यात् पश्चिमाम्बरे ।
सप्तमोदयवाक्येन संस्कृतेन विवर्द्धयेत् ॥ ७ ॥
यदा स्यात् पूर्व्वदिग्भागे तदार्कोदयसंस्कृतम् ।
वाक्यन्ताधनराशिःस्या च्छेषः प्राग्वदिशः स्मृतः ॥ ८ ॥
अतिशीघ्रस्य भौमस्य स्फुटभोगविनाडिका ।
भिन्नासन्ततिरिच्येते वक्रज्यानयनम्भवेत् ॥ ९ ॥
द्वितीयस्फुटकेन्द्रश्चेत् सोमहारपटुर्यदा ।
धावनं केन्द्रचारो वा वक्रारम्भी तदा बुधः ॥ १० ॥
तृतीयस्फुटकेन्द्रेश्चेद्दशमी कार्त्तिकी यदा ।
अर्थःकेन्द्रदिनं वापि तदासौ विनिवर्त्तते ॥ ११ ॥
नोत्पातरहितश्चान्द्रि रुदयत्युषितो यदि ।
अर्घस्य वृद्धिं हानिं वा करोत्यग्निय निलाम्बुकृत् ॥ १२ ॥
श्रवणाषाढवैशाखमघापौष्णषु चन्द्रजः ।
दृष्टो लोकस्य भयदं प्रोषितश्शोभनम्भवेत् ॥ १३ ॥
माघेश्वयुजि दृश्येत कार्तिके वापिचन्द्रजः ।
चोराग्निशस्त्ररोगान् क्षुद्भयानि कुरुततदा ॥ १४ ॥
धनिष्ठाविश्वदेवेन्दुरोहिणीश्रवणेषुच ।
विमर्द्यविचरन् सौम्यो रोगावृष्टिभयावहः ॥ १५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

आर्द्रादिपञ्चतारासु विचरेद्रोहिणीसुतः ।
शस्त्रक्षुद्रोगदुर्दृष्टिभयं धत्ते वपुष्मताम् ॥ १६ ॥
हस्तादिशक्रपर्य्यन्तमुत्पीड्य विचारन् बुधः
गवामशुभकृन्नेह रसार्थानाञ्च वर्द्धयेत् ॥ १७ ॥
मृदूनन् वारुणमूलाश्विरेव तींचन्द्रनन्दनः ।
भिषक्पण्यतुरङ्गानां जलजानाञ्च घातकः ॥ १८ ॥
दूतबालकवानाञ्च षण्डहास्यविदामापि ।
शिलोच्चयजुषामम्बुजन्मिनाञ्च सुखोत्तरम् ॥ १९ ॥
गान्धर्व्वनृसलेख्यस्त्रगणितादिविदाम्प्रियः ।
वर्त्तते दण्डनीतिश्च समये रोहिणीभुवः ॥ २० ॥

इति वर्षाधिपतिफलम् ।

———:o:———

गम्भीरासरयूश्च लोहितसरित्पद्मावनीलाचलो ।
गोमन्तः शठशूद्रमागधजनाः दूतेङ्गितज्ञादयः
चित्रज्ञाः लिपिशिल्पकर्म्मनिपुणा मन्त्रेन्द्र जालादिषु
पौषस्याज्यतिलादिबीजमखिलं सौम्यस्य वर्गे भवेत् ॥१॥
सौम्यस्यवारस्तद्वर्गे तदार्क्षविषयेषु च ।
आदर्शनात्तु मासानां त्रयेणापि विपच्यते ॥ २ ॥
हेमकान्तिरथ वा शुकवर्णः सण्यकेन मणिना सदृशो वा ।
स्निग्धमूर्तिरलघुश्च विधत्ते सर्व्वलोकविजयं शशिपुत्रः ॥३॥

इति बुधचरितनाम पञ्चमोध्यायः ।

——— ;o: ———

षष्ठोऽध्यायः ।

—:*o*:—

अथ जीवस्य चारितं संक्षेपेण प्रणीयते ।

Aho ! Shrutgyanam

ज्ञानाब्धिफलमेतस्य धनवद् भाजकः प्रभा ॥ १ ॥
श्रीधर्म्मवाक्यलिप्ताना मणयाब्दे विभाजकः ।
ध्रुवोधनाङ्गलोकस्य भौमवत् स्फुटसाधनम् ॥ २ ॥
* विपनन् ध्रुवका विचलन्नूनतुलः ।
† गरगश् शतरुत् पथिको हिमनुत् ॥ ३ ॥
धिषणाद्यन्तपादाज्ज्यास्तटतोतनुलक्ष्मणौ ।
जितवान्नून मतेच्च कश्चलन् तस्करानलम् ॥ ४ ॥
जीवस्य मध्यश्रीसिद्धो धूपादानं सनीतिनुत् ।
धातुलग्नं दिवाकिणु धात्रनेनान्त्यमुँसजेत् ॥ ५ ॥
अर्थन्धरा सुरेद्यस्य भवेदन्तरवाक्यकम् ।
उदयास्तमया वस्य सर्व्वथाभौम वन्मतौ ॥ ६ ॥
अतिशीघ्रस्य जीवस्य स्फुटभोगविनाडिकाः ।
गीतिकाञ्चाति रिच्येत वक्राजज्यानूतनं भवेत् ॥ ७ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेत् सङ्गानामधुना यदि ।
केन्द्रे दिनं शिवास्यं वा वक्रारम्भी तदा गुरुः ॥ ८ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेत् क्रमुकोल्लासको यदि ।
केन्द्रामधर्म्मरत्नं वा तदासौ विनिवर्त्तते ॥ ९ ॥
गुरुश्चरति यत्रर्क्षे तदाख्यः शरदः क्रमात् ।
द्वादशाग्रे यमारभ्य चतुर्भोभद्वयान्विताः ॥ १० ॥
पञ्चमाभतयो पेताः ततः पञ्चविभान्विताः ।
त्रिभ्रान्तमविधिश्चेति विद्यान्मासक्रमादिमाः ॥ ११ ॥
कार्त्तिकेऽब्दे गवां त्वार्त्तिः शकटानलजीविनाम् ।
रोगोस्त्रकोपः पीताभः रक्ताभ्रः कुसुमोदयः ॥ १२ ॥
सौम्ये वर्षे भयं व्याधेः मृगाखुशलभाण्डजैः ।

---

* धिषण ध्रुवका ' † हरगश् ।

Aho ! Shrutgyanam

सस्यहानिरनावृष्टिर्भूभुजाम्भूरि वैरिता ॥ १३ ॥
पौष्ये वर्षे जगद्वृद्धिर्वीतवैराश्च भूभुजः ।
सिद्ध्यन्ति पौष्टिकारम्भा धान्यार्घस्त्रिगुणो भवेत् ॥१४॥
माघे वर्षे धनारोग्यं वृष्टिधान्यार्घवृद्धयः ।
उदयः सर्व्वभूतानां सुलभा मित्रसम्पदः ॥ १५ ॥
फाल्गुनी वत्सरे वृष्टिः सस्यक्षेमाक्वचिद्भवा ।
दस्युकोपो नृपाश्चोग्राः वैरूप्यमपि योषिताम् ॥ १६ ॥
चैत्रेब्दे दुर्लभा वृष्टिः प्रियमन्नं नृपो मृदुः ।
कोशधान्यविवृद्धिश्च पीडा रूपवतामपि ॥ १७ ॥
वैशाखेब्दे जगत् सर्व्वं तुष्टिधर्म्मपरायणम् ।
सम्पद्यन्ते च सस्यानि नृपाणामभयं तदा ॥ १८ ॥
ज्यैष्ठे कुलधनश्रेणी श्रेष्ठा धर्म्मरताः नृपाः ।
पीड्यते सस्यजातिश्च शमीकङ्गुविवर्ज्जिता ॥ १९ ॥
आषाढे सस्यसम्पत्तिः क चिद् दुर्वृष्टिरेव च ।
स्वोषु सक्ताश्च भूपालाः क्षेमं प्रत्यन्तवासिनाम् ॥ २० ॥
श्रावणेब्दे नृपाः क्षेमाः सम्यक् सस्यश्च पच्यते ।
पीड्यन्ते क्षुद्रपाषण्डाः तद्भक्ताश्चैव जन्तवः ॥ २१ ॥
वर्षे भाद्रपदे पूर्व्वसस्यवल्लीजसम्पदः ।
क्वचित् सुभिक्षमभयं तद्विरुद्धं क चिद्भवेत् ॥ २२ ॥
वर्षे चाश्व युजे वारि भूरि वर्षति वारिदः ।
प्रजाः प्रमुदिताः क्षेमं सुभिक्षञ्च दिने दिने ॥ २३ ॥
ऋक्षस्योत्तरपार्श्वेन विचरन् वृहतां पतिः ।
क्षेमारोग्यसुभिक्षाय विपरीताय याम्यशः ॥ २४ ॥
वधो भूपस्य निर्दिष्टो दिवादृष्टे वृहस्पतौ ।
धूमायमाने रात्रौ वा वृष्टिनिग्रहमादिशेत् ॥ २५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

इत्याग्नेयादिवर्षफलम् ।

——:o:——

कलेर्वर्षात्परारम्भं हित्वा शेषं द्विधा कृतम् ।
ऊर्ध्वस्थं भानुनाभ्यश्चत्परं लोपहतं द्विधा ॥ २६ ॥
अधःस्थं द्विगुणीकुर्य्यात् नीचाप्तमुपरिक्रमात् ।
उपरिष्ठात्ततोधःस्थमब्दं मासोनगाः हृताः ॥ २७ ॥
मुनीक्षा निश्चलं तस्मिन् दिवसादि बिनिक्षिपेत् ।
मूलाब्दे तदिदं क्षिप्त्वानूत नैर्मण्डलं सृजेत् ॥ २८ ॥
युगानि मुनिलब्धानि शेषास्तु क्रमशः समाः ।
वैष्णवं जैत्रमैन्द्रञ्च ज्वलनं त्वाष्ट्रमेव च ॥ २९ ॥
औत्तरं प्रौष्ठपादञ्च पैत्रं वैश्वमथैन्दवम् ।
इन्द्राग्निदेवमश्विन्यं भाग्यञ्चेति द्विपदृक्रमात् ॥ ३० ॥
वैष्णवादीनि चत्वारि प्रशस्यन्ते युगानि हि ।
त्वाष्ट्रादीनि च चत्वारि मध्यमानि विदुर्बुधाः ॥ ३१ ॥
ऐन्दवादीनि चत्वारि हीनानीति विनिर्द्दिशेत् ।
एतेषु युगमेकैकं पञ्चाब्दप्रमितम्भवेत् ॥ ३२ ॥
यदत्र संस्कृतं वर्षमपरित्यक्तमण्डलम् ।
धनेन ताडयित्वा तान्मासांश्च दिवसान्यपि ॥ ३३ ॥
दत्वोपरि यथा शेषमुपरिष्ठान्नवाहृतम् ।
वस्वादितारावक्रः स्याच्छेषांशे गुरुनिश्चितः ॥ ३४ ॥
आद्यमंशं धनिष्ठायां प्राप्यमाघं यदा गुरुः ।
उदयं यात्यसौ विष्णुयुगे प्रथमवत्सरः ॥ ३५ ॥
प्रभवाख्यमिदं वर्षं क्वचित् क्वचिद्दृष्टिकः ।
वाताग्निश्लेष्मा कोपः स्यान्नातिदुःखकरन्नृणाम् ॥ ३६ ॥
क्रमेण विभवः शुक्लः प्रमोदश्च प्रजापतिः ।

Aho ! Shrutgyanam

संवत्सरा विष्णुयुगे शुभदाश्चोत्तरोत्तरम् ॥ ३७ ॥
एषु सर्वेषु भवति निर्भयं निरुपद्रवम् ।
सम्पन्नसस्यसंहृष्टप्रजाराजान्विता भूः ॥ ३८ ॥
अङ्गिराः श्रीमुखोभावो युवाधातेति वत्सराः ।
युगे द्वितीये प्रथमं त्रयं भद्रं समीपरे ॥ ३९ ॥
त्रिष्वाद्येषु सुदृष्टिश्च निरातङ्कभयाः प्रजाः ।
समा वृष्टिर्द्वये तस्मिन् किन्तु रोगाः रणागमः ॥ ४० ॥
ईश्वरोबहुधान्यश्च प्रमाथी विक्रमो वृषः ।
पञ्चैते वत्सराः विद्धिराखण्डलयुगे स्मृताः ॥ ४१ ॥
आदिमौ कृतदेशियौ तृतीयः पापपाकदः ।
सुभिक्षकारकावन्त्यौ किन्तु रोगभयप्रदौ ॥ ४२ ॥
चित्रभानुः शुभोभानुस्तारणसाथपार्थिवः ।
व्ययश्चेति क्रमादेते वत्सराःदाहनेयुगे ॥ ४३ ॥
आद्यः श्रेष्ठः परोरुग्रः तृतीयो भूरिवारिदः ।
चतुर्थः सस्यसंरक्षी पञ्चमः सततोत्सवः ॥ ४४ ॥
सर्व्वजित् सर्व्वधारीच विरोधी विकृतःखरः ।
पञ्चैते पञ्चमेशस्तो द्वितीयोनैवचापरे ॥ ४५ ॥
नन्दनोविजयः षष्ठे जयमन्मथ दुर्मुखाः ।
त्रयोत्र शस्ताः प्रथमे द्वावन्यौ फलमध्यमौ ॥ ४६ ॥
हेमलम्बो विलम्बी च विकारीसर्व्वरीप्लवः ।
पञ्चैताःरशदो विद्धिर्युगेपैत्रे विनिश्रिताः ॥ ४७ ॥
इति प्रायः प्रचुरपवना वृष्टिराद्येतु वर्षे ।
मन्दं सस्यं न बहुसलिलं वत्सरेतो द्वितीये ।
अत्युद्वेगः प्रचुरसलिलः स्यात्तृतीयश्चतुर्थो
दुर्भिक्षायप्लव इति ततः शोभनो भूरितोयः ॥ ४८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शोभकृच्छुभकृत् क्रोधी विश्वावसुः पराभवः ।
एतानि पञ्चवर्षाणि युगेस्युर्विश्वदैवते ॥ ४९ ॥
पूर्वापरौ प्रीतिकरौ तृतीयो बहुदोषदः ।
द्विजभागोभयदावन्यौ शस्त्राग्निर्व्याधिकोपदः ॥ ५० ॥
प्लवङ्गः कीलकः सौम्यस्तथा साधारणाह्वयः ।
रोधकृच्चेति पञ्चैताः शरदः शशिनो युगे ॥ ५१ ॥
आद्यःकष्टोन्तिमो मध्यस्तुरियं से तिरम्बुदः ।
अपरौ शुभदौ रोगभयदौ नातिमृत्युदौ ॥ ५२ ॥
परिधावी प्रमादी वा नन्दनोराक्षसोनलः ।
एतानि पञ्चवर्षाणि युगे इन्द्राग्निदैवते ॥ ५३ ॥
आद्योमध्यमदेशघ्नो नृपहाल्पजलप्रदः ।
अलसः साग्निकोपश्च द्वितीयो रोगमृत्युदः ॥ ५४ ॥
तृतीयस्तुष्टिमाधत्ते तुरीयः क्षयकारकः ।
ग्रीष्मधान्यकरः किन्तु पञ्चमोऽग्निभयप्रदः ॥ ५५ ॥
पिङ्गलः कालयुक्तश्च सिद्धार्थोरौद्रदुर्मती ।
एतान्येकादशेऽब्दानि तत्राद्योबहुवृष्टिदः ॥ ५६ ॥
द्वितीयं बहुदोषञ्च तृतीयं शोभनं स्मृतम् ।
तुरीयं क्षयकृन्मध्यवृष्टिदः पञ्चमं भवेत् ॥ ५७ ॥
दुन्दुभिश्चततोद्गारी रक्ताक्षः क्रोध एव च ।
विरोधश्चेति पञ्चैते भाग्ये संवत्सराः युगे ॥ ५८ ॥
आद्यः सस्यकृदन्यस्तु नृपघोविषमाम्बुदः ।
तृतीयोदंष्ट्रिभयकृत्तुरीयं कोशवर्द्धनम् ॥ ५० ॥
अन्तिमः कुरुते राष्ट्रं शून्यतां बहुयुद्धताम् ।
एवं शुभाशुभं विद्यात् पार्थिवसमुद्भवम् ॥ ६० ॥

इति षष्टिसंवत्सरनिर्णयः ।

———:o:o:———

Aho ! Shrutgyanam

क्षितिरुत्तमसस्याढ्या भवेद्राजान्वती चसा ।
उदयो यजूवनाभश्च द्विपगोकुलवृद्धयः ॥ ६१ ॥
सम्यग्वर्षति कालेन धरायां मेघवाहनः ।
प्रजाप्रमोदते भूयः समये सुरमन्त्रिणः ॥ ६२ ॥
इति वर्षाधिपतिफलम् ।

——:o:o:——

सौवीरा भरताः ससिन्धुतटजास्त्रैगर्त्तमत्स्योद्भवाः
सर्व्वाः क्षत्रियसम्पदश्च सुधियः सर्व्वं भिषग्वस्तु च ।
ये सेवावृतसत्यधर्म्मनिरतास्तृष्णाभिचारक्षमा-
श्चार्य्यापौरतलावकद्रुतिलया जीवस्यवर्गेभवेत् ॥ ६३ ॥
वारे जीवस्य तद्वर्गे तारकाविषयेषु च ।
अर्द्धाधिकेन वर्षेण विदधाति शूभाशुभम् ॥ ६४ ॥
अकलुषांशुजटिल स्फुटमूर्त्तिः
कुमुदकुन्दकुसुमस्फटिकाभः ।
सुरगुरुः सकललोकविवृद्धिं
वितनुते यदि परैरविनष्टः ॥ ६५ ॥
इति जीवचारितन्नाम षष्ठोऽध्यायः ।

——:o◯o:——

सप्तमोऽध्यायः ।

——:o:o:——

अथ ब्रवीमि चरितं भार्गवस्य समासतः ।
निदानं फलमेतस्याधिवासः प्रमितम्भवेत् ॥ १ ॥
देवासुरो धनक्षादिभाजकोयुगवत्सरैः ।
शिवार्च्चनं ध्रुवोच्चैःस्यात् सौम्यवत्सर्व्वमिष्यते ॥ २ ॥

Aho ! Shrutgyanam

भृगुज भ्रुवका कथिकाः सयसौ ।
सुतनु स्वरणु धनिनां तनुनुत् ॥ ३ ॥
सिताद्यन्ता नृपःसर्प्पो हंसा क्षेपासुभूतयः ।
सिद्धामात्यस्तपः साकः कालोवाक्यमितिक्रमात् ॥ ४ ॥
सितमध्ययशोदेहो धनपालः स सर्व्वनुत् ।
लक्षणानुचरो नान्यो हंसप्रायोत्रिमन्त्रनुत् ॥ ५ ॥
नागवीरोत्तरं वाक्यं स्फुटभोगोतिशीघ्रजः ।
सलिलान्तातिरिच्यते नेत्रं वक्रगुणःस्मृतः ॥ ६ ॥
द्वितीयस्फुटकेन्द्रश्चेत् कनकाभप्रियोयदाः ।
केन्द्रेदिनं वा वासश्रीर्वक्रारम्भोतदासितः ॥ ७ ॥
तृतीयस्फुटकेन्द्रश्चेत् कुमुदालावकोयदा ।
केन्द्रे दिनंवा तत्कालस्तदासौ विनिवर्त्तते ॥ ८ ॥
शुक्रस्य वक्रयात्रायामेके गणितवेदिनः ।
उदयास्तमये तस्य देवभानुस्त्यजन्ति च ॥ ९ ॥
भानोर्भुजा फलं केचिद्दक्षिणोत्तरगोलयोः ।
हेयं देयञ्च मन्यन्ते स्फुटयोः शुक्रसौम्ययोः ॥ १० ॥
विचरन्नसुराचार्य्यो भरण्यादिचतुष्टये ।
अङ्गवङ्गकलिङ्गेषु भयकृच्च सुभिक्षकृत् ॥ ११ ॥
चतुष्टये च रौद्राद्ये चरन् सस्याम्बुसम्पदे ।
विप्राणामशुभाय स्याद्विशेषात् क्रूरचेतसाम् ॥ १२ ॥
मघादिपञ्चके सस्यप्रणाशं कुरुते सितः ।
क्षुच्चौरभयदो नीचजनस्योन्नतिमात्रहेतु ॥ १३ ॥
स्वातादिभत्रये तिष्ठन्नभयं कुरुते नृणाम् ।
भिनत्ति मित्राण्यन्योन्यब्रह्मक्षत्रियवृद्धिदम् ॥ १४ ॥
ज्येष्ठादिपञ्चके शुक्रः कुर्य्यात् क्षुद्रोगतस्करान् ।

Aho ! Shrutgyanam

अवन्तिमत्स्यकाश्मीरमनुजान्नापिपीडयेत् ॥ १५ ॥
वस्त्रादिषट्के विचरन् धनगोकुलसङ्कुलम् ।
अनल्पधान्यं भुवनं कुरुते समयं क्वचित् ॥ १६ ॥
रोहिणी शकटे भिन्ने शुक्रेण धरणी तदा ।
केशास्थिबलान् धत्ते कापालिकमिवद्रुतम् ॥ १७ ॥
सौम्यताराग तः शुक्रः कुरुते रससंक्षयम् ।
आर्द्रागतः सलिलकृत् सकोशलकलिङ्गहा ॥ १८ ॥
पुनर्वसुस्थितः शुक्रो वैदर्भाश्मकपीडकः ।
पुष्यस्थितो वारिकरः कुन्तराणां विमर्द्दकः ॥ १९ ॥
भुजङ्गसङ्गतः शुक्रो भुजङ्गभयमावहेत् ।
मघां भिन्दन्महामात्यदोष कृद्भूरिवारिदः ॥ २० ॥
भाग्येपुलिन्दप्रध्वंसी भुवं पुष्णाति वारिभिः ।
आर्य्यमस्थोम्बुकृद्धन्ति कुरुपञ्चालजाङ्गलान् ॥ २१ ॥
हस्तस्थश्चित्रकारघ्नो निरुणद्धिजलानि च ।
चित्रास्थे शोभनावृष्टिं दद्यात् पीडाण्डसम्भवा ॥ २२ ॥
स्वातौदूतवणिङ्नाविकपीडावृष्टिश्च भूयसी ।
विशाखास्थे सुभावृष्टिर्वणिजाञ्चभयसम्भवेत् ॥ २३ ॥
मित्रस्थः क्षत्रनाशाय ज्येष्ठायां राजमुख्यहा ।
मूले मूलभिषग्पीडादुर्वृष्टिर्भवत्रयेपिच ॥ २४ ॥
आप्ये वारिभवं हन्ति विश्वेशे व्याधिमावहेत् ।
श्रवणे श्रुतिपीडाकृद्वसुस्थो देवलान्तकः ॥ २५ ॥
वारुणे शौण्डिकान् ध्वंसी स्थितः शुक्रोजपादके ।
घातको द्यूतवृत्तीनां पञ्चालानाञ्च वारिदः ॥ २६ ॥
अहिर्बुध्नेलतामूलफलप्रध्वंसकारकः ।
रेवत्यां यायिनो हन्यादश्विन्यामश्वपालकान् ॥ २७ ॥

Aho ! Shrutgyanam

याम्येकिरातान् धनिनो विनिहन्ति विशेषतः ।
कृतिकाधिष्ठितः शुक्रः पीडयेद् भुवनत्रयम् ॥ २८ ॥
पञ्चदश्यांचतुर्दश्यामष्टम्यां वा सितेतरे ।
कुर्व्वन्नस्तोदयं शुक्रः प्रभूतं वारि यच्छति ॥ २९ ॥
जीवः पश्चिमगः शुक्रः पूर्व्वगश्चपरस्परम् ।
यदासप्तमराशिस्थौ तददुर्दृष्टिरोगदौ ॥ ३० ॥
दृष्टः सितो वियतिनास्तमितेखरांशौ
भीतिप्रदः सकलवासरदृश्यमानः ।
क्षुद्रोगकृत सुचिरमर्द्धदिनप्रदिष्टः
सेन्दुर्निहन्ति नृपतिं सपुरं ससेनम् ॥ ३१ ॥
शालीक्षुशालिनीधात्री पुष्टासमयदृष्टिभिः ।
लोकेसबन्धुभिःसार्द्धं मृष्टमश्नाति भोजनम् ॥ ३२ ॥
घ्नन्तिःदुष्टान् महीपालान् शिष्टान् रक्षन्ति जित्वरान् ।
ऊर्ज्जस्वी पुष्पधान्या च कालेदेवद्विषद्गुरोः ॥ ३३ ॥

इति वर्षाद्यधिफलम् ।

———ooo———

ये गान्धरादशार्णकैकयशिविप्रख्याश्चये मालवाः
देशाःतक्षशिलावितस्तिसरितश्चैरावतीतोयपाः ।
यत् कामोद्गणकारणञ्च कवयोनागारथाःवाजिनः
श्चित्रज्ञाण्डजसूक्ष्मवस्त्र निकरो वर्गोभवेदभार्गवे ॥ ३४ ॥
शुक्रस्यवारस्तद्वर्गे तद्दक्षविषयेषु च ।
विधत्ते मासषट्केन शुभाशुभफलंभुवि ॥ ३५ ॥
शिखिभयमनलाभः शस्त्रकोपञ्चरक्तः
कनक-निकषगौरोतोगजातंविधत्ते ।
स्फटिकविपदमूर्तिः प्यर्त्तवान् दैसपूज्यो

Aho ! Shrutgyanam

जनयतिजगद्धितं क्षत्रियानां जयञ्च ॥ ३६ ॥

इति शुक्रचरितं नाम सप्तमोऽध्यायः ।

अष्टमोऽध्यायः ।

शनैश्वरस्य चरितं समासेनाथ वक्ष्यते ।
आत्रेयः फलमेतस्य प्रमाणाद् ध्रुवदासवत् ॥ १ ॥
लिप्तिकानाम्रणायाब्दे भागहारः सुबोधवान् ।
रविच्छायाध्रुवोत्तुङ्गभौमवत् सर्व्वमिष्यते ॥ २ ॥
रविज ध्रुवका वनमुद्दशमः ।
हिमस ञ्जितवान् बरग मियगौ ॥ ३ ॥
शनेराद्यन्तपादज्या चोलाङ्गाणां शशाङ्गणा ।
पीनाङ्गणा जगद्रत्ना चातको मदनुत् क्रमात् ॥ ४ ॥
शनिमध्यस्तु नलवदभटवत् सकुलाननम् ।
कर्पूरोधनिनामस्मादुपान्तगुणमुत्सजेत् ॥ ५ ॥
नेमिनोमन्तरं वाक्यं नीतिर्वक्रगुणःशनेः ।
स्फुटभोगेतिशीघ्रस्य कालान्नैवातिरिच्यते ॥ ६ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेद्विष्णुदेवजनो यदा ।
केन्द्रे दिनश्च गुरुवद्वक्रारम्भीतदाशीनः ॥ ७ ॥
चतुर्थस्फुटकेन्द्रश्चेत्प्रमत्तापजयोयदा ।
तिमिरं वादिनं केन्द्रे तदासौ विनिवर्त्तते ॥ ८ ॥
भरणीभाग्यहस्तार्द्राश्रवणनिलगः शनिः ।
यदिस्निग्धोभवेद्भूरिवारिभिस्तापयेन्महीम् ॥ ९ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शक्रत्वारुणनागेषु विचरन्नातिवारिदः ।
कुरुतेपीडितं लोकं शस्त्रदुर्भिक्षजैर्भयैः ॥ १० ॥
अश्वेस्ववर्गतज्जीविकविवैद्यसुमन्त्रिहा ।
याम्येर्क्षेगीतवाद्यादी जीविनोहन्तिभास्करिः ॥ ११ ॥
बहुलास्थेचमूपालानग्निवृत्तिश्च पीडयेत् ।
रोहिण्यां हन्ति पञ्चालकाशिकोशलमद्रजान् ॥ १२ ॥
कोनः सौम्यस्थितोहन्ति गवीर्य्यजनयाजकान् ।
रौद्रस्थःतैलकृच्चौररजकानुपपीडयेत् ॥ १३ ॥
आदित्येसिन्धुसौवीरसुराष्ट्रजनमर्दनः ।
पुष्येकर्णाटकाम्बोजवणिग्यवनधूर्त्तहा ॥ १४ ॥
सार्पेसर्पजलोदभूतान्निहन्तिपितृदेवगः ।
वाह्लीकवासिनोवैश्यान् कोष्टागारनिवासिनः ॥ १५ ॥
भाग्यर्क्षेकन्यकाःहन्ति पण्यस्त्रीरसविक्रयान् ।
आर्य्यमस्थोनृपाचार्य्यान् हन्तितताक्षशिलानपि ॥ १६ ॥
हस्तेनापितमालाकृद्भिषच्चाक्रिकमर्दनः ।
चित्रायां चित्रभाण्डानिस्त्रियोहन्तिचलेखकान् ॥ १७ ॥
स्वातौमगधजान् दूतान् विशेषेणप्लवङ्गमान् ।
वैशाखेमीनकौलूकान् सस्यानिचानिपीडयेत् ॥ १८ ॥
मित्रेभिनतिमित्राणि काश्मीरानपि मन्त्रिणः ।
ज्येष्ठायां राजपूज्यांश्च कुलज्येष्ठांश्च पीडयेत् ॥ १९ ॥
मूलेहन्तिफलौषध्यान् काशिकोशलयोषितः ।
आप्येगिरिव्रजान् हन्तिमैथिलान्तामलिप्तिकान् ॥ २० ॥
विश्वेदशार्णयवनान्निहन्त्युज्जयनीजनान् ।
श्रवणेनृपतेर्मुख्यान्निहन्तिच पुरोहितम् ॥ २१ ॥
वसुभेमगधेशस्य धनिनाञ्च जयप्रदः ।

Aho ! Shrutgyanam

वारुणेर्क्षेभिषक्पण्यशौण्डिकानां जयप्रदः ॥ २२ ॥
अजैकपादेदृष्टिघ्नः श्लेष्मिकानापिपोषयेत् ।
अहिर्बुध्नेहिरण्यस्त्रीयोधानामभिवृद्धिदः ॥ २३ ॥
पौष्णेहन्तिशरत्सस्यमीश्वरान् यवनानपि ।
सर्वत्रविमलन्स्निग्धश्चारवान्नातिदोषकृत् ॥ २४ ॥
जीवोयदाविशाखास्थः कृत्तिकास्थः शनैश्चरः ।
तदाप्रजानामनयः पौरभेदश्च निश्चितः ॥ २५ ॥
आवीक्षितौच युक्तौच सद्भिःभौमशनैश्चरौ ।
एकत्रसङ्गतौस्यातामानिलानलभीतिदौ ॥ २६ ॥
उद्धृताः दस्युवाराज्यं पशुवित्तविनाशकृत् ।
जनोबन्धुवियोगार्त्तः पीड्यते वहुभूक्षयः ॥ २७ ॥
अतिवृष्टया क्वचित् सस्यमवृष्टयानश्यति क्वचित् ।
लोकः पीड्याति रोगेण समये सूर्य्यजन्मिनः ॥ २८ ॥

इति वर्षाद्यधिफलम् ।

अणवोल्पमयूखाश्च नीचगानिर्ज्जिताग्रहाः ।
फलं नसकलंदद्युर्यथाभिहितात्मनः ॥ २९ ॥
शुभाशुभानां वर्षादि भवेत् सम्मीलितं यदा ।
तदापि फलमल्पंस्यादन्यथापूर्तिमिष्यते ॥ ३० ॥
आनर्त्ताम्बुधशूद्रपुष्करमहास्तौराष्ट्रनामादयः ।
पश्चारणस्त्रसरस्वतीप्रलयिनोदेशास्तुयेसम्मताः ॥
चण्डालस्खलितव्रताश्च विधवाश्लितक्तानिवस्तूनिवा ।
वृद्धाहिंप्रजनाःखरास्त्रकरभाःवर्गःशनेस्सम्मतः ॥ ३१ ॥
शनैश्चरस्य वारेण तद्वर्गादौ शुभाशुभम् ।
पच्यतेवर्षशःतत्तन्मासपट्केनवापुनः ॥ ३२ ॥

Aho ! Shrutgyanam

वैदूर्य्यकान्तिविमलः शुभदः प्रजानां ।
बाणातसीकुसुमवर्णनिभः प्रशस्तः ।
यञ्चापि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णं
सूर्य्यात्मजः क्षपयतीति मुनिप्रवादः ॥ ३३ ॥

इति शनैश्चरचारितं नामाष्टमोऽध्यायः ।

नवमोऽध्यायः ।

अथराहोश्चरितं समासेन प्रकाश्यते ।
अर्थः फलममुष्य स्यात् प्रमाणं क्षयतीधिकः ॥ १ ॥
ऋणयाब्दे विलिप्तानां मधुको भागहारकः ।
ऋक्षी मण्डलं सकृत्वा स्फुटमेतस्य निर्द्दिशेत् ॥ २ ॥
मण्डलार्द्धमिहक्षिप्त्वास्फुटं केतोश्च साधयेत् ।
मद्ध्येष्वर्केन्दुतुङ्गानां तमसश्च स्फुटे क्रमात् ॥ ३ ॥
तोयञ्च प्रबलं छायारूपधाराञ्जनं सजेत् ।
अथ वा बीजकर्मैत्र पूर्व्वोक्तम्फलमिष्यते ॥ ४ ॥
अमावस्यादिवापर्व्वपरिच्छेदः समीपगः ।
अङ्कत्रयमिदं दृष्ट्वा रविग्रासं विचिन्तयेत् ॥ ५ ॥
भानुनेन्दुं कलीकृत्य पूर्व्ववत् पर्व्व साधयेत् ।
अवशेषं परिज्ञाय ततो लिप्ताद्यमाहरेत् ॥ ६ ॥
प्रतिपत्पर्व्वणोरन्यतरसम्बन्धितद्भवेत् ।
ततो गोक्षुण्णतो नाभिप्राप्तमन्तरलिप्तिका ॥ ७ ॥
प्रथमान्तरलिप्तादि शोधयेद्भास्करस्फुटात् ।
एतञ्च तिथिशेषञ्च शशिनस्तु विशोधयेत् ॥ ८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

पर्व्वस्योत्तरलिप्तादि योजयेद् द्वादशात्मनि ।
निशाकरेतु तदिदं तिथिशेषञ्च योजयेत् ॥ ९ ॥
सूर्य्यचन्द्रमसोश्चैवं समो नाम भविष्यति ।
अथैवैवं क्रियाभिज्ञस्समकर्म्म समाचरेत् ॥ १० ॥
चन्द्रस्फुटो यदि महान् योगोस्यउदाहृतः ।
स्फुटो यदि महान् भानोर्विद्याद्योगमनागतम् ॥ ११ ॥
एतयोः स्फुटभोगाभ्यान्तिथिशेषं पृथक् पृथक् ।
अभ्यस्य विवरेन्यस्ता विलिप्ता स्फुटयो स्तयोः ॥ १२ ॥
संयोजयेच्चतुर्द्दश्यां पञ्चदश्यान्तु शोधयेत् ।
सदृशावर्कशशिनौ शतमेवं कृते सति ॥ १३ ॥
स्फुटभुक्तिं सहस्रांशोश्चापेनाहृत्य कातरैः ।
भाजयेल्लिप्तिकाद्यं तद्भानोर्बिम्बदलम्भवेत् ॥ १४ ॥
दिनाभ्यस्तं सुधाधाम स्फुटभोगं रसास्थिकैः ।
आहृत्य घटिकाद्यन्तादिन्दोर्बिम्बार्द्धमादिशेत् ॥ १५ ॥
संयुक्तमतयोरर्द्धंसंयोगार्द्धमिति स्मृतम् ।
अथकालविशुद्ध्यर्थं लम्बपर्व्व विधीयते ॥ १६ ॥
पूर्व्वाह्णे पर्व्वनाच्छेदे दिनार्धात्पर्व्व शोधयेत् ।
पर्व्वच्छेदे पराह्णे चेद्दिनार्द्धं पर्व्वणस्त्यजेत् ॥ १७ ॥
शेषन्तु विकलीकृत्य धनैर्हित्वा नखैर्हृते ।
प्राप्तं लिप्तादि तत्रापि नीचलम्बास्तु तारकाः ॥ १८ ॥
पादः समश्चेद्विषमं त्यक्त्वा शेषं कलीकृतम् ।
विभज्य शम्भुना लब्धं लम्बनज्यागुणो भवेत् ॥ १९ ॥
मृगो नागो वरं शय्या नीपस्वीणोपुनर्ननु ।
ज्ञानञ्चेति नवैते तु खण्डालम्बगुणाःस्मृताः ॥ २० ॥
लब्धज्यां पूजयित्वाथ शेषञ्चान्त्यगुणाद् हृते ।

Aho ! Shrutgyanam

शम्भुनाप्तं क्षिपेन्मूर्ध्नि स्यादेतल्लम्बनं फलम् ॥ २१ ॥
ततो नागाप्तलिप्ताद्यं क्रमात्पूर्व्वापराह्णयोः ।
पर्व्वनाड्यास्त्रणं देयं शुद्धलम्बनपर्व्व तत् ॥ २२ ॥
मायोभ्यस्तं लम्बफलं पुनर्लम्बफलैर्युतम् ।
अनघे गाप्तलिप्तादि शुद्धलम्बकलादिकम् ॥ २३ ॥
पूर्व्वाह्णे पर्व्वनाच्छेदे ततश्चार्काद् विशोधयेत् ।
सायाह्ने योजयेत् सोयं लम्बनादिस उच्यते ॥ २४ ॥
राहुं लम्बाद्रवेस्तं वा केतोः संशोध्य गोलवित् ।
विशोध्यं भुज्यतं कोटिं शेषं कृत्वा विलिप्तिकाम् ॥ २५ ॥
नीपेनाभ्यस्य गोलात्मा भाजितं घटिकादिकम् ।
विक्षेपमाहुः शशिनस्तत्तद्गोलाख्यया श्रुतम् ॥ २६ ॥
अन्तरं विकलीकृत्य लम्बपर्व्वदिनार्द्धयोः ।
धनाभ्यस्ते नरप्राप्ता लिप्तिकाश्च विलिप्तिकाः ॥ २७ ॥
न तेन लिप्तिकाहृत्य कारकां शिरसि क्षिपेत् ।
तदेतद्राक्षलिप्ताद्यं क्रमात्पूर्व्वापराह्णयोः ॥ २८ ॥
हित्वा दत्वा च लम्बार्के मध्यलग्नस्फुटं नयेत् ।
गोलपादविधिं तत्र प्राक्कृत्वाकलीकृते ॥ २९ ॥
विभज्यशम्भुनालब्धं नतिज्यागणना भवेत् ।
सारश्शूरश्शरः पुत्रो धन्यो मान्यः प्रियः सना ॥
रत्नश्चेति नवैते तु खण्डानतिगुणाः स्मृताः ॥ ३० ॥
लब्धज्यां पूजयित्वाथ शेषञ्चान्त्यगुणाद् हृते ।
शम्भुनैवसमाहृत्य लब्धश्च शिरसि क्षिपेत् ॥ ३१ ॥
नतिज्याघटिका चैषा यदि चोत्तरीदग्भवा ।
अक्षे विश्लिष्यते ऽन्योन्यं भवेद्याम्ये तु योजयेत् ॥ ३२ ॥
एवञ्च संस्कृते तत्र भुक्त्यन्तरविवार्द्धिते ।

Aho ! Shrutgyanam

विभज्या धनकान्तारैर्लब्धा लिप्तिविलिप्तिका ॥ ३३ ॥
नतिविक्षेप एष स्यान्मध्यलग्नार्कगोलवान् ।
तुल्यादिनातिविक्षेपः शशिविक्षेपयोजितः ॥ ३४ ॥
भिन्नगोलस्तु विज्ञेयः परस्परविशोधितः ।
एवं युक्तो विशुद्धो वा स्फुटविक्षेप इष्यते ॥ ३५ ॥
यदासौ स्फुटविक्षेपः संयोगार्द्धेन चेत् समः ।
अधिको वा भवेत्तस्मात्तदार्को नोपरज्यति ॥ ३६ ॥
संयोगार्द्धञ्च विक्षेपमुभयं वर्गयेत् पृथक् ।
संयोगवर्गाद् विक्षेप वर्गं हित्वा तदन्तरे ॥ ३७ ॥
मूलमुत्पादयेत्तस्मान्नीवारमथ शोधयेत् ।
विवरे सनसा क्षुणे धनलब्धस्तु भाजकः ॥ ३८ ॥
तेन मूले हृते लब्धं स्थित्यर्द्धघटिकादिकम् ।
लब्धपर्वशिवियास्थाप्यमादौ स्थित्यर्द्धमुन्नयेत् ॥ ३९ ॥
चरमेयोजयेन्मध्ये न दद्यान्न च शोधयेत् ।
प्रथमःस्पर्शकालः स्यात्तृतीयं मोक्ष इष्यते ॥ ४० ॥
ग्रासकालो भवेन्मध्यो यथा रूपमवस्थितः ।
बिम्बार्द्धद्वयमन्योन्यं विश्लिष्यपुनवर्गयेत् ॥ ४१ ॥
ततो विक्षेपवर्गश्चेत् शोधनञ्च विमर्द्दनम् ।
शोध्यश्चेत् शोधयित्वातः शेषे मूलञ्च साधयेत् ॥ ४२ ॥
पूर्वोक्तभागहारेण तत्र मूले विभाजिते ।
लब्धा नाडी विनाडी च विमर्द्दार्धमितीष्यते ॥ ४३ ॥
ग्रासकाले च मोक्षे च विमर्द्दार्द्धं विनिक्षिपेत् ।
आप्यायनं वहिर्बिम्बाद्विमर्द्दानामकल्पते ॥ ४४ ॥
अशोध्ये पर्वलिप्ताभ्यः स्थित्यर्धेनद्वयान्तरम् ।
नक्तंदिवा च दिनकृच्चन्द्रयोर्मासनाडिका ॥ ४५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

भास्वतः स्पर्शतः पश्चात् विमोक्षः पूर्व्वतो भवेत् ।
चन्द्रस्पर्शो भवेत् प्राच्यां विमोक्षः पश्चिमे भवेत् ॥ ४६ ॥
समार्कादाधिको राहुर्ग्रसत्युत्तरकोणगः ।
ऊनो दक्षिणकोणस्थः केतुस्तूत्कविलोमतः ॥ ४७॥
सोमश्चेत् पश्चिमस्थायी राहुर्ग्रसति भास्करम् ।
भानुग्रासविलोमेन सोमग्रासं विनिर्दिशेत् ॥ ४८ ॥
सौम्यकर्णाश्रितो राहुर्वामवृत्तेन गच्छति ।
याम्यकर्णाश्रितो योयं दक्षिणावृत्ततो व्रजेत् ॥ ४९ ॥
हेमभङ्गाबिलिप्तादि बिम्बमानं विवस्वतः ।
योगकालः शशाङ्कस्य भवेद्राहोर्न्ननोनदी ॥ ५० ॥
वृत्तीकृत्य लिखेत्पूर्व्वं भानोर्बिम्बदलं ततः ।
स्थापयेत् स्फुटविक्षेपं पातनिस्टितदिङ्मुखे ॥ ५१ ॥
तदग्रे पूर्णचन्द्रस्य वृत्तिं सूत्रेण लिख्यते ।
यावद् ग्रसति राहुस्तं तावदत्रानुमीयते ॥ ५२ ॥
विषुवद्व्यङ्गुले वर्गौ कृते ज्ञानभुजायसः ।
क्षिप्त्वा मूलमिहोत्पाद्य भागहारं तमुद्दिशेत् ॥ ५३ ॥
नागिना पार्थिवामासं भक्त्वा लब्धकलाफलम् ।
विषुवद्व्यङ्गुलं क्षुण्णं भागहारेण भाजितम् ॥ ५४ ॥
ततो लब्धकलादिः स्यादवज्यानाम दक्षिणा ।
एवं संक्षेपमार्गेण सूर्य्यग्रहणमादिशेत् ॥ ५५ ॥

इति सूर्य्योपरागनिर्णयः ।

———o———

पौर्णमासीनिशापर्व्वपरिच्छेदस्समीपता ।
अङ्गत्रयमिदंदृष्ट्वा सोमग्रासं निरूपयेत् ॥ १ ॥

Aho ! Shrutgyanam

पूर्व्ववत्समकर्म्मादि कृत्वा राहुसमेन्दुतः ।
विशोध्य केतुतस्तं वा चन्द्रविक्षेपमानयेत् ॥ २ ॥
स्फुटभोगं शशाङ्कस्य दानेनाभ्यासयेत्ततः ।
पुण्यार्थलब्धं लिप्तादि राहुबिम्बार्द्धमादिशेत् ॥ ३ ॥
बिम्बार्द्धद्वयमन्योन्यं समश्चेद्राहुचन्द्रयोः ।
संयोगार्द्धं तदुद्दिष्टं तत्सवर्णञ्च वर्गयेत् ॥ ४ ॥
ततो विशोध्यविक्षेपवर्गं मूलं ततो नयेत् ।
ततास्तिथ्यर्द्धमानीय पूर्व्ववत् सर्व्वमाचरेत् ॥ ५ ॥
निशाकरस्य बिम्बार्द्धे विक्षेपेच पृथक् पृथक् ।
राहुबिम्बदलाभ्यस्ते संयोगार्द्धेन भाजितम् ॥ ६ ॥
क्रमात् सोद्दृष्टबिम्बार्द्धमिष्टविक्षेप एव च ।
वृत्तीकृत्य लिखेत्पूर्व्वमिष्टबिम्बदलं तथा ॥ ७ ॥
स्थापयेदिष्टविक्षेपं पातनिःस्टतदिङ्मुखे ।
तदग्रे राहुबिम्बार्द्धं वृत्तीकृत्य लिखेद्बुधः ॥ ८ ॥
यावत्प्रच्छाद्यते चन्द्रस्तावदत्रावसीयते ।
जानीयात् सूत्रविन्यासमिति विद्वान् समासतः ॥ ९ ॥

इति चन्द्रोपरागनिर्णय ।

स्वर्भानुर्मेषगो दृष्टः पीडयेदग्निजीविनः ।
पञ्चालान्शूरसेनांश्च काम्बोजांश्च कलिङ्गजान् ॥ १ ॥
गोपालाः गोमिनो गावाः प्राप्ताश्च सुमहत्पदम् ।
पीड्यन्ते वृषभे राहौ दृग्गोचरमुपागते ॥ २ ॥
मिथुने ग्रहणे वृत्ते यमुनातटवासिनः ।
वरस्त्रियश्च पीड्यन्ते राजानश्च कलाविदः ॥ ३ ॥

Aho ! Shrutgyanam

कर्कटे मकटो राहुः शाकपञ्चालकौरवान् ।
निहन्त्याभीरमल्लांश्च कुरुते चान्नसंक्षयम् ॥ ४ ॥
सिंहे च सिंहिकासूनुराविर्भूतो वनोद्भवान् ।
पुलिन्दान् राजदेशीयान् राज्ञश्च परिपीडयेत् ॥ ५ ॥
हन्यात् कन्याश्रितो राहुः कविलेखकगायकान् ।
अस्मकत्रिपुरान्तर्गान् सस्यानि च विशोषितः ॥ ६ ॥
राहुस्तुलायां संदृष्टो दशार्णान् भारुकच्छजान् ।
अवन्तिसिन्धुजान् हन्ति वणिजश्च परान्त्यजान् ॥ ८ ॥
राहुरष्टमभे दृष्टः विनष्टविषजीविनः ।
मद्रोदुम्बरचोलीयान्नृपांश्चायुधशालिनः ॥ ८ ॥
धनुषि ग्रहणे वृत्ते पाञ्चालांश्च विदेहजान् ।
सायुधा वाजिनोमात्यान् वणिग्वैद्यांश्च पीडयेत् ॥ ९ ॥
वीक्षितो मकरे राहुर्मन्त्रिवर्गांश्च पीडयेत् ।
मन्त्रौषधेषु कुशलान् झषजातिश्च मायुधान् ॥ १० ॥
उपरक्तोघटे दृष्टः हन्यात् सिंहपुरोद्भवान् ।
बर्बरांस्तस्करान् भारवाहांश्च गिरिनिर्म्मितान् ॥ ११ ॥
प्रकाशश्चरमे राशौ राहुः सागरवारिजम् ।
पीडयेद् द्रव्यजातिश्च प्राज्ञांश्चायुधशालिनः ॥ १२ ॥
अपसव्येन चलनं राहोस्तस्करभीतिकृत् ।
सव्येन चलनं भूरि वारिदं क्षेमकारणम् ॥ १३ ॥
सव्येन चलनं राहोश्चौरेभ्यो भयमावहेत् ।
अपसव्येन चलनं क्षेमकृद् भूरिवारिदम् ॥ १४ ॥
स्पर्शे धूमोदले कृष्णः सर्व्वग्रासे तु पिङ्गलः ।
कृष्णे ताम्रप्रभाचापे मोक्षेप्येतत्क्रमो भवेत् ॥ १५ ॥
अयं विभेदो वर्णस्य सम्भाविष्णुर्निसर्गतः ।

Aho ! Shrutgyanam

उक्तक्रमविरोधस्तु शुभाशुभविपाचकः ॥ १६ ॥
श्वेते तमसि विप्राणां पीडाक्षेमसुदृष्टयः ।
अग्निवर्णेऽग्निभीतिश्च पीडादहनजीविनाम् ॥ १७ ॥
हरिते रोगबाहुल्यमीतिभिः सस्यसंक्षयम् ।
अरुणांशुनिभे पीडा विहङ्गानामवग्रहः ॥ १८ ॥
कृष्णवर्णे तमोमूर्त्तौ शूद्राणांव्याधिमादिशेत् ।
हरिद्राभे विषादूर्व्वाश्यामे वा मरकं विदुः ॥ १९ ॥
सापरागौ पुष्पवन्तौ पततो वाप्युदञ्चतः ।
शारदानाञ्च सस्यानां भूपानामन्त्यकारिणः ॥ २० ॥
यदि पञ्चदशाहेन रविन्दूउपरज्यतः
दुर्भिक्षशस्त्रकोपाभ्यां पीड्यते सनृपञ्जगत् ॥ २१ ॥
ग्रहणं गणितानीतं यद्यतिपृष्णं दृश्यते ।
पञ्चग्रहसमायोगे मृते राजा प्रणश्यति ॥ २२ ॥
सर्वोग्रासः शुभैर्दृष्टः कुर्य्याद् दुर्भिक्षामारकौ ।
सग्राहान्न शुभादृष्टिः समयेद् ग्रहणे शुभम् ॥ २३ ॥
म्लेच्छा येकुलयां सनाजलभयो मूर्खाः शृगालासनाः
शौचाचारविवर्ज्जिताश्चधरताः सर्व्वे च निद्रालवः ।
विच्छिन्नावयवाः जनाः विवसनाः गर्भाशयस्थायिनः
क्रव्यादास्तिलमाषजातमभयो राहोस्तु वर्गोभवेत् ॥२४॥
राहोश्चारफलं ब्रूयाद् दुष्टानामपि जन्मिनाम् ।
ऋक्षोपराक्तवर्गे च तद्वर्गोपात्तवत्सरे ॥ २५ ॥

इति राहुचरितं नाम नवमोध्यायः ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि संकीर्णचारितं लघु ।
विशोध्य कलिवर्षेभ्यो मानोदारं विचक्षणः ॥ १ ॥

Aho ! Shrutgyanam

अनियेन विभज्याप्तमश्विन्यादिक्रमादिशेत् ।
स्थानं तत्सप्तसङ्ख्यानां मुनीनां त्रिदिवौकसाम् ॥ २ ॥
प्राच्यां मरीचिस्तदनु वशिष्ठश्चाङ्गिरास्ततः ।
अत्रिरस्मात्पुलस्त्यः स्यादतः पुलहनामवान् ॥
क्रतुरस्मात्परश्चेति क्रमशो मुनयः स्थिताः ॥ ३ ॥
उत्पातपीडिता एते स्ववर्गं पीडयन्ति हि ।
पुष्णन्ति वर्गविमलाः सुस्निग्धाःकिरणोज्वलाः ॥ ४ ॥
प्रथमस्य मुनेर्वर्गे सिद्धमन्त्रौषधाञ्जनाः ।
द्वितीयस्य सकाम्बोजाः धनिनश्च तपोधनाः ॥ ५ ॥
तृतीयस्य द्विजन्मानः पण्डिताः कवयो जनाः ।
चतुर्थस्य पयोवाहा गावश्च वनिता जनाः ॥ ६ ॥
पञ्चमस्य भुजङ्गाश्च पिशाचा राक्षस स्तथा ।
षष्ठस्य फलमूलानि चरमस्य श्रुतिबलाः ॥ ७ ॥
मरीचिर्मासमात्रेण स्ववर्गे पाचयेत् फलम् ।
मासवृद्धिक्रमादन्ये स्ववर्गे फलपाचकाः ॥ ८ ॥

इति सप्तमुनिचारनिर्णयः ।

अगस्त्यस्योदये वाक्यं कविवद्भावको भवेत् ।
अस्यैवास्तमये वाक्यं रवेर्मङ्गलमिष्यते ॥ १ ॥
विषुवच्चयङ्गुलेनादौ लब्धमृक्षादिकं फलम् ।
शोधयेदुदये वाक्यादस्तवाक्ये तु योजयेत् ॥ २ ॥
यदा भानोः स्फुटन्तत्तत् सदृशत्वम्प्रपद्यते ।

---

१ कुलपांसनाजलधियोमूर्खाश्रगालासनाः । २ वत्सरात् ।
३ संकीर्त्ति । ४ मानोदारम् । ५ सकलकसूचलपङ्कविषापहः ।

Aho ! Shrutgyanam

तदागस्त्यमुनिस्तत्तत् क्रियां प्राप्तो भविष्यति ॥ ३ ॥
निशि तमःपटलेऽरुणरश्मिभिर्लघुलयं गमिते यमादिग्गतः ।
उदयति स्फुटिकोज्वलरश्मिमान् सकलकश्चलपङ्कविषापहः ४
परुषः कुरुते रोगान् कपिलोवृष्टिरोधकृत् ।
धूमो गवामशुभकृन्माञ्जिष्ठाभः क्षुधावहः ॥ ५ ॥
स्वल्पमूर्त्तिः पुररोधं कुरुते कुम्भसम्भवः ।
चन्द्रनक्षत्रनियमात्कालवर्गोविनिश्चयः ॥ ६ ॥
उपासितार्घो यदि भूमिपालो नमन्नुपास्ते तदुदीयमानम् ।
स सप्त वर्षाणि करोति राज्यं निरीतिकं वीतरिपुप्रमार्दम्॥७॥
प्राप्नोति विद्यां तमुपाशमानो द्विजः सुपुत्रान् वनिताजनाश्च ।
वैश्यस्तुगां पूरिधनानि शूद्रोयात्रार्थसिद्धिं खलु कर्णधारः॥८॥

इति अगस्त्यचारनिर्णयः ।

———:o:———

विलिप्तीकृत्य भान्विन्दू रवेनाभ्यस्यधीहृते ।
लब्धं पृथक्पृथग्ज्ञात्वा तयोरर्कस्य लाभतः ॥ १ ॥
शोधये द्दवन्मानं गम्भीरं चन्द्रलाभतः ।
भाजयेदुभयं सूत्रैः शिष्टमोजे यदि स्थितम् ॥ २ ॥
परिवेषस्तदार्कस्या द्यदि युग्मे निशाकृतिः ।
तत्तद्दिनाधिपाश्रीय प्रारम्भक्षयदीप्तिमान् ॥ ३ ॥
अथवार्केन्दुलाभाभ्यां ज्ञानदीपहृतो हृतः ।
अवशेषे नतिप्राप्ता स्तयोः ज्ञेयाः स्फुटांशकाः ॥ ४ ॥
निम्बप द्विधास्थाप्य नीलं पूर्व्वत्र निक्षिपेत् ।
द्वयं स्फुटांशैर्विभजे ऽष्टमोजे यदि स्थितम् ॥ ५ ॥
रविन्दोःपरिधी स्याता मन्यथाशून्यसा तयोः ।
एतयोः स्फुटभागेषु नतूर्धविक्षिपेदतः ॥ ६ ॥

Aho ! Shrutgyanam

अभिष्टतिथिभिर्भक्त्वा शिष्टभोजे यादि स्थितम् ।
यदा वा परिवेषः स्यात्तयोरिति वदेद् बुधः ॥ ७ ॥
सर्वव्योमानगामी यः परिवेषः सशोणिमः ।
धनुश्शृंगाटसकटप्रतिमश्च न शोभनः ॥ ८ ॥
सेनाधिपस्य भयकृत् परिवेषो विमण्डलः ।
स्यादिभि श्शस्त्रकोपश्च युवराजनरेन्द्रहा ॥ ९ ॥
निरुद्धे सार्द्धमृक्षेण ग्रहे मण्डलरेखया ।
दिनत्रये न दृष्टिर्वा विग्रहोवा थ मासवः ॥ १० ॥
होरायाः जन्मराशे र्वापतिर्जन्मर्क्षमेववा ।
अन्तर्भवतिचक्रेचेत्तस्य राज्ञोशुभम्भवेत् ॥ ११ ॥
परिवेषगतो भौमः शस्त्राग्निभयदो भवेत् ।
बुध स्सुवृष्टिकृन्मन्त्री लेखकानाञ्च वृद्धिदः ॥ १२ ॥
जीवः पुरोहितामात्यभूपालानां विबाधकः ।
शुक्रः मायायिनां राज्ञां पीडयेदन्नहानिकृत् ॥ १३ ॥
शनिः कुधान्यविध्वंसी जनयेद् वृष्टिमारुतौ ।
राहुर्नृपभयं व्याधिं केतुर्गर्भभयं दिशेत् ॥ १४ ॥
द्वयो निरुद्धयोर्य्युद्धं जानीयात् क्षुद्भयं त्रिषु ।
क्षयो लोकस्य निर्दिष्टो ग्रहेषु चतुरादिषु ॥ १५ ॥
विप्रादीनां क्षयं कुर्य्यात्क्रमात्प्रतिपदादिषु ।
श्रेणी नगरकोशानां पञ्चम्यादिषु नाशकृत् ॥ १६ ॥
अष्टम्यां युवराजस्य परस्त्रीषु च भूभुजां ।
द्वादश्यां नगरक्षोभस्त्रयोदश्यां चमूभयम् ॥ १७ ॥
परतो महिषीनाशः पञ्चदश्यां नृपाशुभम् ।
ऋक्षग्रहवशाज् ज्ञेयः कालवर्गो बलोत्तरः ॥ १८ ॥

इतिपरिवेषनिर्णयः ।

Aho ! Shrutgyanam

अर्केन्दुलाभं[2] सम्पृक्तं षडभ्यस्तं चतुर्विधम् ।
चण्डिसूनुं घटिषेनुं क्रमात् तेषु विनिक्षिपेत् ॥ १ ॥
राज्यभानुतनुमाने भक्त्वा शून्येषु हि क्रमात् ।
जीमूतवातपरिधिशक्रचापोदयस्तदा ॥ २ ॥
ऐन्द्रं धनुर्जले दृष्टं विधत्ते वृष्टिनिग्रहम् ।
भुवि सस्यवधं नाकौ शस्त्रकोपं तरौ रुजः ॥ ३ ॥
अवृष्ट्यां वृष्टिकृद्वृष्ट्यां वृष्टिनुत पूर्वदिग्भवम् ।
यदा पश्चिमदिग्भूतं वृष्टिकृत् शक्रकार्मुकम् ॥ ४ ॥
प्रागादिषु चतुर्दिक्षु निशायां धनुराहितम् ।
भूपसेनाधिपामात्यमन्त्रीणां भयदं क्रमात् ॥५॥
धनुः श्वेतादिवर्णैः स्याद्द्विजादीनां भयावहम् ।
निशि स्वस्थितदिग्जातं निहन्याद्राजवल्लभान् ॥ ६ ॥
इन्द्रचापसमुद्भूतं शुभाशुभफलम्बुधः ।
अर्काधिष्ठितताराया वर्षे काले नचोद्दिशेत् ॥ ७ ॥

इति इन्द्रचापनिर्णयः ।

अर्कोदये निपतितो निर्घातो घातको भवेत् ।
नृपानां धनिनाञ्चापि योधानां वणिजामपि ॥ १ ॥
गोजाविकमुपाहन्यात्तत्तदाप्रहरावधिः ।
द्वितीये शूद्रपौरांश्च विप्रान् राजोपजीविनः ॥ २ ॥
तृतीये वैश्यजीमूतांश्चतुर्थांशे च तस्करान् ।
निहन्त्यस्तमये नीचान् सस्यजातानि पञ्चमे ॥ ३ ॥
षष्ठे पिशाचसङ्घातान् सप्तमे गजवाजिनः ।

---

१ कालवर्गोबालोत्तरम् । २ सम्प्रक्तम् । ३ शून्यषुभिः ।

अष्टमे यायिनो याति यां दिशां हन्ति तद्भवान् ॥ ४ ॥
देवालयेषु पतितः तद्भक्तानुपपीडयेत् ।
पतितो राजसदने विधत्ते राष्ट्रशून्यताम् ॥ ५ ॥
निर्घातपातः फलति चन्द्रनक्षत्रजातिषु ।
मासषट्केन वा नोचेद्वत्सरत्रितये न वा ॥ ६ ॥

इतिनिर्घातपातनिर्णयः ।

उल्काद्विजादिवर्णघ्नी सङ्काशसृग्स्वर्णबाणभा ।
तथैव रूक्षानिर्दिष्टा पतिता चोत्तरादिषु ॥ १ ॥
अनुषङ्गाम्बरे यस्याश्चिरं तिष्ठति दण्डवत् ।
धृतेव तन्तुभिः खेया चोह्यते सा च राजनुत् ॥ २ ॥
लोकसंक्षयमाधत्ते शिखिपिञ्जस्वरुपिणी ।
सर्पवत् सर्पति या च सा स्त्रीणामहिता भवेत् ॥ ३ ॥
छत्रवन्मण्डलाकारा निहन्ति च पुरोहितम् ।
सा धत्ते राष्ट्रशून्यत्वं या स्थिता वंशगुल्मवत् ॥ ४ ॥
या व्यालसूकरसदृक्कसहाविस्फुलिङ्गा ।
खण्डा च निस्वनवती जगतः शुभा सा ॥
उल्का यतोऽभिभवति स्वपुरं बलं वा ।
भूपस्य तस्य तत एव भयं वदन्ति ॥ ५ ॥
उल्का फलति सप्ताहाद्वर्षमात्रेण वा पुनः ।
चन्द्राधिष्ठितनक्षत्रवर्गे वा दृष्टजन्तुषु ॥ ६ ॥

इतिउल्कानिर्णयः ।

---

१ यस्याम् । २ चण्डाञ्च ।

Aho ! Shrutgyanam

दिग्दाहः पूर्व्वदिग्जातः क्षत्रियानां भयावहः ।
आग्नेय्यां शिल्पिबालघ्नो याम्यायामुग्रजातिनुत् ॥ १ ॥
पश्चिमे कर्षकान् वायौ तुरङ्गैः सह तस्करान् ।
पीडयेदुत्तरे विप्रानैशान्यां वणिजांकुलम् ॥ २ ॥
दिग्दाहो वत्सरार्द्धेन मासानां सप्तकेन वा ।
चन्द्राधिष्ठितनक्षत्रवर्गे फलति भूरिशः ॥ ३ ॥

इतिदिग्दाहनिर्णयः ।

प्रथमे प्रहरे दृष्टं गन्धर्व्वनगरन्दिवि ।
राजोपजीविभयदं द्वितीये ब्राह्मणाहितम् ॥ १ ॥
तृतीये वैश्यवंशघ्नं तुरीये चोरनाशनम् ।
अस्य पाकस्त्रिभिः मासैस्तत्तद्देशेषु निर्दिशेत् ॥ २ ॥

इतिगन्धर्व्वनिर्णयः ।

धरित्र्याश्चलनं पापं सौम्यनक्षत्रवारजम् ।
स्ववर्गे[1] शुभदं भूयः परवर्गेषु दोषदम् ॥ १ ॥
केचित्पापफलम्भूमश्चलनं सर्व्वदा जगुः ।
पच्यते चलनं धात्र्याः वत्सराद्वितयान्तरे ॥ २ ॥

इतिभूचलननिर्णयः ।

पञ्च दुर्भिक्षकर्तारः षट् पार्थिवभयप्रदाः ।
सप्त सर्व्वविनाशाय सकृदेकत्रगा ग्रहाः ॥ १ ॥
यस्यां दिशि ग्रहाः सर्व्वे लीयन्ते तिग्मधामनि ।

---

१ सहदम ।

Aho ! Shrutgyanam

व्याधिदुर्भिक्षशस्त्रार्थैस्तस्यां दिशि जनो भवेत् ॥ २ ॥
र वावस्तमिते यत्र देशे ग्रहपरम्परात् ।
दृश्यते तत्र शत्रूणां वत्सरेण नृपोऽन्यथा ॥ ३ ॥
पद्मोत्पलयवादीनां चित्राणामेकनालकम्[१] ।
सम्भवः फलपुष्पाणां यमलत्वञ्च भीतिदम् ॥ ४ ॥
परयोनिषु गच्छन्तो मैथुनं देशनाशनम् ।
अन्यत्र [२]विषयोत्पत्तिर्नृणाञ्चाजातिमैथुनम् ॥ ५ ॥
सर्व्वे दुर्भिक्षकर्तारः स्वजातिपिशितासनाः ।
सर्पमूषिकमार्ज्जारप्रथुरोमविवर्ज्जिताः ॥ ६ ॥
ग्रामारण्यचराः ये च ये दिवा यामिनीचराः ।
ते ते व्यत्ययिताः दृष्टाः दधतो देशशून्यताम् ॥ ७ ॥
गृहतोरणचैत्येषु द्वारेषु च भयप्रदाः ।
पक्षिणां सन्निपातश्च मधुवल्मीकदर्शनम् ॥ ८ ॥
एकत्रानेकदेवानां कुसुमफलदर्शनम् ।
अतिवृद्धिश्च सस्यानां परचक्रागमं वदेत् ॥ ९ ॥
तिलानां मर्द्दनात्तैलमतैलत्वञ्च वा यदा ।
अन्नस्य विरसत्वञ्च तदापि सुमहद्भयम् ॥ १० ॥
प्रावृट्कालं विनान्यत्र समये सप्तवासरम् ।
प्रबन्धेन महावृष्टिः प्रधानमरणं वदेत् ॥ ११ ॥
यदि छाया न दृश्यन्ते विमलेपि विवस्वति ।
पल्लीपतो वा दृश्यन्ते भवेत्तस्मिन्नुपद्रवः ॥ १२ ॥
कुक्कुटाः क्षणदारम्भे हेमन्तादौ च कोकिलाः ।
रुदन्तो देशनाशाय श्येनाश्च प्रतिचक्रगाः ॥ १३ ॥

---

१ एकनालताम् । २ वेषर ।

Aho ! Shrutgyanam

शिशवश्[1] शस्त्रकाष्ठाश्च पाणयस्तु[2] परस्परम् ।
प्रहरच्छिन्दिभिन्दीति निगदन्तो भयप्रदाः ॥ १४ ॥
चित्रितश्चित्ररूपाणां तद्भक्तानां भयप्रदाः ।
विकृतप्रसवस्तत्तद्वर्गशून्यत्वमावहेत् ॥ १५ ॥
अग्नेर्भयङ्करो घोषो नाग्नेरुज्वलनं तथा ।
रसितं लोहभाण्डानां गमनञ्च भयप्रदम् ॥ १६ ॥
अप्राणिनां वचोवीतशरीराणाञ्च गर्ज्जनम् ।
सलिले शोणरेखा[3] च न चिराद् भयमादिशेत् ॥ १७ ॥
सस्यवृक्षजलानाञ्च[4] वृष्टिभूतलभूभृताम् ।
उत्पातः प्रभुनाशाय सर्व्वश्चाद्भूतदर्शनम् ॥ १८ ॥
उन्मत्तानाञ्च या गाथाः शिशूनां भाषितञ्च यत् ।
स्त्रियोयच्चप्रभासन्ते तस्य नास्ति व्यतिक्रमः ॥ १९ ॥
पाशाण्डानां नास्तिकानाञ्च वादः
साध्वाचारप्रोज्झितः क्रोधशीलः ।
ईर्षालू वा विग्रहेच्छु र्नृपो वा
यस्मिन् देशे तस्य नाशो न दूरः ॥ २० ॥
सीमासीमन्तिते सर्व्वप्रदेशे स प्रजापतिः ।
नक्षत्रराशिराश्यार्द्धस्तत्क्षणेन[5] ग्रहान्वितः ॥ २१ ॥
द्वे रेखे दीर्घतो गर्भे तिर्य्यग्वाष्टौ समालिखेत् ।
मध्ये प्रजापतिस्तत्र प्राग्दक्षिणेन तारकः ॥ २२ ॥
तिर्य्यग्मध्यमसूत्रस्य[6] तत्तद्वारं व्रतादिषु ।
तदधस्तारकापूर्व्वं मृक्षं सर्व्वत्र योजयेत् ॥ २३ ॥
त्रयोदश विनाडीभ्भिरधिके घटिका द्वये ।

---

१ श्योनस्वप्रतिचक्रगाः । २ पाणयास्तु । ३ सोणनरेखा । ४ ज्वलानाञ्च । ५ एध्यस्ते । ६ तदद्वारं व्रत्रीधिदाम सु ।

Aho ! Shrutgyanam

ताराश्चलन्त्यतिक्रान्ते न मध्यस्थः प्रजापतिः ॥ २४ ॥
प्रजापतौ समुद्भूते नोत्पातः शस्यते सदा ।
शेषेषु तत्तन्नक्षत्रग्रहयोगैः शुभाशुभम् ॥ २५ ॥
सर्व्वत्रोत्पातजातेषु लोकपालान् सहग्रहान् ।
अभ्यर्च्य तोषयेद्दानै र्गुणिनस्तु यथाधनम् ॥ २६ ॥

कोशातकी विषदकेतकमातुलुङ्ग
दूर्व्वा सहाहरिवधूजलजन्मबिल्वैः ॥
गोरोचना जलसकृत्कटुदुग्धयुक्त
स्नानीय मूष्णसलिलं दुरितापहारी ॥ २७ ॥

भूमिजं भूमिदानेन गोदानेनान्तरीक्षजम् ।
उत्पातं सर्व्वतो जातं हेमदानेन वाजयेत् ॥ २८ ॥

इत्युत्पातनिर्णयः ॥

—०**०—

इति सङ्कीर्णचरितं नामदशमोऽध्यायः ॥

इत्यनवमदर्शिनःस्थविरस्य कृतौ दैवज्ञकामधन्वाचरिति प्रकरणं नाम प्रथमम् ।

यद्भोजराजादिभिरादिधीरै[२]रादेशतन्त्रम् वहुधा वितेने ।
सारं समुद्धृत्य ततःस्फुटार्थमविस्तृतं सम्प्रति सूत्रयामि ॥१॥
राशयो द्वादशाजाद्या अश्विन्यादिनवांघ्रयः ।
अवसानं कुलीराली मीनानामृक्षसन्धयः ॥ २ ॥
मिथुनं सगदावीणं युगलं नरयोषितोः ।

---

१ समुद्भूतौ । २ रादेशतंत्रम्बहुधा ।

Aho ! Shrutgyanam

तुला तुलावान् पुरुषः कुम्भःकुम्भधरो नरः ॥ ३ ॥
सस्यदीपकरा कन्या कन्यानावमधिष्ठिता ।
धनुर्धन्वी पुमानश्वजघनःपरिकीर्त्तितः ॥ ४ ॥
झषो मृगास्यो मकरो मीनो मत्स्ययुगम्भवेत् ।
शेषाःस्वनामसदृशाः सर्व्वे स्वस्थानगोचराः ॥ ५ ॥
ईषद्रक्तश्च धवलो हरितः पाटलद्युतिः ।
पाण्डुर्विचित्रवर्णश्च कृष्णःकनकसन्निभः ॥ ६ ॥
पिङ्गलःकर्बुरश्रीश्च बभ्रूश्च मलिनः क्रमात् ।
मेषादिमीनपर्य्यन्ताः रुचयःपरिकीर्त्तिताः ॥ ७ ॥
क्रूरः सौम्यः पुमान्नारी चरःस्थिरो द्विरूपवान् ।
द्वारं बाह्यश्च गर्भश्च क्रमान् मेषादयःस्मृताः ॥ ८ ॥
चत्वारो राशयोजाद्याः पञ्चमैर्नवमैस्सह ।
प्रागादीनां दिशामीशाःक्रमेण परिकीर्त्तिताः ॥ ९ ॥
नृचतुष्पदकीटाख्याः प्रागादीशा वलोत्तराः ।
द्युरात्रिसन्ध्यावलिनो नृचतुष्पदकीटकाः ॥ १० ॥
कुजशुक्रज्ञचन्द्रार्कसौम्यशुक्रारसूरयः ।
पैङ्गुमन्दसुराचार्य्याः मेषादिभवनेश्वराः ॥ ११ ॥
होरा राश्यर्द्धमोजे तु प्रथमा रश्मिमालिनः ।
पश्चिमा हरिणाङ्कस्य समराशेर्विपर्य्ययात् ॥ १२ ॥
राशित्रिभागो द्रेष्काणः प्रथमो भवनेशितुः ।
द्वितीयः पञ्चमेशस्य तृतीयो नवमेशितुः ॥ १३ ॥

अंशाःनवाजहरिचापभृतामजाद्यः
नक्रादयो वृषवधूमकरांशकाःस्युः ।
तौल्यादयो मिथुनतौलिघटांशकाश्च

---

१ चरस्थास्नुः । २ पंगु ॥

कर्क्यादयश्चरमवृश्चिककर्कटांशाः ॥ १४ ॥

चरास्थिरद्विरूपेषु भवनेषु यथाक्रमम् ।
आदिमध्यान्तगा भागाः स्मृता वर्गोत्तमा बुधैः ॥ १५ ॥
राशिःद्वादशभागात्म/ तत्रभागा यथाक्रमम् ।
तदादिराश्यधीशानां विपश्चिद्भिर्विकल्पितः ॥ १६ ॥
राशिस्तु त्रिंशदंशः कुजरविजसुराचार्य्यशाशाङ्किशुक्राः
राशेरोजस्य बाणेन्द्रियभुजगमुनिप्राणभागाधिनाथाः ।
शुक्रज्ञाचार्य्यसूर्य्यात्मजधरणिसुता युग्मराशेस्तु वायुः
क्षौणीभृद्व्यालजातिस्मरशरमरुतामंशकानामधीशाः ॥१७॥

पृष्ठोदया मिथुनसिंहतुलाधराश्च
सीमन्तिनी कलसवृश्चिकराशयश्च ।
मूर्द्धोदया मकरगोजधनुः कुलीराः
स्यान्मीनराशिरुभयोदयनामधेयः ॥ १८ ॥

तात्कालिकोदयोमूर्त्तिः कल्यश्च हृदयं भवेत् ।
द्वितीयन्तु धनं धान्यं तृतीयं भ्रातृविक्रमौ ॥ १९ ॥
तुरियन्तु सुहृद्वेश्म पातालसुखबन्धवः ।
पञ्चमं पितृधीपुत्राः षष्ठं रुगूवैरवैरिणः ॥ २० ॥
सप्तमं युवतिरागो रन्ध्रं मोहोऽष्टमं मृतिः ।
नवमन्तु तपोभाग्यगुरुधर्म्मगुणोदयः ॥ २१ ॥
दशमं मानकर्म्मज्ञः लाभस्त्वेकादशंच यः ।
द्वादशञ्च व्ययं मानं सर्व्वं स्वाख्यातसूचकम् ॥ २२ ॥
षष्ठं तृतीयदशममेकादशमथापि च ।
विद्यादुपचयस्थानमन्यत्रापचयाभिधा ॥ २३ ॥
सर्व्वस्वस्वामिभिर्य्युक्तं दृष्टं वा बलवद्भवेत् ।
मूर्त्तिर्बुधं गुरुभ्याञ्च युक्तादृष्टा बलोत्तराः ॥ २४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

भाववृद्धिकराः सौम्याः षष्ठादन्यत्र सर्व्वतः ।
अष्टमस्थाश्च कुर्व्वन्ति नरास्ते वृद्धिमायुषः ॥ २५ ॥
विवस्वानल्पचिकुरः पैतृकः समरप्रियः ।
रक्तश्यामश्च पिङ्गाक्षश्चतुरस्रोऽस्थिसारवान् ॥ २६ ॥
भास्वतःपरमोच्चन्तु मेषस्य दशमोंशकः ।
तुलायाः दशमोभागः परमंनीचमिष्यते ॥ २७ ॥
सिंहेविंशतिरंशाःस्यु स्त्रिकोणमपरे गृहम् ।
शत्रुमन्दसितौ मध्यस्सौम्यो मित्राणि वापरे ॥ २८ ॥
पुरुषाणाञ्च राज्ञश्च विवस्वानधिपःस्मृतः ।
ताम्रवर्णः स्वयं वातप्रस्थतापसदर्शनः ॥ २९ ॥

रक्ताधिकःश्लेष्ममरुच्छरीरी
ज्ञानी दयावांश्चपलःक्रियासु ।
प्रांशुः कृशः कोमलवाक् शुभाक्षः
कलानिधिर्मित्रजनप्रियश्च ॥ ३० ॥

चन्द्रस्य परमोच्चन्तु द्वितीयो वृषभेंशकः ।
त्रिकोणं परमोनीचं तृतीयोवृश्चिकेंशकः ॥ ३१ ॥
चन्द्रस्य सुहृदौ सूर्यबुधौ शेषास्तु मध्यमाः ।
स्वेतगुर्य्युवती वैश्यः कापालिकमहेश्वरः ॥ ३२ ॥

नित्यं युवा काञ्चनवर्णदृष्टिः
पित्तात्मकोऽनेकमतिश्च हिंस्रः ।
दुर्द्धर्षणः पद्मदलाग्रवर्णो
मज्जाधिकोवा मनकश्च भौमः ॥ ३३ ॥

उच्चं मकरराशेःस्यादष्टविंशोशकः परम् ।
तावदेवांशको नीचः परमः कर्कटे भवेत् ॥ ३४ ॥

---

१ वातप्रस्थ । २ परतो । ३ नेकमितिश्च ।

Aho ! Shrutgyanam

मेषस्य द्वादशोभागास्त्रिकोणमपरे गृहम् ।
सितासितौ समौ शत्रु[1]ः शशिनः सुहृदः परे ॥ ३५ ॥
कृशोऽनुहग्रपुंसाञ्च क्षत्रियानाञ्च नायकः ।
सामवेदप्रियःशाक्यः भिक्षूणां दर्शने स्थितः ॥ ३६ ॥
त्रिस्थूनमूर्तिर्निपुणः क्रियासु
दूर्वाङ्कुरश्यामतनुश्शिरालः ।
स्थूलच्छविर्म्लृष्टवचःसुवृत्तो
[2]हास्यप्रियचन्द्रसुतः सदैव ॥ ३७ ॥
चन्द्रपुत्रस्य कन्यायामुच्चं पञ्चदशोंशकः ।
त्रिकोणमपरेनीचश्चरमे ता[3]वदंशकः ॥ ३८ ॥
शुक्रार्कौ सुहृदौ शत्रुश्चन्द्रःशेषास्तु मध्यमाः ।
एकदण्डीधरः [4]खर्वःशण्डशूद्राधिपःस्मृतः ॥ ३९ ॥
स्थूलः [5]कफात्मा कनकाभवर्णो मेदोधिको ह्रस्वतनुश्च धीमान्
पिङ्गेक्षणः पिङ्गलमूर्द्धजन्मा गुरुस्सुराणामितिसम्प्रदिष्टः॥४०॥
जीवस्य परमोच्चन्तु कर्कटे पञ्चमोशंकः ।
तावदेवांशको नीचो मकरे परिकीर्तितः ॥ ४१ ॥
हयाङ्गे पञ्चमोभाग स्त्रिकोणमपरेगृहम् ।
शत्रू सौम्यसितौ मध्यो रविजःसुहृदः परे ॥४२॥
[6]ऋग्वेदवत्सलःपुंसां विप्राणाञ्च विभुःस्मृतः ।
नभोग्रहो यतीनान्तु समये भक्तिमान् गुरुः ॥ ४३ ॥
श्यामोविकृष्टपर्वा च कुटिलासितमूर्द्धजः ।
कफानिलात्मवान् शुक्रसारश्च भृगुनन्दनः ॥ ४४ ॥
सप्तविंशांशको मीने परमोच्चं भृगो भवेत् ।

---

१ शातृश्शशिजःसुहृदःपरे । २ भाषप्रियः । ३ तावदंशकः । ४ धर्वसण्ड । ५ कथात्मा । ६ पास्वेदवतलम् ।

Aho ! Shrutgyanam

कन्यायां परमो नीच स्तावद्देवांशकःस्मृतः ॥ ४५ ॥
तुलाया पञ्चमो भागस्त्रिकोणमपरं गृहम् ।
ज्ञार्कौ मित्रे समौभौमगुरूशेषास्त्वरयःस्मृताः ॥ ४३ ॥
यजुर्वेदप्रियः स्त्रीणां विप्राणाञ्च विनायकः ।
भार्गवः सलिलाधीशश्चरकानां मतप्रियः ॥ ४७ ॥

स्थूलद्विजन्मनखलोमयुतःपरेषां
दोषैकसूचनपटुः कृशदीर्घगात्रः ।
स्नायुत्तारः कपिलहङ्मरुतात्मकश्च
कृष्णः प्रभाकरसुतो महिमादिसक्तः ॥ ४८ ॥

तुलायामंशको विंशः परमोच्चंशनेर्भवत् ।
तावद्देवांशको मेषे परमं नीचमिष्यते ॥ ४९ ॥
कुम्भेविंशति रंशाःस्युस्त्रिकोणमपरे गृहम् ।
शुक्रज्ञौ सुहृदौ जीवो मध्यमो ऽन्येतु शत्रवः ॥ ५० ॥
मारुतग्रह एषस्यात् शङ्करोद्भवनायकः ।
सहायः शण्डजातीनां ह्योकानां तुमतप्रियः ॥ ५१ ॥
सर्वेषामेव तत्काले स्थिताः मित्राणि सम्मताः ।
द्वितीयादित्रये वापि दशमादित्रयेपिच ॥ ५२ ॥
अधिमित्रमधिद्वेषि विश्वरूपविवर्जितः ।
यथार्हमिति बोद्धव्यास्तत्कालेपि ग्रहाः क्रमात् ॥ ५३ ॥
रविःशुक्रःकुजाराहु र्यमश्चन्द्रो बुधो गुरुः ।
प्रागादीनां दिशामीशाः क्रमेण परिकीर्तिताः ॥ ५४ ॥
पापाःक्षीणेन्दुरादित्यः क्षमापुत्रश्शनैश्चरः ।
गुरुःशुक्रश्च पूर्णेन्दुः सौम्यः सौम्यास्तु योगतः ॥ ५५ ॥

---

१ तुलायांससमो । २ मित्रम । ३ गुरुस्सोबारिस्मृतो । ४ सलिलादिभिश्च । ५ मारुण ।

Aho ! Shrutgyanam

स्वस्माद्ग्रहः पुरम्पश्येत्पादवृद्ध्या यथाक्रमात् ।
भ्रातृमानौ सुतामात्यौ सुहृद्रन्धे च मन्मथम् ॥ ५६ ॥
भानुः शशीभृगुर्ज्जीवः सौम्यो भौमः शनैश्चरः ।
नित्यं सिद्धबला एते विलोमादुत्तरोत्तरम् ॥ ५७ ॥
ये वक्रगतयःस्निग्धा जित्वरा विमलोज्वलाः ।
ते चेष्टा बलिनो नाम होराविद्भिः प्रकाशिताः ॥ ५८ ॥
उत्तरायणगौ सूर्य्यशशाङ्कौ बलिनौ मतौ ।
दक्षिणायणगाश्चान्ये चेष्टा बलमिदं भवेत् ॥ ५९ ॥

स्वोच्चत्रिकोणभवनांशगतःशुभैश्च
दृष्टःसुहृद्भवनगः स्थितिशक्तियुक्तः ।
स्त्रीक्षेत्रगौ शशिसितावपरे ग्रहाश्च
पुंराशिगाः स्थितिबलप्रबलाः भवन्ति ॥ ६० ॥

प्राक्केन्द्रगौ जीवबुधौकुजार्क्कौ याम्याश्रयौ पश्चिमगश्चकोणः ।
शशाङ्कशुक्रावुदगाश्रयौ च स्यातां परं दिग्बलिनौ क्रमेण ६१

अहनि गुरुसितार्काः शक्तिमन्तो निशायां
शशधरकुजसौराः सर्व्वदा चन्द्रपुत्रः ।
शुभगगनचराः स्युःशुक्लपक्षे बलाढ्याः
वहुलमुपगताश्च क्रूरसंज्ञाः बलाढ्याः ॥ ६२ ॥

स्वकीयाब्दे स्वमासेच स्वचक्रेच स्ववासरे ।
स्वहोरायाश्च सर्व्वेपि ग्रहाःकालबलोत्तराः ॥ ६३ ॥
श्रेष्ठं चेष्टाबलं तत्र स्थानदिक्कालसम्भवम् ।
क्रमेण पादहीनः स्याद्बलम्बलनिरूपणे ॥ ६४ ॥

इति सामान्यादेशविधिर्नाम एकादशोऽध्यायः ॥

---

१ स्वस्मान्ग्रहाः । २ सुतामातौ । ३ सम्भवः ।

Aho ! Shrutgyanam

अतःपरं प्रवक्ष्यामि रहस्यं ज्योतिषागमे ।
आयुर्दायविधानं हि सारं मुनिमतान्तरे ॥ १ ॥
असन्निधौ जन्मपितुश्शशाङ्के सितज्ञयोर्मध्यगतेऽथ केन्द्रे ।
होरामपश्यत्युदये शनौ वा लग्नात्कुजे वा यदि सप्तमस्थे॥२॥

सार्कःशशी भवति पापयुतोऽथवापि
जीवो न लग्नमपि पश्यति नापि चन्द्रम् ।
सार्कं शशाङ्कमपि पश्यति नैव जीवो
जातःपरं भवति जारसुतः तदानीम् ॥ ३ ॥

गुरुक्षेत्रगते चन्द्रे तद्युक्ते चान्यराशिगे ।
तद्द्रेष्काणे तदंशे वा नापरैर्जात इष्यते ॥ ४ ॥
लग्ने यो द्वादशांशःस्यात्तद्दिग्द्वारं गृहम्भवेत् ।
तदीशदिङ्मुखं चापि मणित्थाचार्य्यसम्मतम् ॥ ५ ॥
विलग्नराशिसिद्धा वा ककुष्केन्द्रस्थितस्य वा ।
बलिनो वा भवेदासां द्वारे जननसद्मनः ॥ ६ ॥
लग्नात् षष्ठाष्टमो वापि चन्द्रःपापनिरीक्षितः ।
अर्द्धगास्सूतिकाः शुद्धे मृत्युमद्धा प्रयच्छति ॥ ७ ॥
स एव शुभदृष्टश्चे दष्टाब्दे मृत्युदो मतः ।
दृष्टःसद्भिरसद्भिश्च तदर्द्धाब्दे करोति तत् ॥ ८ ॥
षष्ठाष्टमगतश्चन्द्रो न सर्व्वैर्वा निरीक्ष्यते ।
सौम्ययुक्तोऽथवा सौम्य क्षेत्रगोवान मृत्युकृत् ॥ ९ ॥

पक्षे सिते भवति जन्म यदि क्षपायां
कृष्णेऽथवाऽहनि शुभाशुभवीक्षितोऽपि ।
तच्चन्द्रमा रिपुविनाशगतोऽपि यत्ना
दापत्सु रक्षति पितेव शिशुं निहन्ति ॥ १० ॥

---

१ परे ।

Aho ! Shrutgyanam

सौम्याश्च षष्ठाष्टमगा बलाढ्यैः
पापैस्सुदृष्टाःसदवीक्षिताश्च ।
मासेन मृत्युं जनयन्ति होरा
धिपाश्च पापापजितास्तथास्ते ॥ ११ ॥
अष्टमं शशिनःक्रूरसहितं मरणावहम् ।
लग्ने पापयुते चन्द्रः पञ्चमस्थश्च दोषदः ॥१२॥
द्वादशस्थानगश्चन्द्रः सूर्य्यःसूर्य्यसुतः क्रमात् ।
मातुः पितुश्च सूनोश्च व्याधिं वहति भूरिशः ॥ १३ ॥
भाग्यपूष्याप्यचित्राणां पादेषु च यथाक्रमम् ।
पितुर्मातुश्चतद्भ्रातु र्बालस्य च मृतिर्भवेत् ॥ १४ ॥
पापग्रहयुतश्चद्रो ब्रजेत्तारावं शुभेतरम् ।
मातुर्मरणमाचष्टे पितुश्च दिनकृत्तथा ॥ १५ ॥
गर्भं निहन्ति शीतांशुर्मध्यगो वक्रमन्दयोः ।
सपापदृष्टो होरास्थस्तादृशो जननीमपि ॥ १६ ॥
सन्ध्यायां चन्द्रहोरायां क्रूरराश्यन्तसविनः ।
मृत्युदाश्चन्द्रपापाश्च प्रसेकं केन्द्रसेविनः ॥ १७ ॥
वक्रस्य पूर्वार्धगताश्चपापाः शुभाश्च पार्श्वार्धनिसेविनश्चेत् ।
लग्ने कुलीरेऽपि च वृश्चिके वा जातस्य मृत्युर्न चिरेण दृष्टः१८
क्षीणे शशाङ्के लग्नस्थे पापाश्च केन्द्रसेविनः ।
अष्टमे वाभवेयुस्ते तदाजातो न जीवीत ॥१९॥
क्रूरग्रहयुतश्चन्द्रो व्ययोदयकलत्रगः ।
नष्टसद्वीक्षणः केन्द्रैः शुभवर्ज्जैश्च मृत्युदः ॥२० ॥
चतूराशिगतोवेन्दुः सप्तमस्थोऽपि वाभवेत् ।
क्रूरयोर्मध्ययातश्चेत् तदापि मरणप्रदः ॥ २१ ॥

---

१ शुभेतरात् । २ चक्रचन्द्रयोः ॥

क्रूरेषु सप्तमस्थेषु चन्द्रो लग्नगतो यदि ।
तदापि मरणं प्राप्तं बादरायणसम्मतम् ॥ २२ ॥
चन्द्रे व्ययगते क्षीणे पापैर्लग्नाष्टमाश्रयैः ।
कण्टकैः शुभवर्ज्जैश्च जातस्य मरणं भवेत् ॥ २३ ॥

शशिनि शनिसमेते लग्नगे सोपरागे
क्षितिसुतवति रन्ध्रे नाशमोहुश्च मातुः ।
स्थितवति सबुधे वा सार्कजे वा तथार्के
भवति मरणमुक्तं पूर्व्ववच्छत्रुजातम् ॥ २४ ॥

लग्नाष्टनवमान्तस्थे सोमारार्कशनैश्चरैः ।
अदृष्टैर्गुरुणा शक्तिमता मृत्युमिहादिशेत् ॥ २५ ॥
क्षीणेन्दुर्ल्लग्नपुत्रस्य कामधर्म्मसमाश्रयः ।
नाशकृद्बलिभिर्जीवसितज्ञैरयुतेक्षितः ॥ २६ ॥

यस्मिसंस्थो जननसमये शक्तिमान्योगकर्ता
तत्र प्राप्ते शिशिरकिरणे पापदृष्टे समन्तात् ।
मृत्युर्वाच्यश्शशिनि बलिनि स्वर्क्षगे वापि धीरै ।
[2]बन्धुच्छेदादिभिरपहतःस्यादरिष्टोपघाते ॥२७॥

विवर्द्धमानः शशभृत्समस्तग्रेहःसुदृष्टो विनिहन्त्यरिष्टम् ।
चन्द्रात्तु षष्ठाष्टमसप्तमस्थाः सौम्याश्च रक्षन्ति [3]शिशून् विपापाः २८
होरागतो जन्मपतिः समस्तै र्निरीक्षितः पापबलं क्षिणोति ।
चन्द्रः शुभस्वोच्चगतश्च मित्रवर्गस्थितो वा न करोत्यरिष्टम् २९

होरागतो गुरुर्दशुरुदात्तशक्ति
रेकोपि हन्ति दुरितं शुभदृष्टमूर्त्तिः ।
राहुस्तथैव कथितस्त्रिषडायसंस्थः
सौम्येक्षितोऽपि शुभखेचरसङ्गतोऽपि ॥३०॥

---

१ यमातः । २ बन्धुच्छेदादिभिरुपहतः । ३ शिशुः । ४ रुदाशुरु ।

Aho ! Shrutgyanam

अजे कुलीरे वृषभेऽथवापि लग्नत्वमाप्ते यदि राहवास्ते ।
ब्रूयात्तदा मङ्गलमेव यद्वा भवन्ति योगा बहवः शुभाश्च ३१
आयुस्तैलमिव प्रोक्तं शरीरं वर्त्तिका यथा ।
चेतः प्रदीपवत्तत्र प्रत्युपायास्तु वायुवत् ॥ ३२ ॥
अभावमेवारिष्टानामवसीय बुधः पुरः ।
पश्चादायुर्विधानेषु यथा देशं प्रवर्त्तताम् ॥ ३३ ॥
निर्गच्छतो योनिमुखान्मूर्द्धालग्नमिति स्मृतम् ।
ततः प्रभृति निर्देश्याः क्रमशोऽन्येऽपि राशयः ॥ ३४ ॥
शीर्षोदयस्यपुंसस्तु नियमोऽयं प्रकल्पितः ।
पादोदयस्य तास्त्र्यादे विलोमेन प्रकल्पयेत् ॥ ३५ ॥

मूर्द्धा ललाटास्यतटीकपोलौ
कण्ठोऽर्थ[1] वक्षो हृदयञ्च कुक्षी ।
कट्यूरुजानूनि तथैव जङ्घे
पादौ च लग्नानि भवन्ति भानि ॥ ३६ ॥

ग्रहाणां सदसद्भावैस्तत्तदाश्रितमस्तकम् ।
पुष्टञ्च परिहीनञ्च विनिश्चित्य वदेद्बुधः ॥ ३७ ॥
भानुः पिता शशी माता शुक्रः पत्नी सुतादिकम् ।
गुरुर्विभवरूपादिर्बुधो बुद्धिश्च वैरिणः ॥ ३८ ॥
कुजस्तु सोदरोत्साहौ शनिर्गो किङ्करादिकम् ।
कुमारो लग्नमेव स्या दित्येवंग्रहसङ्ग्रहः ॥ ३९ ॥
नीचाद्भ्रष्टं खगं स्वोच्चमारोहन्तं विनिर्दिशेत् ।
उच्चाद्भ्रष्टं पुनर्नीचमवरोहन्तं[2] मादिशेत् ॥ ४० ॥
भानुः परमनीचस्थो द्वाचत्वारिंशदंशुमान् ।
ततो यथा बलञ्चान्ये[3] विरुपाः नांशवः क्रमात् ॥ ४१ ॥

---

१ वक्षौ । २ मादिशेत् । ३ द्विरुपो ।

Aho ! Shrutgyanam

दलिना नीचपादास्ते परमोच्चेषु वत्सरः ।
उच्चस्थस्य रवेर्दायः सरदामेकविंशतिः ॥ ४२ ॥
एकैकोनात् त्वतः शेषग्रहाणां दाय उच्यते ॥ ४३ ॥
उच्चतो नीचतो वापि शोध्यं वाक्षेप्यमेव वा ।
निःश्चत्य तत्र राश्यंशात् सवर्णान् लग्नवर्द्धितान् ॥ ४३ ॥
नवेन भाजयित्वाथ ताराद्यं तदग्रहस्फुटे ।
योजयेच्छोधयेद्वासौ कर्म्मभूमिस्फुटो भवेत् ॥ ४४ ॥
आरोहतः स्फुटं कृत्वा विलिप्तां नीचराशिभिः ।
समं गुण्यतपः प्राप्तमसुरैर्दिवसादिकम् ॥ ४५ ॥
उच्चभ्रष्टे तथा लब्धमुच्चदायाद्विशोधयेत् ।
लग्ने परमदायन्तु नववर्षाणि निर्दिशेत् ॥ ४६ ॥
लग्नस्फुटोविलिप्तासु[1] ज्ञानपादाहृतं वृथा ।
ज्ञात्वावशेषराश्यर्द्धं पृथक कृत्वा दिवाहृतम् ॥ ४७ ॥
ततस्तन्नीचपाठेन लब्धा वर्षादयः स्मृताः ।
समभे वर्धते पूर्व्वं पश्चार्द्धे परिहीयते ॥ ४८ ॥
ओजे विपर्य्ययात् साध्यं होरादायो भवेदयम् ।
अयमेव विनिर्दिष्टो ऽरिष्टदोषाय सूरिभिः ॥ ४९ ॥
अनुलोमायुषं पिण्डमेवमानीय बुद्धिमान् ।
यथोक्तविपरीतेन प्रतिलोमायुरानयेत् ॥ ५० ॥
तत्कालिकविभागेन क्रमान्नीचोच्चवेश्मनोः ।
अभुक्तेन च भुक्तेन प्रतिलोमायुराहृतम् ॥ ५१ ॥
अनुलोमायुरानेयं निसर्गबलिनां क्रमात् ।
प्रतिलोमायुरानेयं तत्कालबलिभि ग्रहैः ॥ ५२ ॥
अनुलोमायु र्विज्ञेयं मित्रादित्वान्निसर्गतः ।

---

१ विलिप्तानां । २ च्चाण । ३ हृतम् । ४ क्षेत्यम ।

तत्कालिकविधानेन प्रतिलोमायुषि[2] ध्रुवम् ॥ ५३ ॥
निजक्षेत्रस्थिताः स्वर्य्यमित्रोदासीनविद्विषाम् ।
अंशकेषु स्थितांस्त्वेक द्वित्रिपादांशकैर्य्युताः ॥ ५४ ॥
मित्रक्षेत्रस्थिताः स्वर्य्यमित्रोदासीनविद्विषाम् ।
अंशकेषु स्थिताः द्वित्रिचतुःपञ्चांशकैर्य्युताः ॥ ५५ ॥
शत्रुक्षेत्रस्थिताः मित्रक्षेत्रोक्तस्य विपर्य्ययात् ।
लब्धं सजन्तूदासीनक्षेत्रेनैवं विधिर्भवेत् ॥ ५६ ॥
हानावस्तमितास्वार्द्धं सहस्थामदनांशकम् ।
सजन्ति शशिना योगे न किञ्चिदपि खेचराः ॥ ५७ ॥
पुष्पवन्तौ विनैकत्र स्थिताःशेषा यथाक्रमम् ।
हित्वा द्वितीयां बलिनां सङ्ख्यांशोनास्वदायतः ॥ ५८ ॥
सौम्यक्रान्तार्द्धहोरायाः दायस्तु द्विगुणोभवेत् ।
क्रूरक्रान्तार्द्धहोरायाः दायस्तु दलितो भवेत् ॥ ५९ ॥
क्षेप्यम्प्रक्षिप्य सर्व्वत्र दायो शोध्यं विशोधयेत् ।
भुक्ताभुक्तवशादेव मायुः पिण्डद्वयं भवेत् ॥ ६० ॥
उभयोरायुषोः शिष्टमन्तरालंकलीकृतम् ।
जनकेन ततो हृत्वा सम्प्राप्तं दिवसादिकम् ॥ ६१ ॥
प्रतिलोमायुरुद्युक्तं यदि तस्माद्विशोधयेत् ।
ऊनं यदि भवेदेतत् तत्रैव ह नियोजयेत् ॥ ६२ ॥
एवं पुनः पुनः कुर्य्यादनुलोमायुषा सह ।
[4]जनकप्राप्तलाभस्तु यावदेस विशेषताम् ॥ ६३ ॥
प्रतिलोमायुषःपिण्डस्तदाशुद्धइति स्मृतः ।
अनुलोमायुषि प्राज्ञैः क्रियेयं न विधीयते ॥ ६४ ॥

---

१ रुत्तेयम् । २ ध्रुवम् । ३ स्तेत्वक् । ४ जनक । ५ यावदेस्य विशेषताम् ।

Aho ! Shrutgyanam

ऊनायुः पिण्डसङ्ख्यानां यदि छिद्रदशायुतम् ।
तदैव मरणं[2] व्युच्चदशा चेज्जीवति ध्रुवम् ॥ ६५ ॥

इत्यायुर्दायादेशोनाम द्वादशोऽध्यायः।

त्रयोदशोऽध्यायः ।

अतःपरं दशाभेदः समासेन विभाव्यते ।
उभयोरायुषोः कल्या दशाचानुदशा बुधैः ॥ १ ॥
[3]क्षेयं शोध्यं विशुद्धो यो दायो यस्य स्फुटीकृतः ।
सा दशा तस्य विज्ञेया तदुक्तफलशालिनी ॥ २ ॥
पूर्व्वं होरा दशाज्ञेया ततो[4] वार्किस्थितिः क्रमात् ।
[5]दशाविकल्पिते तत्र बहुष्वपि बलीयशः ॥ ३ ॥
बहूनां बलसाम्येतु प्रथमा बहुदायिनः ।
तेषाञ्च साम्ये प्रथमं विश्लिष्टस्य दिवाकरात् ॥ ४ ॥
गलाग्रमेढ्रदेशेषु पापपातोपमृत्युदः ।
सौम्यपातस्तु पीडाकृदन्यत्र निगडादिकम् ॥ ५ ॥
स्वाष्टमानं ग्रहाणान्तु होरादायो विभज्यते ।
परेषां दायभागन्तु होरा न भजति स्वयम् ॥ ६ ॥
भक्त्वा तत्तद्दशाकालमायुः पिण्डेन तत्फलम् ।
तत्तद्दायेषु गुणयेत् सा तदन्तर्द्दशा भवेत् ॥ ७ ॥
क्रूरदशायां क्रूरः प्रविश्य चान्तर्द्दशा यदा कुरुते ।
पुंसः स्यात् सन्देहस्तदारियोगे सदैव महान् ॥ ८ ॥
यो लग्नाधिपतेः शत्रुः लग्नस्यान्तर्दशां गतः ।

---

१ सङ्ख्यातं । २ व्युच्च । ३ त्र्यंक । ४ बलिनोदशा । ५ दैव महान् ।

करोत्यकस्मान्मरणं सत्याचार्य्यमतं यथा ॥ ९ ॥
होरेशाधिष्ठितदशामष्टमेशे उपागते ।
ज्ञेयम् तनूजसन्देहो देहिनां पति मॆण्डलम् ॥ १० ॥
प्रवेशे बलवान् खेटः शुभैर्वा सन्निरीक्षतः ।
सौम्यादिमित्रवर्गस्थो मृत्युकृन्न भवेत् तदा ॥ ११ ॥
अन्तर्दशाधिनाथश्चेद्विबलो बलिना युतः ।
उभौ वा बलहीनौ वा भग्नश्छिद्रदशा भवेत् ॥ १२ ॥
विजयी युधि यद्येको ग्रहयोश्च शुभो यदि ।
तद्दशा न भवेत् कष्टास्वोच्चांशादिजुषो ऽपि च ॥ १३ ॥
भानोर्दशा सुविजयी बहुमानपात्रः
विद्वाननेकसमयस्थजनानुयायी ।
किन्तु ज्वरादिपरिपीडितमूर्त्तिरूपो
वृद्धाङ्गनारतिरपास्तनिजप्रदेशः ॥ १४ ॥
अन्तर्दशां दिनकरस्य शशी प्रपन्नः
कुर्यात् कलत्रविभवं विपुलं यशश्च ।
विन्मित्रतारुधिरवातकफप्रकोपं
प्रस्थानखेदमनुरूपधनादि लाभम् ॥ १५ ॥
प्रभाकृतोऽन्तर्ज्जुशिभार्गवेतु
रुणःशिरःकुक्षिषु खिन्नबुद्धिः ।
पराजितःस्यात् कलहे निजार्थ
हीनश्च किञ्चिद्वनितान्न मित्रम् ॥१६॥
जीवे सहस्रकिरणस्य दशामुपेते
राज्ञःप्रशान्तिरुपभुक्तिरनेकधा च ।
ऊर्व्वोर्य्यथा च सचिवैरर्थ मित्रता च

---

१ दशा २ काष्टा । ३ ऊर्द्धोर्य्यथा । ४ मित्रनाम ।

Aho ! Shrutgyanam

स्थानान्तराणि च धनानि भवन्ति विद्या ॥ १७ ॥
सौम्यो दशामुपगतः खलु तिग्मधाम्नः
सौम्यं बुधेन च जनेन समागमञ्च ।
आर्तिश्च बन्धुभिरगौरजनाभिषङ्गं
पापोद्भवश्च विभवं विदधाति पुंसाम् ॥ १८ ॥
भौमे सरोजदयितस्य दशामुपेते
रक्तं बहुं क्षराति वालनृपैश्च सर्व्वं ।
हेमादिलब्धिरहितैर्बहुभिश्च वैरं
तस्मिन् जयश्च बहुधा शिरसि व्यथा च ॥ १९ ॥
मन्दोदशां पितुरवाप्य करोति सद्य
स्तापं रुजन्निगलनानि च तत्र तत्र ।
अर्थस्य हानिमथमृत्युमगौरसत्वै
र्य्योषिद्विपत्तिमथविप्रतिपत्तिमेव ॥ २० ॥

इति रविदशा ।

चन्द्रस्य दायमुपगम्य विशेषभूपा
योषिज्जनेन रतिमर्थमनेकधा च ।
मन्त्रौषधानि विविधानि तपस्वियोगः
सम्भोगमाशुपतनं कुरुते क्षणेन ॥ २ ॥
सूर्य्यस्तुषारकिरणस्य दशाम्प्रपन्नो
मैत्रीं नृपेन कुरुते मधुरान्नलाभम् ।
स्त्रीलाभमुद्वनयशश्च बहुप्रसिद्धिं
तृष्णोपपीडितमनल्पमनेकधा च ॥ २ ॥
शुक्रः शशाङ्कसमये कुरुते पदार्थ

---

१ तिग्मयाम्नः । २ गौरजनाभि संसम् ।

Aho ! Shrutgyanam

भङ्गं विट्ढवनिताभिरकीर्त्तिराशिम् ।
यात्रोद्भवं व्यसनमूर्ज्जितकुक्षिरोगं
शोकोदयञ्च विरहं स्वजनैः क्षणेन ॥ ३ ॥
प्रालेयरश्मिसमये सुरपूजितोऽयं
स्वस्त्रीसहायतनयोद्भवभीतिजातम् ।
स्थानापयानमवबुद्धिमनर्थजालं
प्राणास्रयव्यसनमप्यपनेतुमिष्टे ॥ ४ ॥
सौम्यः करोति जनकस्य दशासु हर्षं
द्रव्योद्भवञ्च वपुषो गुरु गौरवञ्च ।
विद्धिर्विवादमपकृद्विजयीच तत्र
बन्धुक्षयञ्च विषये च विषादजालम् ॥ ५ ॥
भौमः करोति शशलाञ्छनकालयोगी
भोगोन्नतिञ्च कलहेन च तत्र हानिम् ।
रक्तश्रुतिञ्च सुतसम्मतवस्तुनाशं
खेदञ्च दासशिशुनीचजनोपनीतम् ॥ ६ ॥
मन्दो निशाकरदशोपगतः करोति
दैन्यञ्च भिक्षुजनसङ्गमनङ्गनार्तिंत्तम् ।
जाल्मैश्च मैत्रिमथपापरताञ्च बुद्धिं
किञ्चिद्वसुद्भवमथा स्थिरताञ्च तस्य ॥ ७ ॥

इति चन्द्र दशा ।

शुक्रः स्वकालमुपगम्य महोदयञ्च
सन्मित्रलाभमरिनाशमभिष्टसिद्धिम् ।
प्रख्यातिमंशुकधनाभरणादिलाभं

१ प्रानन्यय ।

Aho ! Shrutgyanam

धर्म्मोदयश्च मधुरादिविशेषभुक्तिम् ॥ १ ॥
शौक्रीं दशामुपगतस्तरणीर्विपत्तिं
पिङ्गाम्बकेन तनुपितभवश्च रोगम् ।
द्रव्यस्य हानिमथमित्रजनेन भेद
मक्ष्णोः रुजश्च नृपविप्रभयश्च धत्ते ॥ २ ॥
चन्द्रस्तु भार्गवदशामुपगम्य धत्ते
वस्तुक्षयं वपुषि कुष्टमनेकधा च ।
वैश्याविरोधमथनिर्गमनश्च देशात्
प्रासादिकश्च रिपुभिः कफवातरोगम् ॥ ३ ॥
जीवः सितस्य समयं प्रतिपद्य सद्योऽ-
वद्यं प्रमाष्टि गुरु गौरवमा[1]तनोति ।
नानामयेन परिपीडनमङ्गनाभि
वैरं ततो व्यसनमाशुपरं विधत्ते ॥ ४ ॥
चन्द्रोभृगोरुपगतः समयं प्रसिद्धं
धीमत्प्रसादमुपभोगमनेकधाच ।
[2]क्लीवैश्च मैत्र्यमघमर्षणमां[3]सलाभं
देहव्रणानि वहुलानि च सन्निधत्ते ॥ ५ ॥
कालं कुजो भृगुसुतस्य गतो विधत्ते
पुत्रोद्भवं शिशुजनेन सदा हि सन्धिम् ।
चापाल्यमिष्टविरहश्च विदेशयात्रां
तत्र स्थितिश्च बहुधामयपीडनश्च ॥ ६ ॥
मन्दः सितेन सहितो बहुदासलाभं
सस्योद्भवश्च नवलोहमयश्च भाण्डम् ।
कुर्य्यान्मुहुःक्षपणकैश्च समागमश्च
द्वेषं बुधेन च जनेन चतुष्पदाप्तिम् ॥ ७ ॥

---

१ माननीति । २ क्लीबेस्वमैत्य । ३ मंशलाभं ।

इति शुक्रदशा ।

जीवःस्वदायमुपगम्य नृपप्रसादं
स्थानान्तरञ्च बहुवित्तसमागमञ्च ।
यानादिलाभमहितस्य जनस्य हानिं
रोगक्षयञ्च कफरोगसमुद्भवञ्च ॥ १ ॥
जैवीं दशामुपगतो दिनकृत्करोति
रोगक्षयं [1]रिपुभयञ्च महाप्रतापम् ।
मानं परिभ्रमणमुज्ज्वलमित्रयोगं
द्रव्यञ्च भूसमुदितं क्षयमाशु तस्य ॥ २ ॥
इन्दुः समेत्य गुरुणा गुरु गौरवञ्च
गौराङ्गनाजनसमागममिष्टलाभम् ।
क्षेत्रस्य हानिमलसप्रकृतिञ्च किञ्चित्
सञ्चारणञ्च बहुशः कुरुते मुदञ्च ॥ ३ ॥
शुक्रः सुरस्य समयं प्रतिपद्य धत्ते
पितज्वरं जठररोगमनेकधा च ।
भूतेर्भयं विभवहानिमनर्थबुद्धिं
बुद्धिक्षयञ्च सह बन्धुजनेन वैरम् ॥ ४ ॥
कुर्य्याद्बुधः सुरगुरोः समयं प्रपन्नः
क्लेशञ्च पाशयमनञ्च महामयञ्च ।
स्थानच्युतिञ्च परिलुप्ति महीप्सितानां
शस्त्रव्रणञ्च मरणव्यसनावसानम् ॥ ५ ॥
भौमः सुरेन्द्रगुरुणा सहितो हितानि
सम्पत्तिमुत्तमगुणञ्च मुदं करोति ।

---

१ रिपुहानिञ्च ॥

Aho ! Shrutgyanam

सच्छत्रचामरगुणं युवराजलक्ष्मी
मक्षीणभूतिविभवञ्च शिरोरुजञ्च ॥ ६ ॥
सौरिर्गुरुं समुपगम्य करोति रोषं
योगं तपस्विमनुजैरकुलोद्भवैश्च ।
वाणिज्यमुष्ट्रविषये विषयापकीर्त्तिं
मूर्त्तिव्रणञ्च सहसा प्रशमञ्च तस्य ॥ ७ ॥
इति जीवदशा ।

सौम्यः स्वकालमुपगम्य बुधोपसेवा
मर्थस्य लाभमुपदर्श्यच तस्य हानिम् ।
सौख्यं स्वबन्धुकलहश्चरणे जयश्च
मन्त्रौषधाध्ययनलाभविधिश्च धत्ते ॥ १ ॥
भानुः शशाङ्कतनयस्य दशां प्रपन्नः
[1]स्वास्थ्यं धियं प्रशमयोगरतिश्च भूयः ।
यात्रां महाधनकरीश्च कलत्रलाभं
किञ्चिच करोति जठरामयपीडनञ्च ॥ २ ॥
चन्द्रः स्वपुत्रसमये समयच्युतिश्च
तोयप्रपातपतनेन भयञ्च भूयः ।
अंशैकहानिमनुजीविजनोपघातं
[2]पत्नीविनाशविपदञ्च मुहुः करोति ॥ ३ ॥
सौम्येनसङ्गमुपेत्य सितः करोति
देवद्विजन्मयतिपूजनलोलचित्तम् ।
स्त्रीभ्यां स्वलाभमधिकं नयनामयञ्च
पुत्रेण केनाचिदनर्थविधिञ्च भूयः ॥ ४ ॥

---

१ स्वास्थ्यन्धियः । २ पत्नी ।

Aho ! Shrutgyanam

जीवो बुधेन सह सङ्गतिमेत्य सस्य-
हानिं विभूतिविपदञ्च तटच्युतिञ्च ।
भार्य्याविषादमनिशं निशि सुप्तिहानिं
नानाभयञ्च कुरुते कुरुते रतिञ्च ॥ ५ ॥
भौमो बुधस्य समये विदधाति पुंसः
क्रूरैः समागममनैः सुलभोपचारम् ।
सञ्चारणञ्च बहुशोभयमायुदेभ्यो
मौर्ख्यञ्च सौख्यविलयञ्च मुहुः करोति ॥ ६ ॥
पङ्गुर्बुधेन सहितः कुरुते नरस्य
शस्त्राग्निभीतिमथदासजनोपघातम् ।
आर्त्तिं क्षुधाञ्च वपुषःशतधामयञ्च
साञ्चिन्तितार्थविलयञ्च महोदरञ्च ॥ ७ ॥

इति बुधदशा ।

भौमः स्वकीयसमये ज्वरशस्त्रवह्नि-
दाहव्रणानि निपुणेन जनेन वैरम् ।
स्वस्थानभङ्गमरणव्यसनं विधत्ते
पितञ्च रक्तमपि कोपयति प्रसह्य ॥ १ ॥
सूर्य्यः कुजेन सह सङ्गममाप्य कुर्य्या
द्रार्य्याञ्च पुत्रविभवञ्च महोदयञ्च ।
तेजः प्रतापमवनीशसमागमञ्च
मन्दाग्नितांञ्च मरुता जनितञ्च रोगम् ॥ २ ॥
सङ्गसमेत्य शशभृद्धरणीसुतेन
बालाङ्गनाजनसमागममर्थलाभम् ।
पुत्रोद्भवञ्च विभवं यशसः प्रवृद्धिं

Aho ! Shrutgyanam

सिद्धिश्च साधुसमयेषु महारतिश्च ॥ ३ ॥
अङ्गारकेन सहितो भृगुनन्दनोऽसौ
माध्यस्थ्यमावहति चेतसि सुस्थितिश्च ।
पीडालवश्च निजबन्धुजनेषु रोषं
शान्तिश्च शान्तमनुजेन समागमश्च ॥ ४ ॥
वक्रस्य कालमुपगम्य गुरुः करोति
सम्पत्तिमिष्टमनुजेषु महोदयश्च ।
सामन्तभूपसचिवैः सह मित्रताञ्च
दानादिधर्म्मनियताश्च मतिं करोति ॥ ५ ॥
प्राप्तो दशां शशिसुतः खलु लोहितस्य
व्यालेभवन्यमृगशङ्करजं भयञ्च ।
विद्वद्विरोधमुदरामयपीड़नञ्च
वित्तक्षयञ्च विदधाति चिराय पुंसः ॥ ६ ॥
भौमस्य कालमुपगम्य शनैश्चरोऽसौ
योगं तपस्विमनुजैः कुरुते क्षणेन ।
द्यूतादिदेवनाविधिश्च मुहुर्मुदश्च
सौन्दर्य्यहानिमपि पादगतञ्च रोगम् ॥ ७ ॥

इति कुजदशा ॥

मन्दो निजं समयमेत्य करोति सद्यः
पीड़ां द्विजन्मनृपमित्रसमुद्भवाञ्च ।
व्याधिं सुतार्थविलयच्च पदावभङ्गं
निःशंसयं प्रकृतिदासजनारिभीतिम् ॥ १ ॥
भानुः शनैश्चरदशां प्रतिपद्य धत्ते
चोराद्भयं व्यसनमिष्टजनस्य शोकम् ।

Aho ! Shrutgyanam

अर्थापहारमनयादपमृत्युमुग्रं
स्त्रीभिर्विरोधमपयानमथ स्वदेशात् ॥ २ ॥
चन्द्रःप्रपद्य रविपुत्रदशां करोति
कुष्ठामयं मरणपीतिमसह्यशोकम् ।
दैन्यं भुजङ्गभयमुग्रमनर्थजालं
शास्त्रार्थविप्लवमनीतिपथावगाहम् ॥ ३ ॥
शुक्रो दिवाकरसुतस्य दशां प्रपन्नः
सन्नीतिलाभमभयञ्च चतुष्पदाप्तिम् ।
दासौपबृंहणमनेकजनोपचार[1][2]
माचारहानिमपि तत्र करोति किञ्चित् ॥ ४ ॥
जीवः समेत्य समयं खररश्मिसूनो
श्चिन्ताकुलश्च हृदयं सदयामवस्थम् ।
स्वस्थानमात्रनिलयश्च लयश्च किञ्चित्
संचिन्तितस्य च विशेषमसौ विधत्ते ॥ ५ ॥
मन्दस्य कालमुपगम्य शशाङ्कपुत्रः
शास्त्रोदयश्च बहुधान्यविशेषलाभम्
नित्योत्सवञ्च विविधप्रमदोपयोगं
योगञ्च वन्यमनुजैः सहसा विधत्ते ॥ ६ ॥
क्ष्मासूनुरर्कतनस्य दशासु धत्ते
मत्तप्रमत्तहृदयं दयिताभिशापम् ।
कोपं निरर्थकमनर्थकरीञ्च वाचं
बुद्धिं विपत्तिमसृगुद्भवरोगजातम् ॥ ७ ॥

इति शनिदशा ॥

---

१ दासोपबृंहण ॥ २ जनोप्रचार ॥

Aho ! Shrutgyanam

अनुलोमदशाभेदमेवं विद्याद्विचक्षणः ।
प्रतिलोमदशाभेदः संक्षेपात्कीर्त्त्यते ऽधुना ॥ १ ॥
दिवाजातस्य विज्ञेया भास्वतः प्रथमा दशा ।
निशाजस्य[1] दशा चेन्दोरन्ते लग्नदशा भवेत् ॥ २ ॥
ततः परं दशाभेदं तत् कालबलिनां क्रमात् ।
[2]उभयत्रापि च होरायां फलं तत्पतिसन्निभम् ॥ ३ ॥
दशाग्रहाणां तत्कालमित्रोदासीनविद्विषाम् ।
श्रेष्ठा मध्याश्च कष्टाश्च क्रमेण परिकीर्त्तिताः ॥ ४ ॥
स्वर्क्षेस्वोच्चांशभाजाञ्च मित्रराशिजुषामपि ।
स्वोच्चाभिलाषिणाञ्चापि दशाः श्रेष्ठा नचापरः ॥ ५ ॥
अनुलोमदशातुल्यमितरं सर्व्वमिष्यते ।
आयुर्द्दायविधानेषु सावनं मानमाचरेत् ॥ ६ ॥
दशारम्भे शशी श्रेष्ठः सुहृद्वर्गगतोऽपि वा ।
निजवर्गगतोवापि स्वोच्चसेवितसत्तमः ॥ ७ ॥
योगे ऽधिमित्रयोरिष्टं पूर्णमस्यन्ततोऽन्यथा ।
योगेऽधिद्विषिणोः पापं पूर्णमस्यन्ततोऽन्यथा ॥ ८ ॥
इति दशाविपाकादेशोनामत्रयोदशोऽध्यायः ।

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि ग्रहगोचरपूर्व्वकम् ।
विधिमिष्टकवर्गस्य वराहमिहिरोदितम् ॥ १ ॥
शीतांशुर्म्मृष्टमन्नं जनयति विचरज्जन्मिनां जन्मराशौ
हर्षं [3]दैत्येयमन्त्री दिवसकरकुजौ शत्रुपक्षस्य वृद्धिम् ।

१ निशाजातस्य ॥ २ उभत्रापि ॥ ३ दैत्येन्द्र ॥

Aho ! Shrutgyanam

हानिं कुर्य्यादसूनां किरणपतिसुतो वञ्चनं सोमसूनु
र्नित्यं निर्धूतबुद्धिं प्रबलरिपुभयं वित्तनाशञ्च जीवः ॥२॥
भेदं मित्रजनैः करोति दिनकृत् क्लेशामयं चन्द्रमाः
सौरिर्वित्तविनाशकृद्धनकरस्तारापतेरात्मजः ।
हानिं भूमिसुतः करोति महतीं वृद्धिं भृगोरात्मजो
ज्ञानं दीपयति द्वितीयभवने जीवो नृणां निर्वृतिम् ॥ ३ ॥
स्थिता भ्रातृस्थाने दिनकरमहीजार्कतनयाः
स्थिरां स्थानप्राप्तिं दधति धनलाभञ्च परमम् ।
विनाशं शत्रूणां जनयति शशी शुक्रसहितः
परं हृत्सन्तापं सुरगुरुबुधावापि कुरुतः ॥ ४ ॥
भूयः शास्त्रविबोधितामपि धियं मूढीकरोत्यङ्गिरा
घोरां दुःखपरम्परां दिनकरः कुक्ष्यामयं चन्द्रमाः ।
लाभं सोमसुतः करोति भृगुजो नित्यं श्रिया सङ्गमं
भौमः शत्रुकरश्चतुर्थभवने सौरिश्च वित्तक्षयम् ॥ ४ ॥
विघ्नं सूर्यसुतःसुतोविमतुलं कामक्षतिं चन्द्रमाः ।
दोषोत्पत्तिमनेकशः क्षितिसुतः प्रायोवियोगं रविः ।
सौभाग्यं विदधाति सोमतनयः पुष्टिं परां भार्गवः
कुर्य्यात्पंचमराशिगः सुरगुरुर्नित्यं नृणां निर्वृतिम् ॥ ६ ॥
स्थिताः षष्ठे राशौ दिनकरमहीजार्कतनयाः
बुधश्चन्द्रश्चैवं प्रचुरंधनलाभं विदधति ।
समृद्धिं शत्रूणां मनसि च विषादं गुरुभृगू
नराणां कुर्व्वन्तौ युवतिकृतवैरञ्च परमम् ॥ ७ ॥
अर्कः सन्तापमन्तर्ज्जनयति शशभृत् सौख्यमत्यन्तलाभं
भौमो रोगाभिवृद्धिं विबुधपतिगुरुर्वस्तुलाभं विधत्ते ।

---

१ शशिशुक्रसहितः । २ विधियं च ॥

सौम्यो योषिद्विवादं विरचयतिभृगुर्विप्रवासं युवत्याः
स्थानभ्रंशं विशेषाद्रचयति रविजः सप्तमर्क्षप्रयातः ॥ ८ ॥
सूर्य्यःशत्रुशतं करोति हृदयातङ्कं शशाङ्को नृणां
भौमो लोहितरोगवृद्धिमतुलं कल्याणमिन्दोः सुतः ।
जीवो जीवविनाशतुल्यविपदं स्त्रीसम्पदं भार्गवः
सौरिःप्राणनिरोधकारणकरःस्यादष्टमक्षेत्रगः ॥ ९ ॥

भानुःकरोत्यामयमिन्दुरार्त्तिं
भौमःशुभं चन्द्रसुतोऽपवादम् ।
जीवःप्रमोदं भृगुरर्थलाभं
मन्दः प्रवासं नवमर्क्षयातः ॥ १० ॥

धत्ते रविर्मुदमनन्तसुखं मृगाङ्कः
क्लेशं कुजः शशिसुतो धनलाभमुच्चैः ।
जीवः परं परिभवं भृगुरर्थलोपं
सौरिस्तु मानसरुजं दशमर्क्षयातः ॥ ११ ॥

एकादशक्षेत्रगताः समस्ताः
कुर्वन्ति वृद्धिं महतीं नराणाम् ।
र्वेऽपि ते द्वादशराशियाताः
न्वन्ति चिन्तामयमुत्ररोगम् ॥ १२ ॥

जन्माष्टमद्वादशराशियातौ
कष्टं विधत्तः[2] खलु राहुकेतू ।
स्यातां शुभौ भ्रातृषडाययातौ
क्षेत्रेषु शेषेषु हि मध्यमौ तौ ॥ १३ ॥

दिनकररुधिरौ प्रवेशकाले
गुरुभृगुजौ भवनस्य मध्ययातौ ।

---

१ धनमाचं । २ दधाते ।

रविसुतशशिनौ गृहावसाने
शशितनयः फलदस्तु सर्वकालम् ॥ १४ ॥
यस्य गोचरफलं प्रमाणतस्तस्य वेधफलमिष्यते नवा ।
प्रायशो न बहुसम्मतं विदः स्थूलमार्गफलदो हि गोचरः॥१५॥
अष्टवर्गपरिशाधितो ग्रहः श्रेष्ठतां समनुवर्त्तते यदा ।
रिष्फगोऽपि हितदःप्रशस्यते योऽष्टवर्गशुभदःसशोभनः॥१६॥
जन्मकाले ग्रहक्रान्तराशेरारभ्य कल्पयेत् ।
शुभस्थानेषु विन्दुश्च रेखास्तदितरेषु च ॥ १७ ॥
द्वयोरन्योन्यविश्लेषादुत्तमाधममध्यमान् ।
कल्पयेच्चारमार्गेण तत्तद्राशिषु खेचरान्[1] ॥ १८ ॥
अर्कः स्वस्माच्च भौमाच्च मन्दाच्च विचरन् शुभः ।
प्रथमायसुहृन्मृत्यु-शैलाज्ञाधर्म्मवस्तुषु ॥ १९ ॥
शुक्रात्कामारिरिःफेषु जीवाद्धयायारिधर्म्मसु ।
चन्द्रात्त्र्याज्ञारिलाभेषु विचरन् शुभदो रविः ॥ २० ॥
बुधादाज्ञात्रिलाभारि व्ययधी धर्म्मगःशुभः ।
लग्नादाज्ञात्रिलाभारि सुहृद्रिःफेषु शोभनः ॥ २१ ॥
स्वस्मादुपचयेष्विन्दुरेकत्र मदनेऽपि च ।
लग्नादुपचयेष्वाराात्[2] सुतधीधर्म्मवस्तुषु ॥ २२ ॥
रवेरस्ते च मृत्यौ च तथैवोपचयेषु च ।
शनेस्त्र्ययारिपुत्रेषु विचरन् शोभनःशशी ॥ २३ ॥
बुधात्प्रथमादिकुशैलसुहृन्नाशायधीस्त्रिषु ।
जीवात्प्रथमकर्म्माद्रि[3] धनलाभाष्टबन्धुषु ।
शुक्राद्धर्म्मसुहृत्पुत्रः सहजायादिकर्म्मसु ॥ २४ ॥
भौमः स्वस्मात्स्वबन्ध्वाज्ञानाशाय प्रथमादिषु ।

---

१ खेचरात् । २ तेसु । ३ कर्म्मद्र ।

Aho ! Shrutgyanam

मातावुपचयेचार्कादिन्दोर्ल्लाभत्रिशत्रुषु ॥ २५ ॥
लग्नात्प्रथमपुत्राय सहजद्वेषिकर्म्मसु ॥
मन्दात्प्रथमधर्म्मायं नाशबन्ध्वाद्रिकर्म्मसु ॥ २६ ॥
बुधाच्चायारिपुत्रेषु गुरोर्द्दिग्विञ्ययामगः ।
शुक्रान्निभनलाभाच्च सप्तेषु चरन् शुभः ॥ २७ ॥
बुधः स्वस्माद्व्ययायाज्ञा त्रिधीधर्म्माद्रिशत्रुषु ।
शुक्रात्त्रिधीसुहृद्धर्म्मनाशाय प्रथमेषु च ॥ २८ ॥
मन्दात्शत्रुव्ययाद्रिषु भौमान्मन्दवदिष्यते ।
लग्नाच्छत्रुस्वलाभाज्ञा प्रथमाष्टसुहृत्सु च ॥ २९ ॥
चन्द्राल्लग्नवदाभूते जीवाद्रिष्फायमृत्युषु ।
षष्ठेपि च रवेर्ध्यायधर्म्मशत्रुव्ययोपगः ॥ ३० ॥
जीवः स्वस्माद्विषत्पुत्रधर्म्मारिःफेतरः शुभः ।
भौमात्प्रथमनाशाद्रिष्वाज्ञालाभसुहृद्गतः ॥ ३१ ॥
सूर्य्याद्रिफारिवर्ज्जेषु लग्नात्सन्ताष्टमेतरः ।
भार्गवाच्छत्रुलाभाज्ञाधर्म्मपुत्रधनाश्रयः ॥ ३२ ॥
चन्द्राद्व्यायास्तधर्म्मस्वेष्वार्केर्द्रिद्धीव्ययत्रिषु ।
बुधात्प्रथमधर्म्माय सुहृत्स्वाज्ञासु[2]तारिषु ॥ ३३ ॥
शुक्रः स्वस्माद्व्ययद्वेषी कामवर्ज्जेषु शोभनः ।
लग्नात्षट दिक्स्मरान्सान्यस्तथाचन्द्राद्व्ययं[3] विना ॥३४॥
मन्दादिषुद्रिषट्सप्तव्ययवर्ज्जेषु शोभनः ।
सूर्य्यार्दष्टा[4]दिरिष्फेषु ध्या[5]ज्ञायात्रिनवान्सगः ॥ ३५ ॥
बुधाद्धर्म्मारिधीलाभतृतीयेषु च शोभनः ।
भौमात्रिनवषट् बन्धुलाभालाभेषु वृद्धिदः ॥ ३६ ॥

१ धदाद्योन । २ सूनारिसु । ३ व्ययांत्रिनाः । ४ द्रष्य ।
५ ध्याज्ञायार्च्चीभ्रणंतगुरोः ।

Aho ! Shrutgyanam

शनिः स्वस्मात्रिधीलाभसपत्नेषु प्रशस्यते ।
भौमाद्व्ययषुव्ययाज्ञासुचन्द्रादायत्रिशत्रुषु ॥ ३७ ॥
शुक्रादायारिरिष्फेषु गुरोर्व्यायान्त्यशत्रुषु ।
सूर्य्यात् स्वनिधनायाज्ञा प्रथमाचलबन्धुषु ॥ ३८ ॥
लग्नाद्‌बन्ध्वायदिक्शत्रुलाभधर्म्मेषु शोभनः ॥ ३९ ॥
मित्रक्षेत्रे स्वनियतगृहे स्वत्रिकोणे स्वतुङ्गे
स्थास्नुःखेटःप्रदिशति फलं पादवृद्ध्या क्रमेण ।
शत्रुक्षेत्रेप्वणुतरफलं नीचगश्चार्कलुप्तः
किञ्चिन्नेष्टं फलति हिततो व्यस्तयात्पापपाकः ॥४०॥

इति अष्टकवर्गादेशोनाम चतुर्दशोऽध्यायः ।

पंचदशोऽध्यायः ।

---ooo---

इदानीं जन्मतत्कालमाश्रितैर्विहगादिभिः ।
प्रकल्पिताः योगगुणाः प्रकाश्यन्ते समासतः ॥ १ ॥
अर्केतरैः शिशिरगो रणफाव्ययस्थै
र्वेस्तूपगैश्च सुनफा शुभसंस्थितैश्च ।
योगो भवेद्धुरुधुरा रहितग्रहाभ्यां
केमद्रुमः प्रकथितो निपुणैरुभाभ्याम् ॥ २ ॥
प्रभुःप्रख्यातकीर्त्तिश्च शीलवान् भव्यवेशवान् ।
विषयेनसुखी साधु रणफायामनामयः ॥ ३ ॥
स्वभुजाकर्म्मणैश्वर्य्यं पार्थिवोवापितत् समः ।
सुनफायांभवेत्ख्यातो यशसा च धिया धनैः ॥ ४ ॥

---

१ तेस्वव्ययाज्ञायाश् । २ सन्ननुतरफलम् ।

त्यागी भोगी सुखी श्रीमान् वाहनाढ्यश्च भृत्यवान् ।
भवेद्धुरुधुराजातो बहुवारम्भविषादवान् ॥ ५ ॥
केमद्रुमसमुद्भूतः प्रेष्यो धनविवर्जितः ।
बलात्मा मलिनो नीचो दुःखितश्च निरुद्यमः ॥ ६ ॥
योगकर्त्तरि भूपुत्रे तस्करः क्रोधिविह्वलः ।
बुधे धनाढ्यो मतिमान् सूक्ष्मदृष्टिःकलासु च ॥ ७ ॥
जीवे गुणगणाधारः पूज्यते च नरेश्वरैः ।
भार्गवे सुखितोभूयः समृद्धिः सर्व्वसम्पदः ॥ ८ ॥
सौरौ तु पूज्यते श्रेष्ठो बहुभृत्यः समुद्यमः ।
मिश्रेषु मिश्रगुणवान् बलिनो वा गुणाधिकाः ॥ ९ ॥
सूर्य्याद्द्वितीयग्रहयुक्तमृक्षं वंशीतिविद्भिः कथितं पुराणैः ।
वाशीततो द्वादशभन्तयोस्तु सौम्यग्रहश्चेच्छुभमस्ति जन्तोः१०
रवौ चन्द्रादिसंयुक्ते यन्त्रज्ञःपापलालसः ।
निपुणःक्रूरचेष्टश्च शत्रुवृत्तिश्च धातुवित् ॥ ११ ॥
चंद्रे भौमाद्रिसंयुक्ते कूटवेदी प्रियंवदः ।
कुलाग्रो वस्तुलक्ष्मज्ञः पुनर्भूतनयःक्रमात् ॥ १२ ॥
भौमे सौम्यादिसंयुक्ते मल्लो रक्षाधिकारवान् ।
सक्तश्च परदारेषु क्रमेण व्यसनान्वितः ॥ १३ ॥
सौम्ये जीवादिसंयुक्ते जातो भवति गेयवित् ।
प्रशस्तवचनोपेतः क्रमेणैवेन्द्रजालवित् ॥ १४ ॥
जीवे शुक्रादिसंयुक्ते प्रशस्तगुणमण्डनः ।
अन्नकारो भवेत् कश्चिद् घटकारोऽपि सम्मतः ॥ १५ ॥
असितेन सितेयुक्ते क्षुद्रनेत्रोऽपिवा भवेत् ।
स्त्रीविकीर्णधनोवापि त्रिभिश्चैवं फलोदयः ॥ १६ ॥

---

१ प्रेक्ष्य । २ तस्कर । ३ सर्व्वसम्पदा । ४ स्त्रिवितीर्ण ।

Aho ! Shrutgyanam

चतुरादिभिरेकस्थैः प्रव्रज्याबलिनोभवेत् ।
बलिभिर्बहुभिर्भव्यः प्रथमातु बलीयसः ॥ १७ ॥
शोभनाश्चतुराद्यास्ते यदि स्युर्बलवर्जिताः ।
परैर्वा वीक्षितास्तत्र केवलादीक्षणार्चिताः ॥ १८ ॥
वाणप्रस्थः कपालीच शाक्य आजीवको यतिः ।
चरकोचेलको भानुप्रभृतीनां व्रताश्रयः ॥ १९ ॥
तत्तद्दशायांप्रव्रज्या दशान्ते च ततश्च्युतिः ।
अनन्यदृष्टैरजितै र्यावज्जीवं व्रताश्रयः ॥ २० ॥
योगकर्ता ग्रहस्तत्र रविलुप्तकरो यदि ।
भक्तिभावाजीवेज्जन्तु र्दीक्षितो न भवेत्तदा ॥ २१ ॥
चन्द्रस्याधिष्ठितं क्षेत्रं वर्गाधीशैः सुहृत्तमैः ।
यदि वीक्षेत धनवांस्तदाजातो भविष्यति ॥ २२ ॥
मध्यास्तैर्धनवत्कल्पः शुभैरुक्तगुणान्वितः
अशुभैःकिञ्चिदूनःस्यादेवंफलविनिश्चयः ॥ २३ ॥
षट्सप्ताष्टमगैरिन्दोरधियोगः शुभग्रहैः ।
तस्मिन् दीर्घायुषःशत्रुजेत्रश्चसुसुखोत्तरः ॥ २४ ॥
शशाङ्को धनवान् लग्नादनीचो धनवान् भवेत् ।
शुभैरुपचयस्थानगतैर्बलसमन्वितैः ॥ २५ ॥

लग्नाच्छशाङ्कादथवा कलत्र—
पुत्रक्षयोःसत्पतियुक्तयोश्च ।
संदृष्टयोर्वापरमा विभूतिः
स्वस्थानमप्येवमुपन्ति[2] केचित् ॥ २६ ॥

पितृमातृद्विषन्मित्रभ्रातस्त्रीभृत्सकाहिताः ।
दशमस्थैर्धनप्राप्तिर्लग्नेन्दुभ्यांविनादिभिः ॥ २७ ॥

---

१ बलीसितु बलेशितु । २ मुसन्ति ।

Aho ! Shrutgyanam

उदयार्कशशाङ्कानां दशमाधिपनिश्रितः ।
योशस्तदीशष्टयैव धनप्राप्ति विनिर्दिशेत् ॥ २८ ॥
स्वर्णोर्णात्तृणभैषजादिभि रिनेचन्द्रे कृशी स्त्रीजलै-
र्भौमे साहसशस्त्रधातुदहनैः सौम्ये कलाकौशलैः ।
जीवे विप्रबुधागमैर्भृगुसुते गोरत्नरौप्यादिभिः
सौरौ तु श्रमभारनीचकरणैरर्थोपलब्धिर्भवेत् ॥ २९ ॥
पुष्णन्ति भावान्मूर्त्तादीन् शुभास्तत्तत्समाश्रयाः ।
पापाभावेग्रहाःषष्ठे सौम्याः शत्रुनिर्वाहिकाः ॥ ३० ॥
सर्व्वेऽपि द्वादशस्थाने व्ययवृद्धिं प्रकुर्व्वते ॥
अष्टमस्थाश्च कुर्व्वन्ति मृत्युवृद्धि विहङ्गमाः ॥ ३१ ॥
मातुःसुखादिसञ्चिन्त्यं रिष्फेनच धनेन च ।
इन्दुना च पितुश्चिन्त्यं पञ्चमेन च भानुना ॥ ३२ ॥

अजे कुलीरे वृषभे च लग्ने
चन्द्रे स्थिते रूपधनैरुपेतः ।
कृष्णे च शेषोदयगे शशाङ्के
जडो दरीद्रो विकलाङ्गदृष्टिः ॥ ३३ ॥

भानौ मेषोदयंप्राप्ते भवेत्तैमिरिको नरः ।
सिंहलग्नगते तस्मिन्निशान्धः परिकीर्त्तितः ॥ ३४ ॥
अर्के कुलीरलग्नस्थे स्याच्च बुद्बुदलोचनः
अर्के शेषेषु लग्नेषु नष्टदृष्टिर्भवेन्नरः ॥ ३५ ॥
व्ययस्थानं गतश्चन्द्रो वामलोचननाशनः ।
द्वादशात्मा तु तत्रस्थो दक्षिणेक्षणनाशनः ॥ ३६ ॥
कुलतुल्यः कुलश्रेष्ठो वन्धुमान्यो धनान्वितः ।
भोगी नृपसमो राजा स्वर्क्षस्थैरेककादिभिः ॥ ३७ ॥

---

१ यांशस्तदीशवा त्यैवं । २ स्त्रन । ३ रिते । ४ बकरणैः ।
५ भावद्वशष्टे । ६ निर्हिका ।

Aho ! Shrutgyanam

विज्ञापनम् ।

बनारससंस्कृतसीरीज़नाम्नी वाराणसेयसंस्कृतपुस्तकावली ।

इयं पुस्तकावली खण्डशो मुद्रिता भवति । अस्यां संस्कृतभाषानिबद्धा बहवः प्राचीना दुर्लभा उत्तमोत्तमाः केचिदङ्गलभाषानुवादसहिताश्च ग्रन्था मुद्रिता भवन्ति । तांश्च ग्रन्थान् काशिकराजकीयसंस्कृतपाठशालीयपण्डिता अन्ये ऽपि विद्वांसः शोधयन्ति । यैर्ग्राहकमहाशयैरियं पुस्तकावली नियमेनाविच्छेदेन संग्राह्या तैस्तदेकैकस्य खण्डस्य ॥।) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देयः । अन्यैर्महाशयैर्यैः कानिचित् खण्डानि संग्राह्याणि तैश्च प्रत्येकं खण्डानां १) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देय इति ॥

तत्र मुद्रिता ग्रन्थाः ।	रु०	आ०
सिद्धान्ततत्त्वविवेकः खण्डानि ५	५	०
अर्थसङ्ग्रहः अंग्रेजीभाषानुवादसहितः	१	०
तन्त्रवार्त्तिकम् खण्डानि १३	१३	०
कात्यायनमहर्षिप्रणीतं शुक्लयजुःप्रातिशाख्यम् सभाष्यं ख० ६	६	०
सांख्यकारिका चन्द्रिकाटीकागौडपादभाष्यसहिता	१	०
वाक्यपदीयम् खण्डानि ४ (प्रथमभागः प्रथमद्वितीयकाण्डे पुण्यराजटीकासहित खण्ड ३ । द्वितीयभागः तृतीयाकाण्डम् हेलाराजटीकासहित खण्ड १)	४	०
रसगङ्गाधरः खण्डानि ९	९	०
परिभाषावृत्तिः खण्डे २	२	०
वैशेषिकदर्शनं किरणावलीटीकासंवलितप्रशस्तपादप्रणीतभाष्यसहितम् खण्डे २	२	०
शिक्षासङ्ग्रहः खण्डानि ५	५	०
नैष्कर्म्यसिद्धिः खण्डानि ४	४	०
महर्षिकात्यायनप्रणीतं शुक्लयजुस्सर्वानुक्रमसूत्रम् सभाष्यम्	३	०
ऋग्वेदीयशौनकप्रातिशाख्यं सभाष्यम् खण्डानि ४	४	०
(बृहत्) वैयाकरणभूषणम् पदार्थदीपिकासहितम् खण्डानि ४	४	०
विवरणोपन्यासः सटीकवाक्यसुधासहितः खण्डे २	२	०

Aho ! Shrutgyanam

तत्त्वदीपनम् (पञ्चपादिकाविवरणस्य व्याख्यानम्) ख० ८	८	०
वेदान्तदीपः (श्रीभगवद्रामानुजाचार्यविरचितः) खण्डानि ३	३	०
टुप्टीका खण्डानि ४	४	०
पातञ्जलदर्शनम्।श्रीरामानन्दयतिकृतमणिप्रभाऽऽख्यवृत्ति स०	१	०
व्याकरणमिताक्षरा । श्रीमदन्नंभट्टप्रणीता खण्डानि० ५	५	०
रसमञ्जरी । व्यङ्ग्यार्थकौमुद्या प्रकाशेन च सहिता ख० ३	३	०
भेदधिक्कारः व्याख्यासहितः श्रीमदप्पयदीक्षितकृत उपक्रमपराक्रमसहितः खण्डे २	२	०
बोधसारो नरहरिकृतः तच्छिष्यदिवाकरकृतटीकया स० ख० ४	४	०
ब्रह्मसूत्रदीपिका श्रीमच्छङ्करानन्दभगवद्भिरचिता ।	१	०
दैवज्ञकामधेनुः अर्थात् प्राचीनज्योतिषग्रन्थः ।	१	०

ब्रजभूषण दास और कम्पनी

चांदनीचौक के उत्तर नई सड़क बनारस ।

Aho ! Shrutgyanam

BENARES SANSKRIT SERIES;
A
COLLECTION OF SANSKRIT WORKS
EDITED BY THE
PANDITS OF THE BENARES SANSKRIT COLLEGE,
UNDER THE SUPERINTENDENCE OF
R. T. H. GRIFFITH, M. A., C. I. E.
AND
G. THIBAUT, PH. D.
No. 104

दैवज्ञकामधेनुः ।

अर्थात्

प्राचीनज्योतिषग्रन्थः ।

लङ्कायाम् हस्तवनगल्यनामकेमहाविहारेऽध्युषितेन
महामहोपाध्यायेन श्रीमताअनवमदर्शीसङ्घराजवरेण सङ्कलिता ॥

DAIWAGNAKÂMADHÊNU,

A Treatise on Astrology

By the very Venerable Anavamadarsi Sangharâja
Mahâsthavira of the Hastavanagalya Parivena, Ceylon
Edited by the Very Rev. C. A. Seelakkhandha
Sthavira of the "Sailabimbârâma" Vihâra,
Dodanduwâ, Ceylon
& *Seetarama Upadhyaya, Sanskrit College Benares.*

Fasciculus II.

BENARES.
Published by the Proprietors Messrs. Braj B. Das & Co.,
AND SOLD BY H. D. GUPTA,
Secretary, Chowkhamba Sanskrit Book Depot.

Printed at T. P. W. & the Vidyâ Vilâs Press.
BENARES.

1905.

Aho ! Shrutgyanam

सूचीपत्रम् ।

गणपाठः	०	४	
गोलप्रकाशः	२	८	०
गंगालहरी	०	१	०
गुरुसारणी	०	४	०
जातकतत्त्वम्	०	१२	०
तत्त्वदीप	०	१	०
तर्कसंग्रहः	०	१	६
दत्तकमीमांसा	०	८	०
धर्मशास्त्रसंग्रहः	०	१	६
धातुपाठः (शिला –))	०	२	०
धातुरूपावली	०	२	०
नैषध चरित नारायणी टीका टाइप	४	०	०
परिभाषापाठः	०	१	०
पाणिनीयशिक्षा भाष्यसहिता	०	२	०
प्रथम परीक्षा	०	२	०
प्रथमपुस्तक हिन्दी	०	१	०
प्रश्नभूषणम् (प्रश्न विचार का बहुत उत्तम ग्रन्थ)	०	४	०
बीजगणितम् (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	८	०
मनोरमा शब्दरत्नसहिता (टाइप)	९	०	०
लघुकौमुदी टिप्पणीसहिता	०	४	०
लघुकौमुदीभाषाटीका	४	०	०
लक्षणावली	०	२	०
लीलावती (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	०	०
वसिष्ठसिद्धान्तः	०	१	६
विष्णुसहस्रनाम	०	१	०
शब्दरूपावली	०	१	६
शृङ्गार सप्तशती	१	८	०
समासचक्रम्	०	१	०
समासचन्द्रिका	०	१	०
सरस्वतीकण्ठाभरणम्	३	०	०
साङ्ख्यचन्द्रिका टिप्पणीसहिता	०	८	०
साङ्ख्यतत्त्वकौमुदी	०	६	०
सिद्धान्तकौमुदी	३	०	०
सिद्धान्तमुक्तावली दिनकरीटिप्पणीसहिता	३	०	०
उपसर्गवृत्ति	०	१	०
क्षेत्रकौमुदी	०	६	०
क्षेत्रसंहित	२	०	०

Aho ! Shrutgyanam

त्रिप्रभृतिभिरुच्चस्थै राजानो नृपवंशज
चतुरादिभिरन्येपि त्रिकोणोपगतैस्तथा ॥ ३८ ॥
एकादिभिररिक्षेत्रे गतैर्नीचगतैरपि ।
दारिद्रो दुःखितो मूर्खो व्याधितो वन्धनान्वितः
अभितप्तो वधं प्राप्तः क्रमाज्जातो भवेन्नरः ।
एकोपि परमोच्चस्थः सुहृद्दृष्टो नृपत्वदः ॥ ४० ॥
ऽयादिभिर्वलिभिःकेन्द्रे गते नृपसुतो नृपः ।
वर्गोत्तमास्थिते चन्द्रे चतुरादिभिरीक्षिते ॥ ४१ ॥
भवत्यन्योऽपि नृपतिः किमुत क्षत्रियोद्भवः ।
वर्गोत्तमांशे लग्नस्य चतुरादिभिरीक्षिते ॥ ४२ ॥
तदापि क्षत्रियो द्वाभ्यां योगाभ्यां नृपराट् भवेत् ।
ऋक्षसन्धिषु सञ्जातो न चिरञ्जीवति ध्रुवम् ॥ ४३ ॥
यदि जीवेत्तदा रुग्णो वाहनाद्यैः समृध्यति ।
वर्गोत्तमगताः क्रूराः शुभगाश्च गुणोतराः ॥ ४४ ॥
वर्गोत्तमं नरं कुर्य्युर्यवनेश्वरदर्शने ।

सर्व्वैश्चरादिनिलयैस्त्रय आश्रयोत्था
रज्जुःक्रमेण मुसलश्च नलस्तृतीयः ।
इर्ष्यान्वितः प्रचुरमानयुतो धनाढ्यः
सर्व्वेऽपि ते स्वकुलगोत्रजने प्रसिद्धाः ॥ ४५ ॥

त्रिकोणगैर्यमाराकैः सर्प्पो दुःखितजन्मदः ।
दलयोगस्तथा[1] जीवसितज्ञैर्भोगिजन्मदः ॥ ४६ ॥
अष्टादशाकृतिः[2] प्राप्ता गदानन्तरकेन्द्रगैः ।
तत्र जातो भवेद्यज्वा धनवानर्थलालसः ॥ ४७ ॥
विलग्नास्तगतैःसर्व्वैः शकटो योग इष्यते ।

---

१ दलयोश्चातथा ॥ २ अष्टादसाकिति ॥

Aho ! Shrutgyanam

तत्रजः शकटाज्जीवी कुत्सितात्मजदारवान् ॥ ४८ ॥
विहङ्गःखचतुर्थस्थैस्तत्र दूतः कलिः प्रियः ।
लग्नपञ्चमधर्म्मस्थैः शृङ्गाटकमतः सुखी ॥ ४९ ॥
शृङ्गाटकविरोधेन हलस्तत्र कृशीबलः ।
सर्व्वकेन्द्रगतः सर्व्वैः पद्मस्तत्र धनी भवेत् ॥ ५० ॥
वापीकेन्द्रेतरस्थैश्च सुखहीनो भवेन्नरः ।
विलग्नादिचतुःस्थैश्च यूपोऽस्मिन् दानतत्परः ॥ ५१ ॥
चतुर्थादिचतुःस्थैश्च चरस्तत्र च हिंस्रकः ।
सप्तमादिचतुःस्थैश्च शक्तिस्तत्र धनी नरः ॥ ५२ ॥
दशमादिचतुःस्थैश्च दण्डस्तत्र प्रियोज्झितः ।
लग्नादिसप्तगैर्नौका तत्र कीर्त्तिः सुखोत्तरः ॥ ५३ ॥
मित्रादिसप्तगैःकूटस्तस्मिन्ननृतभाषणः ।
अस्तादिसप्तगैश्छत्रमित्रस्वजनवत्सलः ॥ ५४ ॥
कर्म्मादिसप्तगैश्चापस्तत्र मध्यसुखी पटुः ।
कण्टकेतरसप्तस्थै रर्द्धचन्द्रः सुरूपवान् ॥ ५५ ॥
लग्नादेकान्तरस्थैश्च चक्रं तत्र नृपाश्रितः ।
अर्थादेकान्तरस्थैश्च समुद्रस्तत्र भोगवान् ॥ ५६ ॥
एवमाकृतिजा योगाः सर्व्वे स्वार्ज्जितसम्पदः ।
यथा यथाग्रहैः सर्व्वैः सप्तस्थानसमाश्रयैः ॥ ५७ ॥
वीणायोगस्तत्रो जातः सङ्गीतकुशलः पटुः ।
क्रमादन्येपि षड्योगाः [3]वीणालक्षणवर्जिताः ॥ ५८ ॥
दामःपाशश्च केदारः शूलं युगञ्च गोलकः ।
पापप्रियश्च दुश्शीलः कृषिकृद् घातकस्तथा ॥ ५९ ॥
दारिद्रो दुःखितश्चेति क्रमात्तेषु फलोदयः ।

---

१ प्रवीकेन्द्रेतुरस्थैश्च ॥ २ स्वरः ॥ ३ वीणालक्षण हानिनां ॥

Aho ! Shrutgyanam

सङ्ख्यायोगा इमे सप्तनाभसार्त्रिशद्दीपिता ॥ ६० ॥
एते सर्व्वदशास्वेव फलन्ति क्रमशोऽधमाः ।

कन्योदयस्थो रविरस्य पुत्रो
मीनस्थितश्चेत्प्रतिहन्ति भार्य्याम् ।
[1]हिनस्ति भौमः सुतमात्मजस्थः
सूर्य्यश्च धर्म्मस्थितवांश्च सप्तम् ॥ ६१ ॥

नित्यं मध्यगतिं प्रेयोश्चपलःसखलितो व्रतः
अस्थिरश्रीः सुहृद्बन्धुश्चरक्षेत्रेषु जातवान् ॥ ६२ ॥
दीर्घसूत्रःक्षमायुक्तः सत्यवादी सुहृत स्थिरः ।
अविनष्टविभूतिश्च स्थिरक्षेत्रेषु जातवान् ॥ ६३ ॥
धीरोदारःकृतज्ञश्च सोद्यमो विविधक्रियः ।
दाता नष्टोदितश्रीश्च द्विस्वभावेषु जातवान् ॥ ६४ ॥
ग्राम्या रण्या[2]ब्जभोत्पन्ना स्तत्तच्छीला भवन्ति हि ।
चन्द्रराशिवशात् ज्ञेयाः लग्नराशिवशादपि ॥ ६५ ॥
तस्करो बहुभोक्ताच पण्डितो वित्तवान् नृपः ।
क्लीवःशूरो दरीद्रश्च दुर्ज्जनःपापरोचकः ।
उग्रःश्रेष्ठश्च मेषादी नवलग्नांशकोद्भवः ॥ ६६ ॥

मन्त्रौषधेषु कुशलःशुभगः कलावान्
शूरो वधूविरहितः सुरतिप्रियश्च ।
ताम्राम्वकःसमराजिच्चतुरोऽटनेषु
निःसूनुरस्थिरधनः प्रथमर्क्षजातः ॥ ६७ ॥
सेवापटुःपरधनः प्रणयी सहिष्णु
द्वैषी विषादवहुलःसलिलप्रियश्च ।
स्त्रीनिर्ज्जितः सकलहःपिशिताशनश्च

---

१ हीनास्थ ॥ २ हो ॥

ह्रीवर्जितः सहजजिद्भरणीषु जातः ॥ ६८ ॥
कान्तःप्रथूरुवदनश्चपलःसमृद्धः
सीतालुराहवजयी दहनोग्रतेजाः ।
त्यागी बधूषु निरतो मतिविप्रयुक्तः
क्लेशासहःसकरुणो दहनाभिजातः ॥ ६९ ॥
क्लेशात्मवांश्च धृतिमान् मतिमान् ककुद्मान्
कन्याप्रजःप्रियवपुर्वृषखेलगामी ।
शूरो गुरुःस्वशनको लघुशाकभोजी
स्त्रीवत्सलःप्रियवचाःपरमेष्ठिजन्मा ॥ ७० ॥
भीरुः क्षमी मृदुतनुः सुभगः कृपावान्
मध्ये विभूतिबहुलो जठराग्निरुग्रः ।
प्राग्बन्धुमित्रविरही पिशुनःशिरालो
मूर्धावरोधविधुरो मृगशीर्षजातः ॥ ७१ ॥
पैशून्यशाठ्यवितथोक्तिपराभिचारः
[2]निस्मानधीः कुटिलपिङ्गलमूर्धजन्मा ।
हास्यप्रियःवरबधूनिरतः कलावा
न्नत्युन्नतानतधनो गिरिशर्क्षजातः ॥ ७२ ॥
[3]सङ्गीतबद्धहृदयो हृदयङ्गमात्मा
द्यूतप्रियो मृदुवचाश्चिरकालभोजी ।
वार्द्धक्यसौख्यबहुलःपृथुतुङ्गधानः
पार्श्वाङ्कितः किल पुनर्व्वसुलब्धजन्मा ॥ ७३ ॥
शास्त्रार्थवित्पटुमतिः सुरतोपचारश्
चातुर्य्यवान् परिषदीङ्गितविद्विवादी ।
मातुर्वियोगविधुरो जनकेनहीन

१ स्वशनतो । २ निस्नानधी । ३ नतानतधनो ।

Aho ! Shrutgyanam

श्वाद्रूपचारनिरतः किल पुष्यजन्मी ॥ ७४ ॥
शीर्षोन्नतः प्रचुरभक्षणबद्धबुद्धि
र्द्वेषोल्वणः क्षपणकः प्रणयीन्द्रमायी ।
उच्चःशिरास्तततनुर्विधुरः शयालु
मूर्खः परस्वसुखितो भुजगर्क्षजन्मा ॥ ७५ ॥
अल्पात्मजः पृथुतनुः समसंहतात्मा
शैलाटवी प्रणयवान् सुखितः सदैव ।
निरामयो युवतियोगविषण्णचेताः
सीमातिगो गुरुजनेषु मघाभिजातः ॥ ७६ ॥
क्रूरो विरूपतरमूर्तिरकार्य्यकोपी
युद्धप्रियःप्रियतमाभिरतःकृतघ्नः ।
वल्यःसुखीतनयवित्तविवर्ज्जितश्च
विप्रप्रियः सुनिपुणश्च भगाभिजातः ॥ ७७
शास्त्रार्थवित्परवधूनिरतो दयावा
नल्पात्मजः कृशतनुः कृतयोगिसङ्घ्यः ।
सौम्यः परोपचरितो मधुराशनश्च
कान्तःसुनीतिनिधिरुत्तरफाल्गुणीजः ॥ ७८ ॥
लज्जान्वितःकुलिशधीर्बहुमाननीयः
कान्तःकृपालुरणघःकटुकाम्बुभोजी ।
सत्वसङ्गवाननुपभोगविनष्टवित्तः
पान्थोलसः प्रमुदितश्च कराभिजातः ॥ ७९ ॥
कामी कटोरहृदयो बहुशिल्पवेदी
काव्यप्रियः सुललितश्च जघन्यबन्धुः ।
प्रांशुःप्रभूतविभवः समयेषु सक्तः
श्यामःप्रभुःकिल चतुर्दशभाभिजातः ॥ ८० ॥

Aho ! Shrutgyanam

देवद्विजन्मयतिपूजनलब्धकीर्तिः
स्त्रीनिर्जितः कफमरुत्प्रकृतिः कृतज्ञः ।
बन्धुःप्रियःसुनिपुणः क्रयविक्रयेषु
[1]रोगालयः समनिधिःखलु वायुजन्मा ॥ ८१ ॥
स्निग्धःसुहृत सुपरुषो रिपुसुप्रसिद्धः
सन्यक्तपुत्रवनितः क्षितिपालपूज्यः ।
अत्यन्तरोगविधुरश्चपलार्थलुब्धः
कृत्यानुगःप्रणिधिरिन्द्रकृशानुजन्मा ॥ ८२ ॥
मित्रप्रियः परमसाधुरप्रौढनिद्रः
प्रच्छन्नपापहृदयः कृशदीर्घगात्रः ।
तीक्ष्णो विरुद्धवनिताप्रणयी नयज्ञः
सेवारतस्तनयवानपिमित्रजातः ॥ ८३ ॥
उग्रःप्रतापनिलयः परदूषणज्ञः
प्रज्ञान्वितःशठमतिर्नृपलब्धवित्तः ।
मिथ्याप्रलापनिपुणःकफवातमूर्त्तिः
पापक्रियासु चतुरःकिल शक्रजातः ॥ ८४ ॥
प्राज्ञःकविर्जनकलब्धधनःसदर्थः
कीर्त्तिप्रियः परिजनानुगतो वचस्वी ।
ह्रस्वः प्रसन्नयुतबन्धुरसत्यसन्धः
स्त्रीनिर्जितःस्वकृपणः किल मूलजातः ॥ ८५ ॥
कर्म्मोद्यतः सलिलजातधनः सवीर्य्यः
त्यागी विशालदशनो गुरुविप्रयुक्तः ।
विद्याविवेकरहितः कलहप्रियश्च
नित्याधनः कुनखवान् सलिलाभिजातः ॥ ८६ ॥

१ रोगायसस्मयनिधिः ।

Aho ! Shrutgyanam

शीतालुराहवजयी बहुबन्धुमित्रो
धर्म्मध्वजो नृपगृहप्रभुरिङ्गितज्ञः ।
शूरो नितान्तकमनीयतनुः कृशाङ्गः
सम्पन्नभूतिरणघः किल विश्वजातः ॥ ८७ ॥
विद्वानगम्यवनितानिरतःप्रकाशो
ज्ञातेन्द्रजालचरितो भुजशक्तिशाली ।
शाठ्यःप्रयोगनिपुणः क्षितिपालमुख्यः
सौभाग्यभाग्यनिलयः श्रवणाभिजातः ॥ ८८ ॥
सत्याधिकःसलिलकेलिरतःकृतघ्नः
श्रीमान् निगूढ़चरितः परपीड़नेच्छुः ।
शौरःशिरालकरणः कविबन्धुलुब्धो
नीचाङ्गनासुनिरतो[2] वसुभप्रजातः ॥ ८९ ॥
क्रूरःपृथूरुचरणःकरभाभकण्ठः
पापप्रियश्च वटरःक्षयवृद्धियुक्तः ।
सत्यालयः सुबहुवृद्धवधूपतिश्च
सर्व्वोन्नतिः सुमतिमान्[3] शतभप्रजातः ॥ ९० ॥
क्षोणीजलब्धविभवः सुभगो यशस्वी
गूढक्रियःक्षणविहीनविवृद्धवित्तः ।
उद्दामवृत्तिरपटुः कविरिङ्गितज्ञः
सद्बन्धुमित्रपुरुषः परुषोजपादः ॥ ९१ ॥
सर्व्वप्रियःसमसुसंहृतगात्रसन्धिः
सन्धानसत्यवचनैः[4]सलिलोदितश्च ।
गोमानतीवकृपणः परदारशक्त
श्चाटूप्रचारकुशलो यमुपान्त्यजातः ॥ ९२ ॥

---

१ रपशु । २ च शुभ । ३ शतपाप्रजातः । ४ सलिलोदितस्च ।

Aho ! Shrutgyanam

स्थूलः सपत्नविजितः पिशुनःकृतघ्नः
कामी पटुः सहजजन्तुषु पश्चिमश्च ।
धीमानतीवसुखितः समरप्रियश्च
शूरो महापरिजनः खलु पौष्णजातः ॥९३॥

एते सर्व्वे गुणाः पूर्णश्चन्द्रो यदि बलोत्तरः ।
नक्षत्रं वा बलाढ्यं स्याद्व्यूनःपुनरन्यथा ॥ ९४ ॥
नन्दादितिथिसञ्जातास्तत्तदाख्या गुणोत्तराः ।
पर्य्यायामासषट्प्रोक्तास्तत्राद्यन्तावशोभनौ ॥ ९५ ॥
प्रीतिः सौभाग्यमायुष्मान् शोभनो वृद्धिरेव च ।
हर्षणश्च शिवः सिद्धः शुभश्चेति नवोत्तमः ॥ ९६ ॥
ब्रह्मा वरीयान् विष्कम्भो वज्रं सिद्धिर्ध्रुवो धृतिः ।
साध्यः शुक्लइतिप्रोक्ता नवयोगास्तुमध्यमाः ॥ ९७ ॥
गण्डातिगण्डौशूलश्च सुकर्म्मा शक्रवैधृतिः ।
परिघश्च व्यतीपातो व्याघातश्च नवाधमाः ॥ ९८
मनस्विनो वरिष्ठेषु जाता मध्येषु मध्यमाः ।
अधमेषु च योगेषु क्रूरा विभववर्ज्जिताः ॥ ९९ ॥
जीवत्यसत्येन ववेप्रजातः परस्वचौर्य्ये न च बालवे तु ।
शास्त्रेणजीवत्यथकौलवे च शस्त्रोपजीवी किल तैतिले च ॥१००
मन्त्रौषधैःस्यादृगरजोपजातो वाणिज्यजीवी किल वाणिजे च
परोपघाते न च विष्टिजन्मा प्रेष्यत्वजीवी सकुनप्रजातः१०१
निधिश्चजीवो च चतुष्पदे स्याद्क्लेशेण जीवत्यपि नागजातः ।
किंस्तुघ्नजातो बहुशिल्पजीवोसेवंभवेयुःकरणस्वभावाः१०२
तत्तद्वारेषु सञ्जातः तत्तद्वारेश्वराकृतिः ।
गुणान् पञ्चाङ्गजानेवमादिशेद्दैवचिन्तकः ॥ १०३ ॥

---

१ भवेश्युःकरणा स्वभावः ।

अश्विनीमृगशिरःपुनर्व्वसुपुष्पमित्रहरिमित्रवायव्रः ।
रेवतीतिनवतारकागणः कीर्त्तितं त्रिदशसात्मनां गणः॥१०४॥
उत्तरत्रयमार्द्रश्च रोहिणी भरणी तथा ।
पूर्व्वत्रयमितिप्राज्ञै मानुषाणां गणःस्मृतः ॥ १०५ ॥
आश्लेषाग्नेयमूलेन्द्रधनिष्ठाशततारकाः ।
चि[1]त्रामघाविशाखाश्च राक्षसा नवतारकाः ॥ १०६ ॥
तुरङ्गश्चाश्वमातङ्गौ मेषीसर्प[2]श्चपन्नगी ।
स्वाबिडालश्च वस्तश्च मार्ज्जारीमूषिकाखवः ॥ १०७ ॥
वृषभो महिषी व्याघ्री लूलायो व्याघ्रकामिनी ।
मृगी तुरङ्गी च शुनी कपिर्धेनुःल्यवङ्गमः ॥ १०८ ॥
नारी च शारमेयश्च नरश्च वृषभस्तथा ।
करिणीतिक्रमादेते अश्विभादेश्च योनयः ॥ १०९ ॥
गणान् योनिश्च वृक्षांश्च तत्तन्नक्षत्रजन्मिनाम् ।
भावसत्वं गुणं शौर्य्यश्चादिशेदैवचिन्तकः ॥ ११० ॥
पुञ्जातकफलं सर्व्वं तुल्यं स्त्रीजातके भवेत् ।
किन्त्वत्र चन्द्रलग्नश्च सप्तमश्च विचार्य्यते ॥ १११ ॥
लग्नत्वं चन्द्रयोगो वा युग्मराशिमुपागतः ।
सती रूपवती नारी गुणिनी ललितोत्तरा ॥ ११२ ॥
ओजराशौ नराकारा दुर्भगा कुलटा तथा ।
अवलस्थेन संदृष्टे भर्ता कापुरुषो भवेत् ॥ ११३ ॥
कुजेऽस्तगे शुभे दृष्टे शैशवे विधवा भवेत् ।
भास्करे धवसंत्यक्ता सौरे कन्येव जीर्य्यते ॥ ११४ ॥
क्रूरैःसप्तमराशिस्थैः विधवैव भवेद्ध्रुवम् ।
मिश्रेऽत्र सौम्यैःपापैश्च पुनर्भूरीति[3]निश्चिता ॥ ११५ ॥

---

१ मित्रा । २ पन्नसी । ३ निश्चिता ।

यद्यत्र घटते स्त्रीषु शुभं वा यदि वा शुभम् ।
तत्तद्भर्तृयुता सा हि चिन्तनीया विपश्चिता ॥ ११६ ॥
हुतभुक् सलिलं शस्त्रं ज्वरश्चामय एव च ।
तर्षःक्षुच्चेति सूर्य्यादिग्रहणां मृत्युहेतवः ॥ ११७ ॥
निधनस्थेन मृत्युःस्यात्तदिदं पश्यता तथा ।
लग्नादि तद्द्रेष्काणस्य योविशस्तद्ग्रहेन वा ॥ ११८ ॥
शीलाश्रयात्पथ्यनिसेवनाच्च मुन्याधिसा सर्व्वजनेषु मैत्र्याः ।
मृत्यूपगप्राणिविमोक्षणाच्च स्वेल्पायुषो जीवितमेधते हि ११९

इति योगगुणादेशोनाम पञ्चदशोऽध्यायः ।

षोड़शोऽध्यायः ।

पूर्व्वत्र जन्मनि कृतानि शुभाशुभानि
जात्याविभाव्ययसुभेदसमाश्रयानि ।
धन्यानराश्च धनिनश्च विभावयन्ति
वक्ष्यामि लक्षणविनिश्चयमल्पमस्मिन् ॥ १ ॥
ऊष्णीषमूष्णेतररश्मिखण्ड
सनानमाविष्कुरुते नरेन्द्रम् ।
बाले त्रिशूलाकृति रुज्ज्वलन्ती
श्रेष्ठां जनानां जनयेत् समृद्धिम् ॥ २ ॥
केशाःप्रशस्ता स्फुटितेतराग्राः
स्निग्धाः सुनीलाः कुटिलावसनाः ।

१ भर्तृसुता । २ चिन्तनीयः । ३ लग्नादि द्रेक्कानस्य । ४ स्वल्पायुषं । ५ जाताविभावय ।

द्विधा विभिन्ना द्विपकुम्भतुल्य
शिरोभवेदन्यवधूरतानाम् ॥ ३ ॥
शतायुषः पञ्च भवन्ति खण्डा
रेखाललाटेषु ततः क्रमेण ।
ऊनं पुनर्विंशतिवत्सराणां
प्रत्येकमायुर्मनुजेषु कुर्य्यात् ॥ ४ ॥
ऋज्वी भवेत् क्रूरतरात्मनो भ्रू-
ररोमशा लोभवतो नरस्य ।
ओष्ठौ तु मध्ये ऽपचितौ सुरक्तौ
सुखेन दन्तावरणौ प्रशस्तौ ॥ ५ ॥
दृष्टिस्तु पक्ष्मलपुटापरदारसक्ता
माकेकरापिशुनमक्षमर्मञ्ज्जुनश्रीः ।
सङ्ग्रामशूरमरुणा सदयश्च नीला
पिङ्गा तु दुष्टमनसः खलु बुद्बुदाभा ॥ ६ ॥
आपीनगण्डौ धनिनं दधाते
मिथ्यावचःसक्तमरोमसौ तौ ।
कण्ठोऽतिदीर्घः कृपणो धनाढ्यः
सुसङ्गतो ह्रस्वतरश्च निःस्वः ॥ ७ ॥
जिह्वा करोति विपुला सुधियं कृशा तु
मूर्खं दृढार्थपरधीः सुखितश्च[2] मृद्वी ।
नासाश्रियं वितनुते शुकतुण्डतुल्या
भूरिव्ययश्च चिपटा चिरजीवितश्च ॥ ८ ॥
आखुश्रवा भवति वाङ्मयपारदृष्टो
दीर्घायुषो भवति रोमसकर्णपाली ।

---

१ निखम ॥ २ सुबणश्च ॥

Aho ! Shrutgyanam

ह्रस्वश्रवा धनयुतःकुटिलस्त्वश्रवाः स्यात्
स्थामोज्झितश्च मृदुलश्रवणो दरीद्रः ॥ ९ ॥
हस्तावकर्म्मकठिनौ वटरौ मृदूच
पादौ स्वरश्च बहुभाषणतोऽप्यभेदः ।
रोम्नां मृदुत्वमसकृद्वपनेपि शक्ति
रल्पाशिनःक्षितिपवल्लभतां विधत्ते ॥ १० ॥
कोशो दीर्घतरः करोति कृपणं ह्रस्वस्तु भूमीश्वरं
स्थूलः श्रीरहितं कृशस्तु सुभगं भोगान्वितो ग्रन्थिमान् ।
अग्रेवामनतः सुतार्थविलयं वक्रोऽन्यथा पुत्रिणां
मज्ञातुल्यफलम्प्रलम्बवृषणो दीर्घायुषं जन्मिनाम् ॥ ११ ॥
मूत्रस्य धारानतिविस्रगन्धा मदाक्षिणा वृत्तगतिर्निवोष्णा ।
निःशब्दनिर्य्याणमुखायतश्रीः नरं विधत्ते बहुवित्तभार्य्यम् १२
ेतःकरोति मधुगन्धमनन्तभोगं मैरेयगन्धमतिधूर्त्तमृपीसविश्रम् ।
श्वेतं धनाढ्यमसितं कृपणं सुरक्तं द्रेशोल्वणश्च सुभरं द्रुतमर्थवन्तम् १३
स्फीक् मण्डूकनिभाकरोति नृपतिं पीठोपमा निर्धनं
स्थूलं मध्यमराजिकं बहुभुजं निःस्वं कृशोसस्थिनी ।
ब्रह्मघ्नं विषमश्च जानुयुगलं जङ्घाकुरङ्गोपमा
गोत्रश्रेष्ठतरं तदङ्गविहितिं नूनं पुनःसन्धयः ॥ १४ ॥
करचरणतलं मृत्पाण्डुरं स्वेदयुक्तं
विपुलमसितरेखं श्लिष्टरङ्गुलीकम् ।
सितकरनखराङ्कं भृत्यकृत्यं विधत्ते
निगदितविपरीतं भूरिभृत्यार्थभोगम् ॥ १५ ॥
एकत्र कूपे नृपमेकरोम द्वे श्रोत्रियं त्रीणिकला प्रवीणम् ।
चत्वारिनिःस्वं जनयन्तिखर्व्वःशठोऽतिमूर्खःकृशदीर्घदेहः १६
तर्ज्जन्यान्तगता करोत्यविहता रेखाशतं वत्सरान्
विंशत्यूनमतःक्रमेण कुरुते मध्यङ्गुली प्रान्तगा ।

Aho ! Shrutgyanam

श्रीरेखयापरानतो नृपरतो वाण्या गुणोल्लासिनी
ता विश्लिष्टतराः परस्परमिहश्रेयः परं कुर्व्वते ॥ १७ ॥
आमध्यमुद्गतवतीमनिबन्धनस्तु
रेखा करे मतियुतं बलिनञ्च धत्ते ।
सामत्स्य पुच्छसदृशा यदि मूलतःस्या
दग्रेच कुन्तसदृशा कुरुते च भूपम् ॥ १८ ॥

सर्व्वाङ्गुली मूलभवोर्द्धरेखा पर्व्वण्यधस्तान्मुनिभिः प्रशस्ता ।
आरोग्यनामस्तुतिलाभपुत्रान् धत्तेकनिष्ठादिभवा क्रमेण ॥१९॥
यवाकृतिःपाणितलस्य मूले चाङ्गुष्ठपर्व्वस्वपि सुप्रसस्ता ।
अपर्व्वपर्व्वण्यपि चाङ्गुलीनामग्रेषु वक्राकृतयश्च भद्राः ॥२०॥
अङ्गुष्ठमूले जनयन्ति पुत्रान् रेखा बृहत्यस्तनुकाश्च पुत्रीः ।
सहोदराः स्युःकरभस्य मूले तस्यैव चान्ये वनिता विकल्प्या२१
कनिष्ठिका कोटिरनामिकायाः तृतीयपर्व्वस्य रुषादतीता ।
धत्तेच भूपं तुलितास्ववर्गश्रेष्ठं तदूनासुतवित्तहीनम् ॥ २२ ॥
सर्व्वाङ्गुलीष्वग्रभवोर्द्धरेखा कुर्य्याद्धराधीश्वरवल्लभत्वम् ।
स्थूलास्तथाल्पा कृपणं हि रेखा वध्मस्तपीडां निपुणञ्च सूक्ष्मा २३
अम्भोजचक्रां कुसकुण्डलानां दम्भोलिशङ्खध्वजवारिजानाम् ।
चिह्नानि कुर्य्युःमनुजं नरेशं पादेपि चैवं विहितोर्ध्वरेखा ॥२४॥
त्रयो विसालाः गम्भीराः ह्रस्वाश्चत्वार ईप्सिताः ।
पञ्च दीर्घाश्च सूक्ष्माश्च षट् तुङ्गाः सप्त लोहिताः ॥ २५ ॥
धत्ते विशालां कटिमिष्टभार्य्या मुरोविशालं विजयाश्रियाङ्कम् ।
मूर्द्धा विशालो धनधान्यभाजं धीराविशालत्रयमेवमाहुः ॥२६॥
स्वरो गभीरो मधुरान्नभाजं नाभी गभीरा पितृवित्तभाजम् ।
सत्वं गभीरं जयिनं विधत्ते धीरा गभीरत्रयमेव माहुः ॥ २७ ॥

---

१ नामस्तुटि । २ सूत्रशस्ता ।

ह्रस्वो गलो गुणधनं कुरुते च पृष्ठं
ह्रस्वं प्रशस्तशयनं मदनध्वजस्तु ।
ह्रस्वोनरेश्वरमितः प्रबलाच जङ्घा
ह्रस्वेति खर्व्वकचतुष्टयमेवमाहुः ॥ २८ ॥

सुदीर्घवाहुश्चिरकालजीवी सुदीर्घनेत्रः प्रचुरार्थलाभी ।
सुदीर्घनासास्थिरमित्रवन्धुर्ल्लोकप्रियो दीर्घहनुःप्रदिष्टः ॥२९॥
दीर्घाङ्गुलिकःपुरुषो बहुयोषित् समागमः ।
इत्येवं पञ्चदीर्घाणि प्रशस्तानि विचक्षणैः ॥ ३० ॥
सूक्ष्मान्यङ्गुलिपर्व्वाणि स्थिरचित्तं प्रकुर्व्वते ।
सूक्ष्माःकेशाश्चरोमाणि जनयन्ति सुभागिनम् ॥ ३१ ॥
सूक्ष्ममांसत्वचश्चापि दधते मृदु मानसम् ।
इत्येवं पञ्चसूक्ष्मानि निर्दिष्टानि पुरातनैः ॥ ३२ ॥
कक्षःकुक्षिश्च वक्षश्च नासा स्कन्धो ललाटिका ।
उन्नता वीर्य्यधान्यश्रीः सुहृच्छक्तिसुखप्रदाः ॥ ३३ ॥
रक्तपाणिर्धनाढ्यःस्या द्रक्तपादश्च यानवान् ।
रक्तनेत्रःश्रिया युक्तो रक्ततालुःसुभोजनः ॥ ३४ ॥
बहुमित्रो रक्तनखो रक्तजिह्वश्च बुद्धिमान् ।
रक्ताधरो वचस्वी स्यादित्येवं रक्तसप्तकम् ॥ ३५ ॥

इति पुरुषलक्षणम् ।

ललाटे दृश्यते यस्याः तिलकं कृष्णपिङ्गलम् ।
वज्राकृतिर्य्यात्रिमला सा स्यादैश्वर्य्यभाजनम् ॥ ३६ ॥
वामे पयोधरे यस्याः हस्ते कर्णे गलेऽपि वा ।
माषकस्तिलको वापि सापि लोकेन पूज्यते ॥ ३७ ॥

---

१ स्थिर मित्रं ।

Aho ! Shrutgyanam

यस्याः सकूपौ हसने कपोलौ
सश्मश्रुकं वा यदि चोत्तरोष्ठम् ।
उत्पिण्डिका रोमवती च जङ्घा
सा दैवहीना कुलटापतिद्विट् ॥ ३८ ॥
यस्याःकटङ्कारवती गतिश्च
होत्रीव भूमिं पदयोर्निधाने ।
हस्ताश्च पादाश्च भवन्ति शुक्काः
सा स्यादधन्या विनयोज्झिता च ॥ ३९ ॥

अनामिका या पदयोः प्रयाणे स्पृशेन्नभूमिं युवती सभूतिं ।
निहत्य भर्तृद्वितयं क्रमेण तृतीयमासाद्य भवेत् स्थिरा सा४०
अङ्गुष्ठतो यच्चरणे सुदीर्घा प्रदेशिनी सा न पतिं रमेत ।
पार्श्वद्वये सुप्रकटा यदीये रोमावली सापि च भर्तृहीना॥४१॥
आवृत्तरोमाणि ककाटिकायाः पृष्ठस्य सन्धौ प्रकटाणि यस्याः ।
सा भोगहोना पतिविप्रयुक्ताः नाभौ तटा चेन्मुनिभिःप्रशस्ता॥४२॥
काकस्वरा सापि च काकजङ्घा निस्निग्धकेशद्विजलोमयुक्ता ।
ह्रस्वाङ्गुलीश्छिद्रपुटाञ्जलीश्च भर्तुर्विधत्ते भवनं हि शून्यम् ४३
उच्छूनयोनिर्द्रविणेन हीना नीचा च शुष्कस्मरमन्दिरा च ।
अश्वत्थपर्णोपमयोनिबिम्बा पीनोरुगण्डा च वधूःप्रशस्ता ॥४४॥
चुच्छुन्दरीगन्धनिधिस्तुयोनि र्नाभिः प्रशस्ता पटुभिःपुराणैः ।
आवृत्तकण्ठा चलशस्त्रिरेखा•भर्वेद्विशेषेण पतीव्रता सा ॥ ४५ ॥

लक्षणान्यवशेषाणि पुंलक्षणवदादिशेत् ।
अस्मिन्नतिशया दोषाः प्रोक्ताःमह्लादनोदिताः ॥ ४६ ॥
विपच्यते च यस्याद्यौ सजङ्घं पदपृष्ठकम् ।
द्वीतीये सक्थिजानूनि तृतीये कटिगुह्यजम् ॥ ४७ ॥

---

१ ह्रस्वाङ्गुलीस्छिद्रपुटाञ्जलीश्च ।

चतुर्थे सौदरौ हस्तौ सपृष्ठं हृदयं ततः ।
षष्ठे कण्ठःसकक्षास्यः सकपोलश्रुतिःपरम् ॥ ४८ ॥
अष्टमे घ्राणदन्तोष्ठाः नवमे भ्रूललाटिकाः ।
दशमे तु शिरःतत्तदङ्गकेषु च लोमजम् ॥ ४९ ॥
पाणियुग्मे च या रेखा पदयुग्मे च कीर्त्तिता ।
यानि लक्ष्मानि दुष्टश्च तत्तत्फलति सर्वदा ॥ ५० ॥
भूवारिवह्निवायूनां छायापीतारुणासिता ।
पाण्डरश्चेति तत्रान्ते न शुभे तु शुभे परे ॥ ५१ ॥

इत्याङ्गलक्षणादेशोनाम षोडशोऽध्यायः ।

सप्तदशोऽध्यायः ।

माषकस्तिलकःस्यन्दः प्लोष्यश्चकण्डुतीस्रथ ।
प्रकाश्यन्ते समासेन पञ्चोत्पाताःशरीरजाः ॥ १ ॥
गर्भोत्थितस्य तल्लक्ष्म प्रकृतं तदुदाहृतम् ।
प्रकृत्यन्यत्वमुत्पातः पञ्चैते प्रमुखास्ततः ॥ २ ॥
धनक्षयं वितनुते माषको दक्षिणे पदे ।
स्त्रीविप्रयोगं वामे तु जङ्घयोर्र्थसम्पदौ ॥ ३ ॥
जान्वौ क्षेमारिवृद्धिश्च सक्थौ स्त्रीलाभविग्रहौ ।
वृषणे धनधान्ये च कोशे कोशजयोजयौ ॥ ४ ॥
वन्धुवित्तविलोपौ च द्वयोर्ज्जघनभागयौ ।
सव्योदरे रिपुत्रासः श्रेयो वामोदरे भवेत् ॥ ५ ॥
स्तनयोरर्थमित्राप्तिः पार्श्वयोःमरणामयौ ।
कक्षयोःशोकदैन्येच पृष्ठयोरश्रुपीडनम् ॥ ६ ॥

Aho ! Shrutgyanam

दक्षहस्तेऽर्थलोपश्च स्थानभ्रंशस्ततोऽन्यतः ।
प्रकोष्ठयोर्जयालाभौ शोकहर्षौ तदूर्ध्वयोः ॥ ७ ॥
अंशयोःकीर्त्तिलाभौ च कण्ठे विग्रहनिग्रहौ ।
कृकाटिकायाश्चदक्षांशे शोको रोगो परांशके ॥ ८ ॥
चुबुके भीतिदारिद्रौ गण्डयोर्भोगदुर्यशः ।
अधरोष्ठे मनस्तापं प्रियं स्यादुत्तरोधरे ॥ ९ ॥
नासिकापुटयोर्ज्जातौ तापनिर्वेदकारिणौ ।
दृशोराधिसमाधी च कर्णयोःप्रियविप्रयौ ॥ १० ॥
भ्रुवोःस्त्रीकलहक्षेपौ शङ्खयोर्विजयो द्वयोः ।
ललाटे व्याधिदारिद्रौ मूर्ध्नि श्रीविभवौ क्रमात् ॥ ११ ॥

इतिमाषकोत्पातादेशः ।

दक्षपादतले जातस्तिलकस्तनयापहः ।
वामे निहन्ति वनितां कुरुते च सुहृत्क्षयम् ॥ १२ ॥
असितो वा सितोवापि पीतो वा रक्त एव वा ।
पुष्परूपो नखेष्वङ्कः स उत्पात उदाहृतः ॥ १३ ॥
रक्तासितावधिफलौ[1] पीतश्वेता तु मध्यमौ ।
दक्षिणे चरणाङ्गुष्ठे कलङ्को वित्तलोपकृत् ॥ १४ ॥
द्वितीये विग्रहं प्राहु स्तृतीयं मानसामयम् ॥
चतुर्थे प्रियमाचष्टे पञ्चमे पुत्रसम्पदम् ॥ १५ ॥
यथोक्तविपरीतेन वामपादे फलं वदेत् ।
पादयोर्विपरीतेन फलं[2] करनखेषु च ॥ १६ ॥
पीडां पितुश्च मातुश्च पादयोःपृष्ठजां वदेत् ।
जङ्घयोर्व्यसनानन्दौ सक्थ्योर[3]ग्निभयं द्वयोः ॥ १७ ॥

---

१ वधिफलौ । २ करणकेषु । ३ रग्निभयोदयो ।

Aho ! Shrutgyanam

गुह्ये राजभयं प्राहुर्ज्जघने स्थानविच्युतिम् ।
उदरे कीर्त्तिनिर्वेदौ पार्श्वयोर्व्यसनामयौ ॥ १८ ॥
स्तनयोःप्रीतिशोकौ च वक्षसि प्रियसङ्गमः ।
कक्षयोरर्थलाभञ्च दासहानिञ्च निर्दिशेत् ॥ १९ ॥
पृष्ठयोश्चौरभीतिञ्च लाभःस्याद्वाहनस्य च ॥
हस्तयुग्मोदरे वस्तुहानिर्बन्धुसमागमः ॥ २० ॥
तयोरेव च पृष्ठे तु श्रियश्च विपदं वदेत् ।
मित्रलाभश्च पुत्राप्ति मुभयोर्हस्तदण्डयोः ॥ २१ ॥
ककाटिकायां क्षेमं स्यात् कण्ठे यात्रा विधीयते ।
गण्डयोर्नष्टलाभश्च लब्धहानिश्च निश्चयात् ॥ २२ ॥
चुबुके बाष्पपर्य्यन्तं शोकमेवं विनिर्द्दिशेत् ।
नासिकायां वपुर्बाहु दृशोरप्रियदर्शनम् ॥ २३ ॥
कर्णयोःप्रीतिवाक्यश्च बन्धुनाशश्च निर्द्दिशेत् ।
ललाटे राजसम्मानमुत्तमाङ्गे धनागमम् ॥ २४ ॥
यावदुत्पातविलयस्तावदेव फलोदयः ।
ददुरुणिक्रिमिरेखायाः गोपमार्गोप्यदः फलम् ॥ २५ ॥

इति तिलकादेशः ॥

स्पन्दते दक्षिणाङ्गस्य फलं वक्ष्ये यथाक्रमम् ।
यथोक्तविपरीतेन वामाङ्गस्पन्दने फलम् ॥ २६ ॥
पृथिवीलाभमाचष्टे शिरसि स्पन्दने ध्रुवम् ।
ललाटे स्थानवृद्धिः स्याच्चिल्यां प्रियसमागमः ॥ २७ ॥
शङ्खे व्यवसनलाभश्च श्रवणे श्रवणप्रियम् ।
दृशान्ते वस्तुलाभः स्यादुन्मूले मानसी व्यथा ॥ २८ ॥

१ भीह । २ स्याच्चिल्यं ।

Aho ! Shrutgyanam

केचिद् व्याचक्षते दृष्टे रधःप्रियसमागमम् ।
नेत्रान्ते धनलाभश्च उन्मूले भृत्यसंशमम् ॥ २९ ॥
लोचनस्योपरिस्यन्दौ मानसीश्च[1] रुजं जगुः ।
कपोले विप्रयोगश्च चिबुके मधुरासनम् ॥ ३० ॥
अधरोष्ठे रिपुध्वंसो मित्राप्तिश्चोत्तराधरे ।
नासिकायां सुगन्धाप्तिर्गले च विजयो भवेत् ॥ ३१ ॥
अंशे च भोगवृद्धिश्च बहाविष्टेन सङ्गमः ।
मणिबन्धे यशोलाभो[2] हस्ते द्रविणसम्भवः ॥ ३२ ॥
पृष्ठे पराजयो वक्षस्युदयो[3] चोदरेषु च ।
स्तने त्वपूर्वं स्त्रीलाभं पार्श्वप्रीतिरनुत्तरा ॥ ३३ ॥
जठरे शोकवृद्धिश्च नाभौ स्थानादिह च्युतिः ।
कट्यामाश्रितसम्मोदः कोशे कोशविवर्द्धनम् ॥ ३४ ॥
मुष्के तनयलाभश्च जघने वनितागमः ।
वस्तौ कुटुम्बवृद्धिश्च[4] दोषःस्यादुरुपृष्ठतः ॥ ३५ ॥
ऊरुपौरस्त्यभागे तु मित्रता सचिवैःसह ।
जानुन्यरातिसन्धानमथवा गमनं ध्रुवम् ॥ ३६ ॥
जङ्घायाःस्थानलब्धिश्च पादपृष्ठे तु विग्रहः ।
प्रयाणं भयसंयुक्तं स्यन्दने चरणोदरे ॥ ३७ ॥

इति स्यन्दनादेशः ॥

मूर्द्धा ललाटस्य तटीभुजौ[5] च वक्षश्च हस्तांघ्रितलानि चैवम् ।
भ्रूभ्रूणमुख्यावयवानि वै ते प्लोषोल्वणाःखेदकरा नराणाम् ३८॥
दृशौ कपोलावधरौ गलश्च कुक्षिश्च कोशो जघनश्च पायुः ।
एकादशैतेऽवयवाःजलाढ्याःप्लोषोत्तरास्तोषकरा नराणाम् ३९

---

१ मानसीश्च । २ जयोलाभो । ३ स्युदयोदयेसु च । ४ द्रेसस्या ।
५ कटीभुजौच ।

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठे च पार्श्वावथ सक्थिनी च जङ्घे च मुष्के च कृकाटिका च ।
अग्निप्रभूतावयवा दशैते प्लोषोत्तरास्तापकरा नराणाम् ॥४०॥
नासाश्रुतिर्नाभिसुमस्तकश्च कलद्वयं विंशतिरङ्गुलीनाम् ।
वायुस्तरास्तु त्रिनयनांशकास्ते प्लोषोत्तरा बन्धुनमागमाय॥४१॥
शेषाश्च सर्वे तनुसन्धयश्च विद्भिन्नगो भूतमयो प्रदिष्टः ।
प्लोषोत्तरास्त जनयान्ति कोशं न भूजलं सोद्भवसन्धयस्तु॥४२॥

इति प्लोषादेशः ।

आनाभितस्तमःश्लिष्टमाकण्टाद् सत्वसंयुक्तम् ।
आमूर्द्धतो रजोयुक्तं देहस्त्रिगुणवानिति ॥ ४३ ॥
अकस्मादेव कण्डूतिरुत्पातः समुदाहृतः ।
रजस्सत्वतमःकण्डुः प्रीतिसौख्यक्षयप्रदः ॥ ४४ ॥
पुंसक्रमोऽयं निर्दिष्टः सःस्त्रियोविपरीततः ।
पश्चोत्पाताःक्रमादेते विलोमेन बलोत्तराः ॥ ४५ ॥
त्रयोपि पश्चिमोत्पाताः पक्षेण फलपाचकाः ।
चिररात्रम्प्रवृत्तास्ते चिरेण फलदा मताः ॥ ४६ ॥

इति देहोत्पातादेशोनाम सप्तदशोऽध्यायः ।

अष्टादशोऽध्यायः ।

अतःपरं समासेन स्वप्नादेशो निरुप्यते ।
प्रयतोल्पं सकृद्भुत्वा प्रविशेद्देवतालयम् ॥ १ ॥
देवस्य पुरतो मन्त्रं साक्षतैःसर्षपैर्लिखेत् ।
पूर्णे कुम्भे सदग्धास्ते बलिना च समर्चयेत् ॥ २ ॥

---

१ भूभूत सुम्कावयवाल्लिवैते ।

Aho ! Shrutgyanam

ॐ त्रिजटालम्बोदरवामने कक्षकफाय हुं हुं फट् फट् स्वाहा।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा पीत्वा प्रक्षाल्य चाननम् ।
देवध्यानपरो मौनी दक्षिणेन शयीत च ॥ ३ ॥
पूर्वजन्मश्रुतं भूरं स्वप्नरूपगतिं स्मरेः ।
तदणूकमिति व्यर्थं स्वप्नदृष्टं विनिर्दिशेत् ॥ ४ ॥
एष्यज्जन्मानि भक्तव्यं प्रायःप्रशस्तिमानवम् ।
तदस्पृष्टमिति व्यर्थं स्वप्ने दृष्टं परित्यजेत् ॥ ५ ॥
दुर्बलग्रहपाकश्च स्वप्ने दृष्टो नु भुज्यते ।
तच्च चिन्तामयं स्वप्नं सर्वदैव बुधस्त्यजेत् ॥ ६ ॥
वृक्षाद्रिशृङ्गाद्यधिरोहणञ्च वाताधिकःपश्यतिश्वनयात्राम् ।
पित्ताधिकःकाञ्चनरक्तमाल्यादिवाकरादिज्वलनां न पश्येत्॥७॥
श्लेष्माधिका रौप्यसितप्रसूणुमरित्सगोम्भोनिधिलङ्घनानि ।
त्रिस्थूणमूर्त्तिस्तु यथोक्तरूपैः स्वप्ने विमिश्रान् रजनीषु पश्येत्॥८॥
बीभत्ससत्वाभिभवोभिचाराव द्विश्वादभुदुगुह्यकजं प्रदिष्टम् ।
एतानि सर्वाणि हि वर्ज्जयित्वा स्वप्नं भवेदिष्टसुस्मादिष्टम् ॥ ९ ॥
प्रत्यक्षवद्भवति यत् स्फुरतीव चान्तस्स्वप्नस्य तस्य नियमासदत्फलाप्तिः
स्वप्नाःशुभाशुभवशेन फलप्रदाये संक्षेपमात्रमिहता ननु वर्णयिष्ये१०
स्वप्ने प्रज्वलितं भवेद्यादिगृहं स्वाङ्गं स्वकीयं तथा
सर्व्वं वा सह बन्धुभिश्च यदि वा राज्यं स वै प्राप्नुयात् ।
आश्लिष्यस्त्ववनीं समुद्रमथवा शङ्खं ध्वजं पर्व्वतं
गौरीं वायुमतीं सुग्दरूममसौभर्ता भुवो जायते ॥ ११ ॥
देहं निकृत्य शतशो विकिरन्ति यस्य यो वध्यते च निगडेन गले च पादे
मूर्त्तिश्च यस्य भवतीह पुरीषलिप्ता संप्राप्नुयात सुमहतीं पदवीं श्रियश्च

---

१ सदुर्ग्वैस्तं । २ ठ्ठकफाफय ढठः । ३ संजैःप्रान्तियात् ।
४ शङ्कस्वजम । ५ वर्द्धते । ६ निगलेनगँलेच्च ।

Aho ! Shrutgyanam

बिभर्ति यस्योपरि वारणो वा सितातपत्रं नृपतिर्द्विजो वा ।
ददाति गौरी यदि पुण्डरीकं दासोऽपि सःस्यादिह सार्व्वभौमः १३
अर्केन्दुगोशृङ्गविनिर्गतेन स्नानाभिषेकौ सलिलेन पाणौ ।
स्वप्ने गवां वा मुखदोहनश्च नृमूर्धहृन्मांसनिसेवनश्च ॥ १४ ॥
अन्त्रैश्चोदरनिर्गतैर्गिरिगृहग्रामादिसंवेष्टनं
कन्थायां परिरम्भने च सहसा स्वाङ्गप्रवेशोऽथवा ।
भुक्तिर्वा स्वसनश्च सिंहकरिणामारोहणं तेषु वा
ग्रासश्चोदधिकाश्चपीक्षितिभृतां राज्यश्रियःसिद्धये ॥१५॥
तृणतरुकुसुमाम्बुप्रोद्भवे वा स्वनाभौ
दिनकरशशितारा भक्षणस्पर्शने वा ।
विदलति निजशीर्षे सप्त पञ्च त्रिधा वा
क्षितिगिरिपरिवर्तोन्मूलने वापि राज्यम् ॥१६॥
जये रणे वा व्यवहारवादे पुरीपभुक्तिभुविर्यस्य वीक्ष्य ।
अगम्यनारीगमनश्च मृत्युःस्वशोतिभूरिद्रविणागमाय ॥१७॥
सितसुरभिमनोज्ञालेपमाल्याम्बराणाम्
सुरगुरुनृपगौरी ब्राह्मणानाञ्च दीक्षा ।
मणिरजतसुवर्णाम्भोजपात्रेषु भुक्ति
र्यदि दधिपरमान्नेशोणिते मज्जनश्च ॥ १८ ॥
सिततुरगफलध्वजातपत्रव्यजनसरोजमणिद्विपेन्द्रलाभाः ।
प्रभवजयवभुक्षवेतिशब्दाःपरिमितराज्यफलप्रदा भवन्ति१९
मुद्राहशदाञ्जनी द्विपश्चस्त्री सन्नासिषु चाङ्गणासिरुक्ता ।
लब्धे सरकेऽथदर्पणे वा भृङ्गारादिषु चोद्भवःसुतस्य ॥२०॥
क्रौमिन्येधनलब्धिरम्बुतरणे शोकस्य नाशो भवे
द्वर्षारोदितशोचितादिषु तथा देहे विवृद्धिर्मता ।

---

१ वज्रोवा । २ यस्यादि । ३ दिराध्यम । ४ सस्य
५ स्वसोनि । ६ मणिपेन्द्र । ७ प्रहारादिसु । ८ क्रौमिणोदन ।

Aho ! Shrutgyanam

गोलिङ्गीद्विजदेवतापितृसुहृद्भूपाश्च ये सन्ति यत्
स्वप्ने तन्नियमाद्भवन्त्यवितथं प्रोक्तं शुभं वा शुभम् ॥२१॥
नाभेरन्यत्र गात्रे तृणतरुकुसुमे प्रोद्भवे स्नेहपानं
क्रीडायानोपभोगःखरकरभकपिव्यालरौद्राश्च सत्वाः ।
कायस्यालेपनं वा कलुषजलमषिगोपयःस्नेहपङ्कै
र्दृग्जिह्वादन्तबाहुप्रपतनमथवानर्थशोकप्रदानि ॥ २२ ॥
गीतक्रीडितभूषितप्रहसितप्रेङ्खोलितास्फोटना
न्यर्केन्दुद्विजतारकादिपतनं स्रोतस्यधोमज्जनम् ।
रज्जुच्छेदचिताप्रतापजननीगात्रप्रवेशादि वा
स्वप्ने कांशविचूर्णनञ्च शिरसि क्लेशामयानर्थदम् ॥ २३ ॥
श्यश्रुकेशगखदेर्ष्णकल्पना वानरी विकृतनार्य्युपासनम् ।
रक्तवस्त्रमनुजाङ्गमर्दनं रोगमृत्युभयशोकतापदम् ॥२४॥

स्थलमृगपशुकीटान्यूपचय्यर्याण्डजानां
प्लवनमुदकरागौ स्याद्विवाहोत्सवा वा ।
सरसिजजतुमाण्डक्रीडणं नर्तनं वा
मलिनविवसनत्वं चाशुशोकप्रदानि ॥ २५ ॥

पुंद्रव्यनाशे सुहृद्विप्रयोगे [2]भेदास्वप्रस्सरोजापहारे ।
प्रासादवृक्षादिवेश्मावतारः स्वप्नेषु नष्टो द्विजैःसम्प्रदिष्टः २६
मित्रस्याप्तिःस्याद्विकोषासिलाभेऽवश्यं राजा प्राप्नुयात्साशनाप्तौ
सर्प्ये कर्णं नासिकां वा प्रविष्टे तच्छेदःस्याद्विष्टनेवास्य वन्धः॥२७॥
सर्पैस्त्ववृहिभिर्वादष्टस्य स्वप्ने स्याद्यदि शोणितम् ।
नरो वा यदि नारी वा पुत्रश्चार्थमवाप्नुयात् ॥ २८ ॥
तरुणं जीर्णमात्मानं स्वप्रान्ते यस्तु पश्यति ।
वृद्धिं तस्य विजानीयादारोग्यं चिरजीविनम् ॥ २९ ॥

---

१ मुदकरांसो । २ भेदश्चपन्ता ॥

Aho ! Shrutgyanam

यस्य तस्य गृहं शुक्लैर्वृषभैःसमलङ्कृतम् ।
नरो वा लभते नारीं नारी वा लभते पतिम् ॥ ३० ॥
काकं गृद्धं कपिं श्येनं गोधां वा सूकरं तथा ।
स्वप्नान्ते यदि यःपश्येद्व्यसनं तस्य निर्दिशेत् ॥ ३१ ॥
स्वर्णनोच्चतलारोहः प्रशस्तः स्वप्नवेदिभिः ।
अन्यत्र ल्यववाल्मीकमहिषोष्ट्रखगादितः ॥ ३२ ॥
यद्यत्श्वेतन्तु वर्णेन पूजितं सर्व्वमेव तत् ।
तक्रकर्पासभस्मास्थि भक्तं तत्र विवर्ज्जयेत् ॥ ३३ ॥
कृष्णवर्णन्तु यद्द्रव्यं गर्हितं सर्व्वमेव तत् ।
अन्यत्र पर्व्वतान्भूपेः करिणःसलिलालयात् ॥ ३४ ॥
रक्तवर्णन्तु यद्द्रव्यं तत्सर्व्वं नःप्रशस्यते ।
अन्यत्र शोणितान्मांसात् प्रवालात्पद्मचन्दनात् ॥ ३५ ॥

आद्ये वर्षाद्वत्सराद्वा द्वितीये
यामे पाको वर्षपादात्तृतीये
मासात्पाकः शर्व्वरी पश्चिमांशे
सद्यःपाको गोविसर्गेषु दृष्टः ॥ ३६ ॥

दृष्ट्वा स्वप्नं शोभनं नैव सुप्यात्
पश्चाद्दृष्टो यः स पापं विधत्ते ।
शस्तं ब्रूयाद्यज्ञसाधुद्विजेभ्यः
तेत्वाशीर्भिः पूजयेद्युक्तदुग्धैः ॥ ३७ ॥

भूयो वा स्वपनं न चास्य कथनं गङ्गाभिषेको जपः
शान्तिःस्वस्त्ययनं निसेवनविधिःप्रातर्गवाश्वत्थयोः ।
विप्राणाञ्च तिलान्नपानकुसुमैः पूजा यथाशक्तितः
पुण्यं दैवतकीर्त्तनञ्च कथितं दुःस्वप्नविध्वंसनम् ॥ ३८ ॥

इतिस्वप्नादेशोनामाष्टादशोऽध्यायः ।

---

१ भूयोमास्वप्नान्तवास्य ।

Aho ! Shrutgyanam

एकोनविंशोऽध्यायः ।

तिरश्चां चरितादेशं समासेनाथ वक्ष्यते ।
हस्त्यश्वकाकश्वानश्चं पेडाःप्राधन्यकल्पिताः ॥ १ ॥
वाल्मीकस्थानगुल्मक्षुपतरुमथनःस्वेच्छया भ्रष्टदृष्टि
र्यो यद्यत्रानुलोमं त्वरितपदगतिर्वक्त्रमुन्नम्यचोच्चैः ।
कक्ष्यासन्नाहकाले जनयति च महच्छीकरम्बृहतिर्भू
स्तत्कालं वा मदान्धोजयकृदपरदं वेष्टयन् दक्षिणाश्च ॥२॥
स्खलितगतिरकस्मात् त्रस्तकर्णोऽतिदीनः
श्वशितमृदुसुदीर्घो न्यस्तहस्तःपृथिव्याम् ।
द्रुतमुकुलितदृष्टिः स्वप्नशीलो[2] विमोहः
भयकृदहितभक्षी नैकशोऽश्रुरशकृच्च ॥ ३ ॥

इतिगजचारितादेशः ।

आरोहतिक्षितिपतौ विनयोपपन्नो
यात्रानुगोन्यतुरगः प्रतिहेषितश्च ।
वक्त्रेण वा स्पृशति दक्षिणमात्मपार्श्वं
योश्वःसभर्तुरचिरात्प्रविणोति लक्ष्मीम् ॥ ४ ॥
मुहुर्मुहुर्मूत्रशकृत्करोति न ताड्यमानोऽप्यनुलोमयायी ।
सकार्य्यभीतोश्रुविलोचनश्च शिवंन भर्त्तुस्तुरगो विधत्ते॥५॥
वामैश्चपादैरहितोडयन्तो महीप्रवासाय भवन्ति पत्युः ।
सन्ध्यां सुदीप्तामवलोकयन्तो हेषन्ति चेद्बन्धुपराजयाय॥६॥

---

१ पेण्डाः । २ मो ॥

अनीचहेषन्ति किरन्ति वालं निद्रारताश्च प्रवदन्ति यात्राम्।
रुदन्ति चेद्दीनतरा स्वराश्च पांशुग्रसन्तश्च भयप्रदिष्टाः ॥७॥

इत्यश्वचरितादेशः ।

वैशाखे निरुपहते वृक्षनीचःसुभिक्षशिवदायी ।
विषकण्ठकी तु शुष्के समुभिक्षभयाय च तद्देशे ॥ ८ ॥
नीडप्रागुश्शाखायां समा भवेत्प्रथमवृष्टिरपरस्याम् ।
याम्योत्तरयोर्मध्ये प्रधानवृष्टिस्तरोरुपरि भवेत् ॥ ९ ॥
शिखिदिशिमण्डलवृष्टि नैर्ऋत्यां शारदस्य निष्पत्तिः ।
परित्रोपथ्योःसुभिक्षं मूषिकसम्पत्तु वायव्ये ॥ १० ॥
शारदर्भगुल्मवल्लीधान्यप्रासादगेहनिम्नेषु ।
शून्यो भवति सदेश श्चौराणां वृष्टिरोगार्त्तः ॥ ११ ॥
द्वित्रिचतुःशाखत्वं सुभिक्षदं पञ्चभिर्नृपान्यत्वम् ।
अण्डावकिरणमेकाण्डता प्रसूतिश्च न शिवाय ॥ १२ ॥
चौरकवर्णैश्चौराश्चित्रैर्मृत्युः सितैश्च वह्निभयम् ।
विकलैर्दुर्भिक्षभयं काकानां निर्दिशेच्छिशुभिः ॥ १३ ॥
अनिमित्तसंहतैर्ग्रामंमध्यगैःक्षुद्भयं प्रवासीद्भिः
क्रोधश्चक्राकारै रभिघातोवर्गवर्गस्थैः ॥ १४ ॥
अभयाश्च तुण्डपक्षैश्चरणविघातैर्ज्जनानभिभवन्तः ।
कुर्व्वन्ति शत्रुवृद्धिं[2] निशि विचरन्तो जनविनाशम् ॥ १५ ॥
सव्येन खे भ्रमद्भिः स्वभयं विपरीतमण्डलैः सार्द्धम् ।
अव्याकुलं भ्रमद्भिर्वातोद्भ्रामो भवति काकैः ॥ १६ ॥
ऊर्ध्वमुखाश्चलपक्षाः पथिभयदाःक्षुद्भयाय धान्यमुषः ।
सेनाङ्गस्था सुयोद्धाःपरिमोषं चान्यभुतपक्षाः ॥ १७ ॥

---

१ सू ण्यो ॥ २ शास्त्रिवृद्धिम ॥

Aho ! Shrutgyanam

भस्मास्थिकेशपत्त्राणि [1]विन्यसन् पतिवधाय शय्यायाम्।
मणिकुसुमाद्यवहनेन सुतस्य जन्माङ्गनायाश्च ॥ १८ ॥
पूर्णाननेऽर्थलाभः सिकताधान्यार्द्रमृत्कुसुमपूर्व्वैः।
भयदो जनसंवासाद् यदि भाण्डान्यवनयेत् काकः ॥१९॥
वाहनशा[2]स्त्रोपानच्छत्रच्छायाङ्गकुट्टने मरणम् ।
तत्पूजायां पूजाविष्ठा करणेऽन्नसम्प्राप्तिः ॥ २० ॥
तद्द्रव्यमुपनयेत् तस्य लब्धिरपहरतिचेत् प्रणाशःस्यात् ।
पीतद्रव्येकनकं वस्त्रं कार्पासिके सिते रूप्यम् ॥ २१ ॥
सक्षीराऽर्जुनवञ्जुलकूलद्वयपुलिनगारुमन्तश्च ।
[3]प्रावृषि वृष्टिं दुर्दिनमनृतास्नाताश्च पांशुजलैः ॥ २२ ॥
दारुणनादस्तरुकोटरोपगो वायो महाभयदः ।
सलिलमवलोक्य विरुवन् [4]वृष्टिकरो वृष्टिरोधीर्वा ॥ २३ ॥
दीप्तोद्विग्नो विटपे विकुट्टयन्वह्निकृद्वितपक्षः ।
रक्तद्रव्यं दग्धं तृणकाष्ठं वा गृहे विदधत् ॥ २४ ॥
ऐन्द्रीं दिशमवलोक्य सूर्य्याभिमुखो रुवन् गृहे गृहिणः ।
राजभयबन्धुकलहं करोति सद्यः पशुभयश्चैव ॥ २५ ॥
शान्तामैन्द्रीमवलोकयत् [5]रौतिच राजपुरुषमित्राप्तिः ।
भवति च सुवर्णलब्धिः शाल्यन्नगुडाशनाप्तिश्च ॥ २६ ॥
आग्नेय्यामनला जीविकयुवतिप्रवरधातुलाभश्च ।
याम्ये कुलत्थभोज्यं गान्धर्व्वैर्दाहयोगश्च ॥ २७ ॥
नैर्ऋत्यां दूतश्चोपकरणदधि[6]तैलपललभोज्याप्तिः ।
वारुण्यां मां ससुराधान्यादिसमुद्ररत्नाप्तिः ॥ २८ ॥
[7]वायव्ये [8]शस्त्रायुधसरोजवल्लीफलाशनाप्तिश्च ।

---

१ विन्यस्यत्पतिवधाय । २ शास्त्रवृद्धिम् । ३ प्रवाशङ्कि । ४ वृष्टिकरोब्दानुरावीबा । ५ रुयात् । ६ तैलभोज्याप्तिः ॥ ७ मारुत्यां । ८ सरोजवस्त्रवल्ली ।

सौम्यायां परमान्नाशनं तुरङ्गाम्बरप्राप्तिः ॥ २९ ॥
ऐशान्यां सम्प्राप्तिर्घृतपूर्णानां भवेदनडुहश्च ।
एवं फलं गृहपतेर्गृहपृष्ठसमाश्रिते भवति ॥ ३० ॥
गमने कर्णसमश्चेत् क्षेमायनकार्य्यसिद्ध्ये भवति ।
अभिमुखमुपैति यातु विशन्विनिवर्तयेद्यात्राम् ॥ ३१ ॥
वामे वाशित्वादौ दक्षिणपार्श्वेऽनुवाशते यातुः ।
अर्थापहारकारी तद्विपरीतोऽर्थसिद्धिकरः ॥ ३२ ॥
यदि वाम एव वशन्मुहुर्मुहुर्यायिनोऽनुलोमगतिः ।
अर्थस्य भवतिसिद्धिः प्राच्यानां दक्षिणश्चैवम् ॥ ३३ ॥
वामःप्रतिलोमगतिर्वाशन् गमनस्यविघ्नकृद्भवति ।
तत्रस्थस्यैव फलं कथयति यद्वाञ्छितं गमने ॥३४॥
दक्षिणविरुतं कृत्वा बामे वाश्येद्यथेप्सितार्थाप्तिः ।
वाशन् पुरोद्रुतं याति वाग्रतोऽर्थागमोऽतिमहान् ॥ ३५ ॥
प्रतिवाश्य पृष्ठतो दक्षिणेन योयादद्रुतं क्षतजकर्त्ता ।
एकचरणोर्कमीक्षन् विरुवंश्च पुरो रुधिरहेतुः ॥ ३६ ॥
दृष्ट्वार्कमेकपादस्तुण्डेन लिखेद्यदा स्वपिच्छाङ्गम् ।
परतो जनस्य महतो वधमभिधत्ते तदा बलिभुक् ॥ ३७ ॥
सस्योपेते क्षेत्रे वाशति शान्तोऽतिसस्यभूलब्धिः ।
आकुलचेष्टो वाशन् सीमान्ते क्लेशकृद्यातुः ॥ ३८ ॥
सुस्निग्धपत्रपल्लवकुसुमफलानम्रसुरभिमधुरेषु ।
सक्षीराव्रणसुस्थितमनोज्ञवृक्षेषु चार्थकरः ॥ ३९ ॥
निष्पन्नसस्यशाद्वलभवनप्रासादहर्म्यहरितेषु ।
धान्योच्छ्रयप्रभूतिषु शस्तेषु रुवन्धनागमकृत् ॥ ४० ॥

---

१ तुरङ्गाम्बरप्राप्तिश्च । २ ऐश्यान्यं । ३ घृतपूर्व्वान्यासालब्धिः रुदाति । ४ सिद्धिदो । ५ वासत् । ६ वास्ति । ७ सिद्धिप्रस्थानम् । ८ श्वपिच्छाङ्गम । ९ वाशानि ।

गोपुच्छस्थे वल्मीकगेऽथवादर्शनं भुजङ्गस्य ।
सद्यो ज्वरो महिषगे वाशति[1] गुल्मे फलं स्वल्पम् ॥ ४१ ॥
कार्य्यस्य व्याघातस्तृणकूटवामगेऽम्बु[2]संस्थे वा ।
शुष्केऽग्निप्लुष्टेऽशनिहते च काके वधो रुवति[3] ॥ ४२ ॥
कण्टकिमिश्रे सौम्ये सिद्धिःकार्य्यस्य भवति कलहश्च ।
कण्टकिनि भवति कलहो वल्लीपारिवेष्टिते बन्धः ॥ ४३ ॥
छिन्नाग्रेऽङ्गच्छेदः कलहःशुष्कद्रुमस्थिते ध्वाङ्क्षे ।
पुरतश्च पृष्ठतो वा गोमसंस्थे[4] धनप्राप्तिः ॥ ४४ ॥
मृतपुरुषाङ्गावयवस्थितो ऽग्रतो[5] वाशको[6] ऽतिमृत्युकरः ।
भअन्नास्थिच चश्चा यदि वाश्यते[7] ऽस्थिभङ्गाय ॥ ४५ ॥
रज्ज्वस्थिकाष्ठकण्टकिनिःसाराशिरोरुहानने रुवति ।
भुजगगजदंष्ट्रितस्करशस्त्राग्निभयान्यनुक्रमशः ॥ ४६ ॥
सितकुसुमाशुचि मांसाननेऽर्थसिद्धिर्य्यथेप्सिता यातुः ।
धुन्वन् पक्षावृद्धीननेच विघ्नं मुहुः क्वणति ॥ ४७ ॥
यदि शृङ्खलां वरत्रां वल्लीं वा यदा वाश्यते[8] बन्धः ।
पाषाणस्थेच भयं क्लिष्टापूर्व्वाध्विकयुतिश्च ॥ ४८ ॥
अन्योन्यभक्षसंक्रामितानने तुष्टिरुत्तमा भवति ।
विज्ञेयःस्त्रीभालो दम्पत्योर्वाशतोर्युगपत् ॥ ४९ ॥
प्रमदाशिर उपगतपूर्णकुम्भसंस्थेनाङ्गनार्थसम्प्राप्तिः ।
घटकुट्टने सुतविपत् घटोपदहनेऽन्नसम्प्राप्तिः ॥ ५० ॥
स्कन्धावारादीनां निवेशसमये रुवंश्चलत्पक्षम् ।
सूचयतेऽन्यस्थानं निश्चलपक्षस्तु भयमात्रम् ॥ ५१ ॥
बन्धःसूकरसंस्थे पङ्काक्ते सूकरे द्विकेऽर्थाप्तिः ।

---

१ वाशीत । २ वामगेम्बु । ३ रुवति । ४ तस्थ । ५ ग्रतोवासको मृतुकरः । ६ वशति । ७ वसति । ८ वाशते ।

क्षेमं खरोष्ट्रसंस्थे केचित् प्राहुः वधन्तु खरे ॥ ५२ ॥
वाहनलाभश्च गते वाशत्यनुयायिनि क्षतजपातः ।
अन्येऽप्यनुव्रजन्तो यातारं काकवद्विहगाः ॥ ५३ ॥
का इति काकस्य रुतं स्वनिलयसंस्थस्य निष्फलं प्रोक्तम् ।
कव इति चात्मप्रीत्यै क इति रुते स्निग्धमित्राप्तिः ॥५४॥
करइति कलहं कुरुकुरु च हर्षमथकटकटेऽतिदधिभक्तम् ।
केके विरुतं कुकुवा धनलाभं यायिनःप्राह ॥ ५५ ॥

काकद्वयस्यापि समानमेतत्
फलं विशेषेण पदाधिकेन ।
प्रारम्भकाले गमने प्रवेशे
परीक्षणीयं विदुषा तदेतत् ॥ ५६ ॥

इति वायसचरितादेशः ।

सूर्योदयेऽर्काभिमुखो विरौति ग्रामस्य मध्ये यदि सारमेयः ।
एको यदा वा बहवःसमेताः शंसन्ति देशाधिपमन्यमाशु ॥५७॥
सूर्योन्मुखः श्वानलदिक्स्थितश्च चोरानलत्रासकरश्चिरेण ।
मध्याह्नकाले ऽनलमृत्युशंसी सशोणितःस्यात्कलहो ऽपराह्ने॥५८॥
भषन् दिनेशाभिमुखोऽस्तकाले कृषीबलानां भयमाशु धत्ते ।
प्रदोषकालेऽनिलदिङ्मुखस्तु धत्ते भयं मारुततस्करोत्थम् ॥५९॥
उदङ्मुखश्चापि निशार्द्धकाले हृदि व्यथां गोहरणञ्च शास्ति ।
निशावसाने शिवदिङ्मुखश्च कन्याभिदुष्टानलगर्भपातान्॥६०॥
उच्चैःस्वराःस्यु स्तृणकूटसंस्थाः[1]प्रासादवेश्मोपरिसंस्थिता वा ।
वर्षासु वृष्टिं कथयन्ति तीव्रामन्यत्र मृत्युं दहनं रुजंश्च ॥६१॥

---

१ प्रासादवेश्मोत्तमसंस्थितश्च ।

प्रावृट्काले ऽवग्रहेऽम्भो वगाह्यं प्रयात्त्वैरेचकैश्चाप्यभीक्ष्णम् ।
आधुन्वन्तो वा पिबन्तश्च तोयं वृष्टिं कुर्व्वन्त्यन्तरे द्वादशाहात् ६२
द्वारे शिरो न्यस्य बहिःशरीरं रोरूयते वा गृहिणीं विलोक्य ।
शोकप्रदः स्यादथ मन्दिरान्तर्बहिर्मुखः शंसति बन्धकीं ताम् ॥६३॥
कुड्यमुत्किरति वेश्मनो यदा क्षेत्रकाननभयं तदा भवेत् ।
गोष्ठमुत्किरति गोग्रहं वदेद्धान्यलब्धिमपि धान्यभूमिषु ॥ ६४ ॥
एकेनाक्ष्णा साश्रुणा दीनदृष्टिर्मन्दाहारो दुःखकृत्तद्गृहस्य ।
गोभिःसार्द्धं क्रीडमाणःसुभिक्षं क्षेमारोग्यं चाभिधत्ते मुदञ्च॥६५॥
वामं जिघ्रेज्जानुवित्तागमाय स्त्रीभिःसार्कं विग्रहो दक्षिणं चेत् ।
ऊरुं वामं चेन्द्रियार्थोपभोगाः दक्षं जिघ्रेदिष्टमित्रैर्विरोधः ॥६६॥
[2]यातुः पादौ जिघ्रेश्चेद्यात्रां [illegible]हार्थाप्ति वाञ्छतां निश्चलस्य ।
स्थानस्थस्योपानहौ चोद्विजिघ्रेत् क्षिप्रं यात्रां सारमेयःकरोति॥६७॥
उभयोरपि घ्राणने हि वाह्वो विज्ञेयो रिपुचौरसम्प्रयोगः ।
अथ भस्मनि गोपयेत भक्षान् मांसास्थीनि च शीघ्रमग्निकोपः॥६८॥
ग्रामे भषित्वापि बहिःश्मशाने भषन्ति चेदुत्तमपुंविनाशः ।
यियासतश्चाभिमुखो विरौति यदा तदा श्वा निरुणद्धि यात्राम्६९
उकारवर्णेन रुतेऽर्थसिद्धिं रोकारवर्णेन च वामपार्श्वे ।
व्याक्षेपमौकाररुतेन विद्यान्निषेधकृत् सर्व्वरुतैश्च पश्चात् ॥७०॥
षड्खेति वोच्चैश्चमुहुर्मुहुर्ये रुवन्ति दण्डैरिव ताड्यमानाः ।
श्वानोऽभिधावन्ति च मण्डलेन ते शून्यतां मृत्युभयञ्च कुर्य्युः॥७१॥
प्रकाश्य दन्तान्यदि लेढि सृक्किणी तदाशनं मृष्टमुपन्ति तद्विदः ।
यदाननञ्चावलिहेन्न[3] सृक्किणी प्रवृत्तभोज्येऽपि तदान्नविघ्नकृत्॥७२॥
ग्रामस्य मध्ये यदि वा पुरस्य भषन्ति[4] संहत्य मुहुर्मुहुर्ये ।
ते क्लेशमाख्यन्ति तदीश्वरस्य श्वारण्यसंस्थो मृगवाद्विचिन्त्यः॥७३॥

---

१ सर्व्वं । २ श्च । ३ संगत्य । ४ पातो ।

Aho ! Shrutgyanam

वृक्षोपगःक्रोशति तोयपातः स्यादिन्द्रखीले सचिवस्य पीडा ।
वायो गृहे सस्यभयं गृहान्तःपीडा पुरस्यैव च गोपुरस्थे ॥७४॥
भयञ्च शय्यासु तदीश्वराणां याने भषन्तो भयदाश्च पश्चात् ।
अथापसव्या जनसन्निवेशे भयं भषन्तः कथयन्त्यरीणाम् ॥ ७५ ।
एकेन प्रातः दिवसेन वस्यान्मासत्रयेणापि च केन चोक्तः ।
श्वभिःशृगालाः सदृशाःफलेन विशेषमेषामधुना प्रचक्ष्ये ॥७६॥
पूर्व्वोदोच्योः शिवा शस्ता शान्ता सर्व्वत्र पूजिता ।
धूमिताभिमुखी हन्ति[1] स्वरदीप्ता दिगीश्वरान् ॥ ७७ ॥

राजा कुमारो नेता च दूतःश्रेष्ठश्चरो द्विजः ।
गजाध्यक्षश्च पूर्व्वाद्यः क्षत्रियाद्यश्चतुर्दिशाः ॥ ७८ ॥
पुरे सैन्येऽपसव्या च कष्टा सूर्य्योन्मुखी शिवा ।
अन्यप्रतिरुता[2] याम्ये सोदरामृतशंसिनी ॥ ७९ ॥
वारुण्येभिरुता सैव शंसने सलिले मृतम् ।
याहीत्यग्निभयं शास्ति टाटेति मृतवेदिका[3] ।
धिग्धिग्दुष्कृतमाचष्टे सज्वाला देशनाशिनी ॥ ८० ॥
भेभेति भयमाचष्टे भोभो व्यापादमादिशेत् ।
फलमां[4] शपमानेन ग्राह्यश्च परतो रुतम् ॥ ८१ ॥

इति श्वगोमायुचरितादेशः ॥

नक्षत्रचक्रं गृहगोलिकायाः शस्तं रुतादेशविधौ रुतज्ञैः ।
चुच्छुन्दरी शब्दविधौ च भौमे तूत्पातजाते च ससीम्नि देशे८२
लोपाशिकायाः खलु किस्किसीतिरुतं[5] विनान्यानिव वृद्धिदं स्यात्
रुतानि सर्व्वाणि च सर्व्वदिक्षु नेष्टानि शिष्टैरिह सम्मतानि॥८३॥

---

१ भन्ति । २ याम्या । ३ चोदिका । ४ माशपतमाणेण । ५ विनन्या ।

फलन्ति तिर्यग् चरिते नगहेष
गृहाधिपस्याध्वनिचात्मनश्च ।
प्रभोश्च दुर्गे नृपतेश्च सैन्ये
सभास्वमात्रस्य धनान्वयाद्यैः ॥ ८४ ॥

इति तर्य्यगचरितादेशोनाम एकोनविंशोऽध्यायः ।

विंशोऽध्यायः ।

अथाग्निदग्धं परिपृच्छतःस्फुटं शुभाशुभं प्रश्नविलग्नतो नृणाम् ।
ग्रहैःशरीरादिकभावसंस्थितैर्गताङ्गमाद्याखिलकार्य्यगोचरम् ॥१॥
संप्रेक्ष्यमाणस्त्ववसःशरीरी प्रसह्य दैवेन शुभाशुभेन ।
ज्योतिर्विदःसन्निधिमेति यस्मात् प्रश्नेऽध्यतो जन्मसमाःफलेषु ॥२॥
सुखचरणगतावतीव रम्ये फलकुसुमद्रुमशालिनि प्रदेशे ।
जलवति धृतगोमयार्द्रफणे भवति शुभं ध्रुवमेव पृच्छकस्य ॥३॥
मङ्गलद्रव्यानां दर्शनमाकर्णनं तथाहि लाभाः ।
पृष्टश्चादरयुक्तः सिद्धिमभीष्टस्य विदधाति ॥ ४ ॥
अङ्गुष्टकर्णवदनस्तनहस्तनासा
कर्व्यंशपादतलगण्डशिरांसि गुह्यम् ।
ओष्टं वचःस्पृशति वक्ति शुभानि यद्वा
पृष्टा तदा कलयति ध्रुवमर्थसिद्धिम् ॥ ५ ॥
प्रोक्ताधातुःक्षोणिजश्चोष्णरश्मि
मूलाख्याःस्युश्चन्द्रमस्सौम्यसौराः ।

१ ग्रहेसु । २ सधनात्वयाद्यै । ३ प्यप्रेर्य्य । ४ प्यतेजन्मसमः ।

Aho ! Shrutgyanam

जीवोऽभिख्यो [1]दैत्यपूज्यो वरेढ्यो
यस्यांशे स्यादिन्दुजः [2]सा तु योनिः ॥ ६ ॥
धातुर्मूलं भवति च तथा जीवदै[3]त्येजराशौ
युग्मे वास्मिन् स्वयमपिच भवेदेतदेव प्रतीपम् ।
लग्ने योंऽशःस खलु सुधिया गण्य एवं क्रमात् स्यात् ।
संक्षेपोऽयं नियतमुदितो विस्तरात् तत्प्रभेदः ॥ ७ ॥
जन्मसमयार्थफलतो यात्राकालस्तिथिकरणबलवान् स्यात् ।
यात्राकालो[4]क्ताश्च प्रश्नवलं दुर्व्वलमुपन्ति ॥ ८ ॥
एषां तु फलविरोधे विमृश्य सम्यग् बलाबलान् स्वधिया ।
पौर्व्वापरयोः फलयोः याप्यत्वं वा फलैर्वाच्यम् ॥ ९ ॥
यात्रासमयाज्ञाने जन्माज्ञानेऽपि निर्दिशेत् प्रश्नात् ।
भावितफलं तज्ज्ञाने तदनुगमादेवं निर्देश्यम् ॥ १० ॥
अशुभे समुपनते सति अशुभो योगो शुभं निरां कुरुते ।
सुशुभे समुपनते सति सुशुभो योगो ऽशुभं कुरुते ॥ ११ ॥
[5]राशिर्विलग्नगो यस्तु तत्कालाच्छायया हतः ।
सप्तो धृतावशेषन्तु गुणकैर्गुणयेत्ततः ॥ १२ ॥
वाणप्रकृतिमन्वर्कद्विरदानलशूलिनः ।
सर्व्वपृच्छासु गुणकाः सूर्य्यादीनामनुक्रमात् ॥ १३ ॥
पुनःसप्तविभक्तेऽस्मिन् यदि सौम्योदयो भवेत् ।
प्रष्टुस्तदाकार्य्यसिद्धिर्नतुः पापग्रहोदये ॥ १४ ॥
एकसप्ततिसंभक्ते शेषे तद्वर्गशोधिते ।
तच्छुद्धिमेति यद्वर्गकालं यद्वसतो भवेत् ॥ १५ ॥
दिनान्यर्कारयोः शेषे पक्षाः शुक्राहिमत्विषोः ।
गुरोर्मासाःशनेर्व्वर्षान्पृतवः शशिजन्मनः ॥ १६ ॥

---

१ दैत्यपूज्यचरेढड्डौ । २ सातु । ३ पि । ४ ताश्चा । ५ विला-
नयोगास्तु ।

वृद्धिश्चतुर्थभवनान्मदनान्निवृत्ति
र्लग्नाच्च्युतिः[1] प्रसवनं दशमर्क्षतश्च ।
पृच्छाविलग्नसमये खचरैश्च वाच्यः
प्राप्तो ग्रहःहिबुकवेश्मनि तु[2] प्रवासी ॥ १७ ॥

वृषतुलाघटकेशरिणःशुभैर्यदि भवन्ति नभःसुविलोकिताः ।
तनुभृतां कथयन्ति शुभं तथा बलभृतो यदि चोदयमिश्रिताः१८
नाशोनाद्यःपापदोर्हिनहीनौ सन्देहःस्यान्नापिमृत्युश्च मृत्यौ ।
व्याधेर्यद्रा सम्भृतस्योपशान्तिःस्थानं प्राप्तेस्वेषुमे शूरणाख्यम्१९
कन्या मेषो वृश्चिकःकर्कटोवा मध्यं व्योम्नःसंश्रितःसौम्यदृष्टः ।
नष्टस्यार्थस्याशु नाशं विधत्ते रोगान् पृष्टःक्षिप्रमुत्थापयेच्च ॥२०॥
केन्द्रत्रिकोणोपगतैः शुभाख्यैःपापैस्तथा कण्टकरन्ध्रमुक्तैः ।
ब्रूयान्नराणामखिलार्थसिद्धिं विपर्ययटाःस्यात्पुनरन्यथा तैः॥२१॥
शुभाश्चरायास्त्रिमदायखस्थै रवेक्षितास्ते शुभमङ्गणोर्थम्[3] ।
पापं त्रिधर्म्मोदयरन्ध्रधीषु कार्य्यार्थहानिःशुभदाःशुभास्तु ॥२२॥
शुभाश्चरायास्त्रिधनेषु सिध्यै पापं पुनर्नेष्टफलं प्रदिष्टम् ।
नृराशयःकुम्भतुलानृयुग्मकन्याःशुभन्तेषु वदेद्विलग्ने ॥ २३ ॥
स्थानदाश्चरणभोगदाश्शुभाः लग्नधीधनयुजोर्थमानदः ।
नेष्टदाःस्युरशुभव्ययायगा लग्न इन्दुरशुभःसगोम्बरे ॥ २४ ॥
इन्दौ द्विषष्टत्रिमदायखस्थे जीवे क्षिते स्याच्छुभमङ्गणोऽर्थम् ।
पापास्त्रिधर्म्मोदयरन्ध्रधीषु कार्य्याथहानिःशुभदाःशुभास्तु ॥२४॥
उदयगशशिनः सुतमाक्ष्यते हिमरुचिर्यदि वा खचरोऽशुभः ।
विजयभूरिधनाप्तिमिहादिशेन्नच शुभं पुनरत्र भविष्यति ॥ २६ ॥
सितरुचि हिमगोरथवा सुतं यदि विलग्नगतं भृगुनन्दनः ।
समवलोकयति स्त्रियमुत्तमां श्रियमसौ लभते नियतं सदा ॥२७॥

---

१ घ्युतिः । २ वर्ष । ३ शुभमंणेक्षम् । ४ हान्यै ।

Aho ! Shrutgyanam

पीयूषांशौ पापयुक्ते सिते वा स्त्रीभिःसार्द्धं विग्रहःकीर्त्तनीयः ।
पापैर्यस्मान्मन्मथस्थानयातै १ैरेवाम्बुस्थानगैर्वासवाच्यः ॥२८॥
उदये यदि क्षितिसुते भृगुजं प्रविलोकयेद्वनितायाःकलहम् ।
कथयेदथार्कतनयस्य वदेद्यूने तथा सपदि गर्भहतिः ॥ २९ ॥
अरुणं विलोकयति केन्द्रगतस्तपनात्मजो भवति चौरभयम् ।
विपदङ्गणाभिरथवा कलहः सुमहान् प्रजायत इति प्रवदेत्॥३०॥
नाशोऽर्थस्य व्याधयो भीतिरुग्रा पश्यत्युष्णज्योतिसंभानुपुत्रः ।
लग्नस्थे वा पङ्कजानामधीशे निःसन्देहं वाच्यमेतत् समग्रम्॥३१॥
मैत्रीकार्य्यं वृद्धिमर्थं जयं वा मित्रक्षेत्रं वीक्ष्यमाणः करोति ।
निःसन्देहं खेचरःपृच्छकस्य व्याचष्टे च प्रायशो नष्टलाभम्॥३२॥
गुरुसितौ यदि युग्ममधिष्ठितौ क्षितिसुतस्तु नभस्युदये बुधः ।
विजयराज्यधनानि यथास्थिति नियतमेव तदा लभते नरः॥३३॥
यदि पृच्छतो भवति लग्नगतस्त्रिदशार्चितो दिनपतिर्दशमे ।
लभते तदाविजयराज्यधनान्यधिकान्यसौ २निखिलमन्यदापि ३४
उदयास्तमयोः स्थितयोः शुभयोस्सहजाम्बरवर्तिभिरप्यशुभैः ।
प्रणमन्त्वरयो लभते च तथा बहुसारमथार्थचयं पुरुपः ॥ ३५ ॥
उद्यच्छन्तं यद्यनुष्णांशुमूर्ति पापः पश्येन्मध्यवर्त्त्यम्बरस्य ।
स्थानभ्रंशं मृत्युमर्थप्रणाशं पुंसाक्रिवातं कमुग्रं विधत्ते ॥ ३६ ॥
पृष्टोदये स्याद्यदिधर्म्मसंस्थः पापो भवेदात्मजसंस्थितो वा ।
नाशस्तमक्षिप्रमिहास्ति नून मितोपसर्प्पेति वदेत् तदाशु ॥३७॥
द्वादशे यदि भवन्ति विलग्नाल्लाभधाम्नि यदि वा सुरसौम्याः ।
कार्य्यघातमखिलार्थविनाशं भ्रंशमस्य वितरन्ति तदानीम्॥३८॥
हिबुकगःकुरुते धनसक्षयं धनगतो विदधाति च बन्धनम् ।
रुजामिहव करोत्यशुभग्रहो व्ययविलग्नगतो मरणं नृणाम् ॥३९॥

---

१ स्यावदेद्युचते । २ निखिलमित्यादपि । ३ श्रिणोवा ॥

Aho ! Shrutgyanam

दिनकरोभयमर्कसुतो रुजं क्षितिसुतो विदधात्यभिघातनम् ।
विकलतां मरणं यदि वा नृणामुशनसः कुरुते शशलाञ्छनः॥४०॥
पश्यत्येकश्चेच्छुभश्च स्वमुच्चं लग्नप्राप्तं खेचरं प्रश्नकाले ।
स्थानैश्वर्य्यार्थोच्चयो मानवृद्धिर्वाच्यः निःसन्देहमेवाततज्ञैः ॥४१॥
यदि विलग्नगमुच्चगतग्रहः समवलोकयति ग्रहमुच्चगम् ।
भवति तत्र समये समुपेयुषः सपदि राज्यमिति प्रवदेत्तदा ॥४२॥
आरोग्यस्य प्राप्तिमर्थस्य लाभं वादोज्जित्वं सङ्गमत्वं प्रियेण ।
सौम्याःकेन्द्रस्थायिनःखेचरेन्द्राःकुर्व्वन्त्यन्ये त्वन्यथा सर्व्वमेतत्४३

इति शुभाशुभादेशः ॥

पापैः सुताराातिगतैर्नभोगैर्निवर्त्तते मार्गत एव शत्रुः ।
चतुर्थवेश्मोपगतैःपुनस्तैः प्राप्तोऽप्यरातिर्भजते निवृत्तिम् ॥४४॥
क्षितिसुतो यदि वा रविनन्दनःसुखगतःकमलिन्यधिपोऽथवा ।
रिपुबलं न समेति तदाबुधः त्रिदशपूज्यसितैःपुनरन्यथा ॥४५॥
स्थिरगते शशभृत्युदये चरे भवति [1]नागमनं विशतो यदा ।
नियतमागममस्य तदा वदेदिति [2]विपर्य्ययतस्तु विपर्य्ययः ॥४६॥
व्ययत्रिपञ्चद्विषडेकवर्त्तिनो भवन्ति लग्नादशुभग्रहाः यदि ।
तदा समागच्छति विद्विषाम्बलं चतुर्थराशौ न तदागमं विदुः ४७
स्थिरेमिश्रेऽथवा लग्ने शीतभानौ द्विसंश्रये ।
सुदूरमागतेप्यस्मिन्नरातिर्विनिवर्त्तते ॥ ४८ ॥
रिपुश्चरे चन्द्रमसि द्विसंश्रये विलग्नगे वार्द्धमितो निवर्त्तते ।
द्विधाभवत्यागमनं विर्य्यये पराजयःक्रूरविलोकिते पुनः ॥ ४९ ॥
चतुर्थवेश्मोपगतौ यदार्कमन्दौ तदाभ्येति न वैरिचक्रम् ।
इन्दुज्ञशुक्रा हिबुके यदि स्यु स्तदाशु तस्यागममामनन्ति ॥५०॥

---

१ अगभणान्विषतो । २ दितिमर्य्य यस्तु विभर्य्ययः ।

Aho ! Shrutgyanam

मेषवाजिवृषकेशरिणश्चेल्लग्नगाःसुखगता यदि वा स्युः ।
खचरैर्विरहिताःसहिता वा विद्विषो हि दधते विनिवर्त्तिम् ॥५१॥
स्थिरराशिगतो विलग्नगः शनिरिज्योऽथ तदा रिपुगःस्थिरः ।
उदयर्क्षगतामरार्तचश्चक्षरराशौ द्विषतस्तदागमः ॥ ५२ ॥
गुरुर्द्वितीये यदि वा तृतीये धाम्नि स्थितश्चेद्भृगुनन्दनो वा ।
क्षिप्रं तदायाति बलं रिपूणां तथा प्रवासी गृहमेति चाशु ॥५३॥

लग्नाद्राशौ चन्द्रमा यावति स्यात्
तावद्भिर्वा वासरैरागमो वै ।
लग्नस्येन्दोरन्तरे खेचरश्चेज्
जायेतान्यो नैव तद्वाच्यमेवम् ॥ ५४ ॥

इति सपत्नागमादेशः ।

---:o:---

अर्कार्किजज्ञासुरपूजितानां चरोदयस्थो यदि कश्चिदेकः ।
गमन्तदाक्षिप्रमुदाहरन्ति वक्रोपयातैर्विपरीतमेभिः ॥५५॥
चरविलग्नतःशशिजोऽथवा सुरगुरुस्तपनोऽथसितोऽथवा ।
गमनकृत्कथितो विनिवृत्तिदः पुनरसौ स्थिरलग्नगतःपथि॥५६
गमनागमने च पृच्छतः स्थिरलग्ने गुरुसौरिवीक्षिते ।
चरखेचरवीक्षिते पुनश्चरलग्नेद्वयमाशु निर्दिशेत् ॥ ५७ ॥
स्थिरःसमग्रोत्तमवीर्य्ययुक्तो विलग्नगो वेश्मनि यत्र खेटः ।
तत्तुल्यसङ्ख्याप्रमितैर्निवृत्ति रुक्ताप्रयातुर्नियमेन मासै॥:५८॥
काल एव विनिर्देश्यश्चरांशकगते ग्रहे ।
स्थिरेद्व्यात्मकभागस्थे क्रमाद्द्वित्रिगुणाः स्मृताः ॥ ५९ ॥
यदा यियासतो लग्ने स्मरस्थानपतिर्ग्रहैः ।
वक्रं विधत्ते तंकालमावर्त्तैरपरे जगुः ॥ ६० ॥

Aho ! Shrutgyanam

तिर्य्यग्राशिर्यदा लग्नाद् द्वितीयःस्याच्छुभान्वितः ।
तृतीये यदि वा ब्रूयात्तिरश्चां गमनं तदा ॥ ६१ ॥

इति समागमादेशः ।

———o———

लग्नात् सुतार्थसहजेषुगतैर्गतानां[1]
दूरम्प्रवृत्तिमथवागममादिशन्ति ।
सौम्यैः पुनश्च समवाप्तिमरिस्थितैर्वा
लघ्वागमं भृगुसुतामरपूजिताभ्याम् ॥ ६२ ॥

धनसहजगतौ सितामरेड्यौ कथयत्यागमनं प्रवासि पुंसाम् ।
[2]सुखभवनगतौ विमोचनत्वं झटिति नृणां कुरुते गृहप्रवेशम् ६३

जामित्रवर्त्तिन्यथवारिसंस्थे नभश्चरे केन्द्रगते च जीवे ।
प्रवासिनामागतिरत्र वाच्या त्रिकोणभाजीन्दुसुते सिते वा ॥६४॥

अष्टमे हरिणलक्ष्मणि लग्नात् कण्टकैरपि च पापविमुक्तैः ।
प्रोषितःसुखमुपैत्यथ सौम्ये स्वान्गृहान्भजति लाभसमेतः ॥६५॥

दुश्चिक्यस्थैः केन्द्रषष्ठोपगैर्वा पापैःपापालोकिते पृष्ठलग्ने ।
सौम्यैर्दृष्टे बन्धनस्थान्मृतान् वा नष्टान्भ्रष्टाघातितान् वा वदेत्तान्
लग्नान्मन्दः पापयुग्धर्म्मसंस्थः सौम्यैर्मुक्तःस्याद्यदा नेक्षितश्च ।
देशेऽन्यस्मिन् रोगयुक्तस्तदानीम् ब्रूयान्मृत्युस्थानगे मृत्युमस्य
विलग्नतो यावतिकेतनेग्रहः समागता द्वादश तेन राशयः ।
दिनानि तावन्ति वदेदिहागतो निवर्त्स्यते वक्रमुपागतैर्ग्रहैः ॥६६॥

इति प्रोषितसमागमादेशः ।

———ooo———

शनीन्दुभौमा यदि लाभवर्त्तिनस्ततोभृगुः सूर्य्यबुधौ त्रिबन्धुगौ ।
गुरुःसुते स्याद्यदिविद्विषस्तदा विजित्य सिद्धार्थमुपैति मन्दिरम् ६७

---

१ गतानाम् । २ सुखभवनगतारिभोडनत्वम् ।

Aho ! Shrutgyanam

लग्नस्थिते सुरगुरौ षष्ठे वा शीतरोचिसि ।
दशमे वसुधाधाम्नि प्रष्टुः सिद्धिरनुत्तरा ॥ ६८ ॥
सिद्धिःस्याल्लग्नगे जीवे षष्ठे शुक्रेऽष्टमे रवौ ।
सचिवाप्तिर्गुरौ लाभे कर्म्मनिक्ष्मार्कपुत्रयोः ॥ ६९ ॥
विदधाति शुभाय यासितांशुभखेचरलग्नसंस्थितैः ।
अशुभैरशुभं महर्षयः स्थिरलग्नेऽप्यशुभम्प्रचक्षते ॥ ७० ॥
भङ्गःशनीन्दुभौमेषु धर्म्मधीलग्नवर्त्तिषु ।
मृत्युःस्यादुदये भौमे द्रष्टयोश्चन्द्रमन्दयोः ॥ ७१ ॥
मृत्युं मृत्युगयोर्मन्दभौमयोर्ल्लग्नगे रवौ ।
रवीन्दोस्तद्वदेवायं दुश्चिक्यनिधनस्थयोः ॥ ७२ ॥
प्रष्टुर्नाशं स्मरस्थैश्च रवीन्दुवसुधात्मजैः ।
क्षुन्मारश्चारिवृद्धिश्च विलग्ने भृगुभौमयोः ॥ ७३ ॥
लग्ने कुजेन्दोःषष्ठे च शशाङ्कसुतशुक्रयोः ।
वधःस्यान्मन्त्रिणःसूर्ये निधनस्थानवर्त्तिनि ॥ ७४ ॥
प्रष्टुःसुतबधःपापै र्विलग्नात्पञ्चमोपगैः ।
भङ्गःस्याल्लग्नगे भौमे सेन्दौ [१]मन्दावलोकिते ॥ ७५ ॥

इति यात्रादेशः ।

———ooo———

दशमोदयस्मरगृहोपगाः शुभाः नगराधिपस्य विजयप्रदाःस्मृताः ।
नवमे जयाय गुरुशुक्रचन्द्रजाः कुजभानुजावपि च भङ्गदौ स्मृतौ ७६
क्रूरे विलग्नोपगते तृतीये चन्द्रात्मजे तिग्मकरे चतुर्थे ।
युद्धं भवत्सेत्र महीपतीनां पौरस्तु यस्तत्र विनाशमेति ॥ ७७ ॥
मनुष्यराशावुदये चरे च क्रूरौ भवेतां यदि खेचरेन्दौ ।
यातुर्नरस्याशु तदा विनाशं सौम्यग्रहेष्वेव मुपन्ति सिद्धिम्॥७८॥

---

१ मन्दाव ।

अनिमिषालिकुलीरघटे यदि स्थितिकृतोम्बुनिविद्विषकस्तदा ।
निगदितःस्फुटमेव पराजयः स्मृतमपक्रमणश्चतुरङ्गिभिः ॥८२॥
लग्ने लाभे कर्म्मणि द्वादशे वा यद्येकोऽपि स्याद्ग्रहःक्रूरसंज्ञः ।
यायी हन्यात्तत्पुरंसद्यमीषु क्रूरो नस्यात्तस्य नाशं तदाहुः॥८३॥
लग्नतो ऽभिमुखतश्च खगेन्द्रो जायते दशमभे यदि पापः ।
हन्ति तन्नगरमाशु तदानीं विद्विषांनरपतिर्विजिगीषुः ॥ ८४ ॥
उदयतो यदि लाभगतो भृगुर्गुरुरथोष्णकरोऽथबुधोऽथवा ।
नगरभर्तुरसौ कुरुते तदा विजयमम्बरगस्तु परिक्षयम् ॥ ८५ ॥
उदयगैर्य्यदि वा स्मरवर्त्तिभि र्दशमराशिगतैरथवा शुभैः ।
विजय एव तदा पुरशासितुर्भवतियायिनृपस्य पराजयः ॥८६॥

इन्दोर्भानि नवादितो नवरवेरन्यानि चत्वारि भा
न्यब्जस्यैव तु पञ्चकं परमतो भानोरिमौ चन्द्रभे ।
स्यातां योऽत्र जयोर्कभे स्थितजयःस्वान्योऽन्यभागस्थयोः
युद्ध्वा साम्यगतिस्वभे स्थितिजुषो नैवास्तियुद्धक्रिया८७
रैत्तयात्व जगतं सामग्रीते साङ्कैर्विवर्द्धिताम् ।
तामाञ्ञलो हृताहृत्वा वर्गे स्वकडमादिषु ॥ ८८ ॥
केतुर्धूमश्च सिंहश्च वृषभश्च खरो गजः ।
काकश्चेतिक्रमाद्विद्यादेकाद्यैःशेषितैरिह ॥ ८९ ॥
काकाश्च खरधूर्य्येह सिंहकेतुसिखिध्वजैः ।
उर्द्धोर्धबलिभिःशिष्टै र्वर्गैर्विद्याद्बलाबलम् ॥ ९० ॥
नवाधो द्विगुणास्त्रिघ्नः सर्वदीर्घाश्चकादयः ॥
सप्तावर्गा द्विगुणाःसर्व्वे पूर्य्यन्तेऽर्धैस्तदूर्ध्वतः ॥
हृत्वा दिनानां शिष्टानां वैषम्याधिकतो जयः ॥ ९१ ॥
दुष्टा सूर्य्यस्थिता तारा ततस्त्रिस्त्रिविभागतः ।
दुष्टाःशुभाश्च विज्ञेया स्ताराःसाभिजितःक्रमात् ॥ ९२ ॥

१ यद्यमिसु । २ स्थिजुसोः । ३ सर्वपुस्तकेषुष्येवम् । ४ नामञ्ज-लोदुना कुत्रचित् । ५ काकस्व ।

Aho ! Shrutgyanam

तारकाश्चन्द्रजन्मर्क्षादू गङ्गातल नलाम्बुना ।
विभक्ता द्विचतुः षष्टा दुष्टास्तारागणाःस्मृताः ॥ ९३ ॥
कण्टको विष्णुरब्रा च नेत्रं कारण्डकः शिवः ।
सारसश्च भगःकेकी सद्यो नन्दादिगा अमी ॥ ९४ ॥
प्राग्याम्याप्योत्तरान्तस्था कण्टकाद्यं क्रमादिमे ।
स्वतिथौ प्रथमोयामाश्रयोऽन्येषां परे क्रमात् ॥ ९५ ॥
आवृत्तबालकुमारराजवृद्धस्मृताश्च ते ।
तेषां क्रियागणोयानं [1]बोधःसुप्तिर्मृतिःक्रमात् ॥ ९६ ॥
भोक्तुःस्थिसैपुनर्भुक्ते क्रमादूह्यं शुभाशुभम् ।
[2]त्रीण्यास्ये द्वौ [3]दृशोःकण्ठे चत्वारि त्रीणि बाह्वोः ॥९७॥
एकं द्विपार्श्वे चत्वारि पादयोर्भानि जन्मतः ।
रक्षेत् ज्यास्थितं गात्रं प्रायस्तत्रायुधम्पतेत् ॥ ९८ ॥
श्येनमार्ज्जारसिंहश्च भुजङ्गाखुद्विपाःशशः ।
बले प्रागादि विन्यस्य वर्गाष्टकमिति क्रमात् ॥ ९९ ॥
यामार्द्धं सञ्चरन्त्येते प्रागारम्भात्प्रदक्षिणम् ।
स्वपराद्यक्षरं ज्ञात्वा कालेतर्क्ष्यादि विग्रहम् ।
मिथो बलाबलज्ञानाद् युक्तियुक्तो विधिःस्मृतः ॥१०० ॥
त्रयो दण्डास्त्रिशूलाग्रास्त्रिर्ष्यग्रपट्टदण्डसंयुताः ।
द्वौ द्वौद्विपार्श्वयोर्विन्दु मध्यदण्डास्त्रिशूलवान् ॥ १०१ ॥
मूर्ध्नि मध्यमशूलाग्रे विन्यसेद्धानुतारकाम् ।
ततःसाभिजितस्तारा वामेनैव निवेशयेत् ॥ १०२ ॥
मध्यशूले त्रिजन्मर्क्षे पतितं मरणावहम् ।
क्षतिदं शेषशूलेषु तिर्य्यक्शम्य बलप्रदम् ।
जयावहः [4]स्याद्विन्दुस्थं पश्चाच्छूलेषु भङ्गदम् ॥ १०३ ॥

इति विजयादेशः ।

---

१ भागः । २ त्रिष्ण । ३ शोः । ४ स्यात्मिन्दुस्थाम् ।

Aho ! Shrutgyanam

उदये नरराशिगाःशुभा यदि वायव्ययवर्त्तिनस्तदा ।
भवेदन्नृपसिद्धिमूर्ध्वतः द्वितनुस्थैरशुभैश्चिरोचिताम् ॥१०४॥

सौम्याःसोम्यालोकिताः केन्द्रयाताः
पुंलग्नस्थाःप्रीतिमुत्पादयन्ति ।
पापाःपापैर्वीक्षिताः खेचरेन्द्राः
तेष्वेव स्युः तत्समुच्छन्ति हेते ॥ १०५ ॥

ददाति वित्तं विजयी यदि स्यात् क्रूरस्मरक्षेत्रगतःखगेन्द्रः ।
क्रूरे विलग्नोपगते कृतोऽपि क्षितीशयोर्भेदमुपैति सन्धिः॥१०६॥
सन्धानमापोल्किमभाजिसौम्ये शुभेऽथ लग्ने शुभवीक्षिते च ।
विनैव सन्देहममुत्र योगे महीपतीनामिति कीर्त्तयन्ति ॥१०७॥

इति सन्धानादेशः ।

लग्नाद्द्वितीये यदि वाष्टमर्क्षे
पापापदम् बिभ्रति सप्तमे वा ।
तदा दिशेदाश्रयणीयनाशं
प्राणप्रयाणं यदि वापि दद्यात् ॥१०८॥

अर्थच्छेदो वित्तगैस्तस्यपापैर्जामित्रस्थैर्विभ्रमं कीर्तियन्ति ।
रन्ध्रस्थानस्थायिभिःस्वव्ययसूत्वं तस्मादेतद्वर्ज्जयेद्यत्नतोऽर्थी१०९
द्वितीयसप्ताष्टमगैर्विलग्नाच्छुभैर्भवत्याश्रयणीय एव ।
आरोग्यमर्थस्सुखसम्पदश्च प्रीतिस्ववाटेव तयोर्नृपयोः ॥११०

इत्याश्रयाणीयादेशः ।

---

[2]अब्जनाथतनयश्च दृकाणे सर्पवेष्टिततनावथ लग्ने ।
चन्द्रसौरसहितेऽथ विलग्ने बन्धनं नियतमतः कथयन्ति ॥१११॥

---

१ तदादिशेषा । २ अब्जनाथनयस्याद्दृकाने ।

Aho ! Shrutgyanam

पापाक्षेत्रं संश्रिते धर्मजायाधीरन्ध्राम्बुस्थानगे सूर्य्यपुत्रे ।
क्रूरैर्दृष्टे खेचरैरस्तिबन्धः क्षिप्रं पुंसस्तद्विदा वाच्यमेतत् ॥११२॥
लग्ने चरे स्याद्दीचेरण मोक्षः स्थिरेप्यश्चावस्तिपरश्चिरेण ।
द्विदेहवर्त्तिन्यहिमांशुपुत्रे कालेनसःस्यात् खलु मध्यमेन ॥११३॥

इति बन्धनमोक्षादेशः ।

सौम्ये सौम्यालोकिते खेचरेन्द्रे
जायालग्नच्छिद्रधिस्थानसंस्थे ।
प्रालेयांशौ षट्दशायत्रिसंस्थे
रोगव्यापर्त्पीडितानां शुभं स्यात् ॥ ११४ ॥
उपचयोपगते हिमगौ शुभे
नवमपञ्चमकेन्द्रधनस्थिते ।
शुभविलोकनभे यदि चोदये
भवति रोगयुतोऽपि सुखी नरः ॥ ११५ ॥

पूर्णः शशाङ्को यदि लग्नवर्ती विलोक्यते चित्रशिखण्डिजेन ।
शुक्रामरेड्यावपि केन्द्रगौचेत्पीड़ार्दितःस्यात्सुखितस्तदानीम् ११६
लग्नस्थो वा नैधनस्थानगो वा पापः प्रष्टुर्ल्लाभवेश्मस्थितो वा ।
व्याध्युद्रेदं निर्दिशेद्वर्त्तमानं यद्वा दुःखं स्याद्धिकृष्टं प्रयातम् ११७
स्वभवनोदयगः कुरुते रुजं मरणकृन्निधनं मदनेऽथवा ।
कलिकरुः खलु पृच्छकलग्नगो व्ययकरश्च पुनर्व्ययवेश्मगः ११८
यदि विलग्नगतं शशिपुत्रकं शशधरं यदि वोदयमागतम् ।
समवलोकयतीह शुभेतरो नियतमेव तदा रुजमादिशेत् ॥११९॥
पृष्टोदये लग्नगते यदि स्युः क्रूराश्चतुर्थस्मरलग्नभाजः ।
निशाकरो रन्ध्रगतस्तदानीं रोगार्दितं प्राणविनाशमेति ॥१२०॥

---

१ पुंसतमिद ।

गृद्धकोलवेदनाभुजगेन्द्रैर्वेष्टितो यदि भवन्ति दृकाणम् ।
क्रूरतां परिगते सितरश्मौ रन्ध्रभाजि मरणं कथयन्ति ॥१२१॥
मरणमाशु करोत्यशुभैः कृता धुरधुराचतुरस्रमाधाष्टिताः ।
बलयुतैस्तु शुभैरवलोकिते शशिनि गात्रिभवां कुरुते रुजां॥१२२॥
सौम्यैर्दृष्टः सूनुरम्भोजबन्धोर्यंयंराशिञ्चारितोऽसौ हिनस्ति ।
[1]हृतिक्रूरालोकितस्तस्य प्राणान् क्षिप्रं रोगी दैवरोगंविनैव १२३

लग्ने लाभे पञ्चमे सप्तमर्क्षे
शत्रौ धर्म्मे कर्म्मभे विक्रमे च ।
सौम्यारोगञ्चाशु कुर्य्युर्निवृत्तिम्
पापाः पुंसः पञ्चतामानयन्ति ॥ १२४ ॥

यदा जन्मगतश्चन्द्रो भानुस्सप्तमराशिगः ।
पौष्णकालः सविज्ञेयस्तदा स्वासं परीक्षयेत् ॥ १२५ ॥
पादार्द्धदिनहोरात्राण्यके नाड्यास्तोऽनिलाः ।
नाममारप्रियोज्ञेयः समासं जीवयेत् क्रमात् ॥ १२६ ॥
द्वित्रिचतुर्दिनादष्ट[2] षट्चतुर्वत्सरस्तथा ।
मौननात् तु सुखी नारी स्मरचौरसुरादिना ॥ १२७ ॥
त्रिवत्सरं षट् त्रिचतुरद्व्येकमासञ्च जीवयेत् ।
तिथिकाष्टाशरद्व्येकं दिने जीवेत्ततोऽधिके ।
आयुः कल्पेष्वनुक्तेषु कल्प्ये त्रैराशिकं क्रमात् ॥१२८॥
वीक्ष्यानिमसः स्वच्छायां पश्येन्निर्मलमम्बरम् ।
स्वक्छाया दृश्यते स्वेता पापघ्ना तमनुकारिणी ॥१२९॥
समेच्छिरो गुजाकण्डेदेहार्द्धघ्नीद्वयैर्विना ।
षट्त्रिकव्येकमासार्द्धदशपञ्चदिनान्स्मृतिः ॥ १३० ॥

---

१ हन्तिक्रूरालोकितस्तस्य तस्य प्राणान् क्षिप्रं रोयिणो रोगिणो वा । २ चतुर्वितसरान्तया । ३ माणण्येक ।

काकारुणकपोतादिर्यमाराहति निर्भयम् ।
सलिले चक्रचापं वा यःपश्येन्न स जीवति ॥१३१॥
ऊर्ध्वार्द्धश्चक्षुषोभङ्गं मर्द्दे न्यत्र न दृश्यते ।
ज्योतिश्चेत्षट्त्रिके द्व्येकमासिकं तस्य जीवितम् ॥१३२॥
दर्पणे वा जले रूपं विकृतं यत्समीक्ष्यते ।
यस्याङ्गं शवगन्धं वा मासार्द्धं तस्य जीवितम् ॥ १३३ ॥
कर्णौष्ठौ चलितस्थाना यस्य वक्रा च नासिका ।
कृष्णजिह्वा चलो मेरुः षट्सप्ताहं स जीवति ॥ १३४ ॥
जिह्वाग्रं दृष्टपूर्व्वं[2] यो न पश्येत् सःत्रिसप्तिकः ।
रुद्धश्रवाः कर्णघोषं नश्रवन्नाशु गच्छति ॥ १३५ ॥
[3]द्विधाप्लुवे जले दीपशान्तेर्निर्गन्धतस्तथा ।
अङ्गुष्ठगुल्फयोर्मध्ये मणिबन्धध्वजादिषु ।
वायोरस्फुरणं मृत्युः पांशुवर्षाच्च पृष्ठतः ॥ १३६ ॥
द्विधा वा दृश्यते दीपो ज्वालायार्धस्तथापि वा ।
यस्यैव प्रतिभागः स्यात् तस्य मृत्युः पुरः स्थितः[4] ॥१३७॥
षट्त्रयद्व्येकमासार्द्धमासपञ्चाहजीवितः ।
नष्टम्यूर्व्वादिदिक्ष्वन्नं छिद्रितं धूमसंकुलम् ॥ १३८ ॥
भाति बिम्बं क्रमाद्भानो रायुर्ज्ञात्वैव चात्मनः ।
दानं क्षेत्रप्रवेशादिं कुर्य्यात्सकर्म्मधीधनः ॥ १३९ ॥

इति जीवोपद्रवादेशः ।

सितेन्दुयुक्तेषु तदीक्षितेषु वा कुलीरगौ तौलिषु जायते नृणाम् ।
कुमारिकालाभ इतिप्रचक्षते परासराद्याः प्रथमे महर्षयः ।१४०।

---

१ मर्द्दे न्यत्रानिर्द्दिश्यते ॥ २ द्रष्ट ॥ ३ लिङ्गाप्लवे । द्विहाप्लवे ।
४ स्थिताः ॥

Aho ! Shrutgyanam

युग्मर्क्षगोदानवराजपूज्यः सुधामयूखो द्विपदाङ्गनांशः ।
वीर्यान्वितो लग्नमवेक्ष्यमाणो कुमारिकालाभकरःप्रदिष्टः १४१
लग्ने यदि स्याद्युवतिस्त्रिभागस्तत्रापि वा स्याद्यदि योषितांशः ।
दृष्टः सितेनामृतरोचिषा च भवेत्तदासौ वनिताप्तिकारी ॥१४२॥
जामित्रवित्तापगतो विधत्ते दृष्टःशशाङ्कः सुरपूजितेन ।
स्त्रीलाभमिष्टं सहितोऽथ पापैर्दृष्टोऽथवा तैस्तमसो निहन्ति १४३
केन्द्रत्रिकोणोपगताःसमर्क्षे शुभाश्च सौम्याःप्रविलोकयन्ति ।
यदा तदासौ लभते सरूपां जायां विरूपामपि पापधिष्ण्यैः१४४
स्त्रीराशिस्थग्रहा लग्ने स्थिरयोषिद्ग्राहांशकाः ।
पश्यन्तः कन्यकालाभकारिणःस्युरशंसयम् ॥ १४५ ॥
वरलाभोऽपि कन्यानामेवं स्यादितिसूरयः ।
परं नराङ्गद्रेष्काणैः पुमांसःपुंग्रहैरपि ॥ १४६ ॥
लग्नतोरिमदधीसहजायेष्विन्दुरर्कगुरुभूसुतदृष्टः ।
स्यात् करग्रहकरो वनितानां केन्द्रधर्म्मसुतभेष्वथ सौम्यः १४७

इति कन्यावरलाभादेशः ।

वृषकेशरिकन्यकालिनः सुतधामाश्रयिणो भवन्ति चेत् ।
उदयाच्छशिनो सितोऽथवा तनयाल्पत्वमुपैति पृच्छकः॥१४८॥

शुक्रार्केन्दुक्षोणिजे स्वांशकस्थे
लग्नस्थे वापसगे वा सुरेढ्ये ।
प्रष्टुर्निःसन्देहमाहुस्तदानीं
स्वापत्यत्वं काश्यपाद्याःमुनीन्द्राः ॥ १४९ ॥
पुत्रस्थानाधीश्वरो यावता स्वां
कालेनाशाम्प्राप्नुयात् खेचरेन्द्रः ।

---

१ पक्षाचः । २ स्थिताः । ३ स्यात्कारमहो । ४ सुतभमा । ५ ततयो

Aho ! Shrutgyanam

तावानस्थिन् कीर्त्तितो गर्भवृतेः
कालःस्त्रीणां प्रश्नशास्त्रार्थविद्भिः ॥ १५० ॥

इति गर्भसंभवादेशः ।

ग्नार्कसुर्विन्दुभिरोजराशौ नरांशके सुप्रबले नृजन्म ।
ौम्यांशयुक्ते यदि कन्यकानां जन्म प्रदिष्टं मुनिभिःपुराणैः१५१
त्रषमे जीवतिग्मांशू स्यातां पुरुषजन्मदौ ।
ुग्मे सितेन्दुभौमार्काः कन्यकोत्पत्तिदायिनः ॥ १५२ ॥
त्रषमोपगते विलग्ननाथे रविपुत्रे सुतजन्म निर्दिशेत् ।
ामवर्तिनि तत्र कन्यकानां प्रसवं गर्गमुखाःपुनर्विदुस्ते ॥१५३॥

स्यात्पुंवर्गे लग्नगे वीर्य्ययुक्ते
मूर्तिः पुंसः पुंग्रहालोकिते च ।
युग्मेनार्य्या स्त्रीग्रहालोकभाजी
ज्ञोपेते तु स्त्रीभवेद्गर्भयुक्ता ॥ १५४ ॥

सौम्योपेतः सौम्यदृष्टाष्टमर्क्षे
स्थायी नाथः पङ्कजानां यदि स्यात् ।
तस्माद्देशादन्यदेशे तदानीं
प्राप्तो वाच्यः प्रश्नकालेऽस्य तातः ॥ १५५ ॥

इति पुत्रस्त्रीजन्मादेशः ॥

चन्द्रार्कयोःस्मरगृहोपगतौ सितार्की
लग्नात् सुखाष्टमगतौ यदि वा भवेताम् ।
यद्वद्द्वितीयसहजोपगताविमौस्तां
स्यात्प्रावृषि प्रबल एव तदाम्बुपातः ॥ १५६ ॥

---

१ वाप्ता ।

Aho ! Shrutgyanam

जलराशिगते शुभग्रहे सितपक्षेऽर्थतृतीयकेन्द्रगे ।
जलराशिगतेऽथवाशशिन्युदयस्थे ध्रुवमादिशेज्जलम्॥१५७॥

पृच्छाकाले वित्तदुश्चिक्यायोश्चे
देकोराशिर्ज्जायते तोयसंज्ञा ।
यद्वा तिष्ठेत्तत्र तोयग्रहश्चे
न्निःसंदिग्धं तोयपातस्तदा स्यात् ॥ १५८ ॥

कुम्भमीनमकराःजलसंज्ञाः कर्किवृश्चिकतुलावृषचापाः ।
सिंहमेषमिथुनप्रमदाख्या राशयोनिगदितामृत्वजलाख्याः ॥१५९॥

शुष्काःकुजार्करविजा भृगुनन्दनश्च
शीतद्युतिश्च कथितौ जलसश्रयौ द्वौ ।
स्यादाश्रयस्य वशातःशितरास्मिजन्मा-
तद्वत्सतिश्च वचसामपरे यथोक्ताः ॥ १६० ॥

राशीश्वरोत्थे यदि विक्रमे वा शुभेन युक्तो गमने चरेण ।
तदा नदीपूरतरस्य सप्तविंशे दिने स्यात् सलिलस्य पातः॥१६१॥
जलवत्सजलेन संयुते पयसोर्वाग्पतनं विनिर्दिशेत् ।
उपरीरितमन्यथा पुनर्बहुतोयं[1] जलसश्रये विदुः ॥ १६२ ॥
शशभृतो दिशि वज्रभृतोऽपि वा मधुरवाग्वलिभुग्यदि वाशते ।
समभिपृच्छति देहुभृति ध्रुवं निपतनं सलिलस्य तदा दिशेत् १६३
वर्षा प्रश्ने प्रावृषीन्दुर्ज्जलर्क्षे शुक्ले पक्षे लग्नगः केन्द्रगो वा ।
सौम्यैर्दृष्टो भूरितोयं विमुञ्चत्यल्पं पापैश्चन्द्रवद्भार्गवोऽपि १६४
शुभेक्षितःप्रावृषि शीतरश्मिर्भृगोः सुतात् सप्तमराशिवर्त्ती ।
यद्वार्किपुत्रान्नवपञ्चमस्थः स्मरस्थितोवापि जलागमाय ॥१६५॥

नदीतीरे कूपे सरसिसरसे पल्वलतटे
समभ्यर्च्य ज्योतिर्विदमवनिदेशेऽथ हरति ।

---

१ जलजन्तेयेविदुः ।

Aho ! Shrutgyanam

यदा पृच्छेत् पृष्टा जललुलितपा निःस्पृशति वा
यदा सान्द्रं सद्यः प्रकिरति तदाम्भो जलधरः॥१६६॥
तोयासन्नस्तोषकार्श्योन्मुखो वा
पृष्टा चेत्स्याच्छंस प्रश्नोऽम्बुसंज्ञाम् ।
तोयार्थानां प्रश्नकाले श्रुतिर्वा
यस्मिन् वाच्यं तत्र निर्देश्यमम्भः ॥ १६७ ॥
भानोःशुद्धस्फुटे चन्द्रभागालोकमुपक्षिपेत् ।
मण्डलात्तं समुद्धृत्य शिष्टं वायुस्फुटं वदेत् ॥ १६८ ॥
यदेन्दुस्फुटतुल्योसौ तत्र जीवज्ञराहवः ।
यदि च स्युस्तदालोके वातचक्रं विजृम्भते ॥ १६९ ॥
गतचैत्रादिकान्मासान् दिनीकृत्य तिथिं क्षिपेत् ।
ततो नोतिभृतांस्ताराः[1] स्थितं भवति लिप्तिका ॥ १७० ॥
तत्र ग्रहाणां सर्व्वेषां क्षिपेच्छुद्धस्फुटानपि ।
अयं पिण्डस्फुटो नाम भानुस्थानादिमो भवेत् ॥ १७१ ॥
विशोध्य मण्डलात्तञ्च स्थितं विद्युत्स्फुटो भवेत् ।
क्षिप्त्वात्रै ग्रामचटकं[2] तञ्च चक्रेण ताडयेत् ॥ १७२ ॥
ततश्चन्द्रस्फुटःशोध्यः शेषो मेषस्फुटो भवेत् ।
अस्मिन् पिण्डस्फुटादूने वृष्टिर्नास्तीति निर्दिशेत् ॥१७३ ॥
वृष्टिरस्त्यधिके तञ्च कुर्य्याद्विघटिकामयम् ।
ओजःस चेद्दिवा वृष्टिः समश्चेन्निशि सम्भवेत् ॥ १७४ ॥
अथवा त्रिकला पिण्डं पिण्डभोगेन भाजयेत् ।
लिप्तिका दिनतो लब्धं वृष्टिकालस्य निर्दिशेत् ॥ १७५ ॥
मासस्य मार्गशीर्षस्य प्रारभ्यं प्रथमां सिते ।
पूर्व्वाषाढस्सिताप्रेतं[3] मेघगर्भः परीक्ष्यताम् ॥ १७६ ॥

१ स्थारा । २ गामवटकम् । ३ पूर्वाषाढांशशिनाप्ते ।

इन्दौ न स्पृश्य यत्रर्क्षे गर्भश्चन्द्रवशात्ततः ।
मण्डूकसङ्ख्ये दिवसे तत्रैव प्रसवो भवेत् ॥ १७७ ॥
सितपक्षभवःकृष्णे कृष्णपक्षभवःसिते ।
दिवाभवःक्षपायाञ्च क्षपाजातो दिवा भवेत् ॥१७८॥
सन्ध्याजातश्च सन्ध्यायां पौरस्त्यः पश्चिमे भवेत् ।
एवं दिशश्च मुञ्यस्तान्मरुतश्च प्रकीर्त्तितम् ॥ १७९ ॥
मार्गशीर्षादिमो गर्भो ज्ञेयो मन्दफलःसदा ।
तथा पौषसितोद्भूतो गर्भः सूते फलं मनाक् ॥ १८० ॥
पौषस्य कृष्णमारभ्य क्रमाद्गर्भःप्रतिष्ठितः ।
श्रवणस्य सितं प्राप्य श्रवेदाकार्त्तिकोदयः ॥१८१॥
पूर्व्वाषाढं गते भानौ जातो गर्भस्ततो रवेः ।
आद्र्ये प्रयाणात्प्रत्येकं त्रयोदशदिनश्रुतिः ॥ १८२ ॥
शुक्रोदयर्क्षात्प्रभृतिक्रमेण वृष्टिर्भवेद्द्वादशभेषु मध्यम् ।
ादकेतनः कष्टतमा ततोपि प्राप्यस्यते सा नवतारकेषु ॥१८३॥
स्निग्धावलक्षबहुलं परिवेशचक्रं सूचिक्षुरोपरचितं पटलं घनानाम् ।
ुद्धं प्रसन्नशशितारकमम्बरञ्च काकाण्डमेचकमुषन्निशि वायुगर्भे८४
ान्ध्याशुभामत्स्यसुरेन्द्रचाप निर्घोषविद्युत्प्रतिसूर्य्ययुक्ता ।
ादाःप्रशस्ताःशिवशक्रसोम दिग्भागगानां मृगपक्षिणाञ्च ॥८५॥
पैत्रे भाद्रपदश्चान्द्रे वैश्वे सार्पे च वारुणे ।
आप्ये स्वातौ च रुद्रे च गर्भो बहुजलप्रदः ॥१८६॥
निहतस्त्रिभिरुत्पातैर्गर्भःक्षरति नूतनः ।
युक्तयोर्दृष्टयोःसौम्यैः शुभो गर्भोऽर्कचन्द्रयोः ॥ १८७ ॥

---

१ तस्फुर्ष । २ श्रयेत् । ३ वमेत् । ४ फलन्मद्राक् । ५ तत्रयो॰ शद्दिनश्रुतिः । ६ कदाम्बरञ्च । ७ मुसन्ति सिवागर्भे । ८ दिग्भा- ावलम्प्र मृगपक्षिगाञ्च ।

Aho ! Shrutgyanam

क्रूरग्रहसमायुक्ते चन्द्रे च द्वादशात्मनि ।
गर्भःप्रादुरभूद्योसौ करकाशनिमत्स्यदः ॥ १८८ ॥
गर्भकाले घनानाश्चेदतिवेलं प्रवर्षणम् ।
गर्भध्वंसाय निर्दिष्टं गार्ग्येन मुनिना परम् ॥ १८९ ॥
विरसं वारिवैमल्यं दिशां चलनविक्रियाम् ।
गोनेत्राभं वियद्वेकरमितश्च घनागमे ॥ १९० ॥
मार्ज्जारानखरैर्भूयो विलिखन्ते भुवस्तलम् ।
बध्नन्तः शिशवःसेतुं सूचयन्ति घनागमम् ॥१९१ ॥
समलो मिश्रगन्धश्च लोहानां मत्स्यसम्प्लवः ।
गिरयोऽञ्जनचूर्णाभा बाष्पसंरुद्धकन्दराः ॥ १९२ ॥
परिवेशश्च शशिनः कुक्कुटेक्षणसन्निभः ।
वृक्षाग्रेक्रकलासन्ना नभस्तल विलोकनम् ॥ १९३ ॥
गवामूर्ध्वं रविप्रेक्षा शशीव मधुसन्निभः ।
प्रतीन्दुश्च दिवारुद्रकोणे विद्युद्विजृम्भणम् ॥ १९४ ॥
व्यवायश्च भुजङ्गानामधिरोहश्च शाखिषु ।
लोढणश्च तृणाग्रेषु न चिराद्वृष्टिकारणम् ॥ १९५ ॥
पिपीलिकानां षण्डानामन्तरेण विमर्द्दनम् ।
स्थानादन्यत्र चलनं गवाञ्च विविधप्लुतम् ॥ १९६ ॥
स्तनितश्च निशीथिन्यां दिवा सर्व्वत्र विद्युतः ।
दण्डवद्विद्युदुद्योतं पौरस्त्याच्छीतलो गरुत् ॥ १९७ ॥
पांशुस्नानं विहङ्गानां क्रूरता वा तपस्यतु ।
उदयास्तमयौसेन्द्रचापौ सपरिवेशकौ ॥ १९८ ॥
मयूरशुकवायस चातकसमानवर्णा यदा ।
जपाकुसुमपङ्कजद्युतिमुषश्च सन्ध्याघनाः ।

---

१ सिसिरो ॥ २ विविधप्लुताम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

जलोर्म्मिनश्चक्रकच्छपवराहमीनोपमाः
प्रभूतपुटसश्चया नियतमाशु यच्छन्त्यपः ॥ १९९ ॥
पर्य्यन्तेषु सुधाशशाङ्कधवलामण्डेञ्जनालिद्विषः
स्निग्धा नैकपुटाक्षरज्जलकणाः सोपानविच्छेदिनः ।
माहेन्द्रे प्रभवाः प्रयान्त्यपरतः प्राचीश्च पश्चाद्भवा
ये ते वारिमुचस्त्यजन्ति नचिरादम्भः प्रभूतं भुवि ॥२००॥
शनैश्चराद्वा शुक्राद्वा चन्द्रःप्रावृषि सप्तमः ।
पञ्चमो नवमो वापि शनैर्वृष्टिकरो भवेत् ॥ २०१ ॥
ग्रहाणामुदये वास्ते सङ्गमेवात्र सङ्क्रमे ।
अयनान्ते च वक्षान्ते प्रायो वर्षति वारिदः ॥ २०२ ॥
सङ्गमे शशिजशुक्रयोस्तथा देवदेवरिपुमन्त्रिणोरपि ।
जीवसोमसुतयोश्च सङ्गमे भूरि वारि दिशतीह वारिदः २०३

———o———

मृगकुम्भझषा श्रेष्ठा जलराशिषु मध्यमाः ।
कर्किकन्यातुलाः शेषा अधमाःपरिकीर्तिताः ॥ २०४ ॥
अवग्रहग्रहाःसूर्य्यसूर्य्यपुत्रमहीसुताः ।
जलदौ भृगुशीतांशू मध्यमावपरौ स्मृतौ ॥ २०५ ॥
आधाराधेययोः प्रश्ने साम्भस्त्वं भूरि वारिणः ।
व्यत्यये जलशोषाय मिश्रता स्वल्पवारिणः ॥ २०६ ॥
चतुर्थो जलराशिश्चेत् स्याद्वा तत्र जलग्रहः ।
चन्द्रभार्गवयोस्तत्र दृष्टिर्वा जलहेतवे ॥ २०७ ॥
आस्यदृक्कुक्षिकोशेषु प्रष्टोःस्पर्शो जलोदये ।
हृन्मूर्द्धनासिकावक्षः स्पर्शो मन्दजलाय च ॥
शेषाङ्गस्पर्शने विद्याज्जलाभावंविचक्षणः ॥ २०८ ॥

---

१ प्रस्ने ॥ २ भूरिवारिणे ॥ ३ छवालादक्कि ॥

Aho ! Shrutgyanam

कूपार्कदेशे नक्षत्रचक्रमालिख्य बुद्धिमान् ।
शुक्रेन्दुस्थानदृष्टिभ्यः जलस्थानं विनिर्दिशेत् ॥ २०९ ॥
यद्यम्बुरहिते देशे वेतसःपश्चिमे ततः ।
हस्तैस्त्रिभिर्जलं सार्द्धे पुरुषे दक्षिणा शिरा ॥ २१० ॥
जम्ब्वा उदकविपिर्हस्तैः शिरापूर्व्वा नरद्वये ।
मण्डूकःपुरुषे लोहगन्धिना[2] मृततो जलम् ॥ २११ ॥
जम्बुद्रुमस्य पूर्व्वेत्र वल्मीकश्चेत् समीपगः ।
तस्य दक्षिणपार्श्वेच सलिलपुरुषद्वये ॥ २१२ ॥
पश्चादुदुम्बरस्याम्भस्त्रिकरैःपुरुषद्वयैः ।
सार्द्धेऽथपुरुषे कृष्णसर्पश्चाश्मा च तादृशः ॥ २१६ ॥
नाकोर्य्यामिनककुभस्ततोहस्तत्रये जलम् ।
पश्चात्रिभिर्नरैःसार्द्धे स्सिकतायास्तलादधः ॥ २१४ ॥
वल्मीकाचितनिर्गुण्ड्याः दक्षिणस्यास्त्रिभिःकरैः ।
सपादे पुरुषद्वन्द्वे सलिलं बहुशर्करम् ॥ २१५ ॥
बदर्य्या यदिपूर्व्वेण वल्मीकःपश्चिमे ततः ।
नरत्रयेन सलिलं स्वेता च गृहगोधिका ॥ २१६ ॥
बदरी सफला सा चेत्ततः स्यात्पश्चिमे जलम् ।
नरत्रये सपादे तु पुरुषे दुन्दुभिध्वनिः ॥ २१७ ॥
उदुम्बरःसबिल्वश्चेत्ततो याम्ये करत्रये ।
पुरुषैस्त्रिभिरम्बुस्यात्कृष्णभेकोर्द्धपूरुषे ॥ २१८ ॥
काकोदुम्बरिका नाकौ तत्रैव पुरुषत्रये ।
सपादे सलिलं याम्यां मूषिका पुरुषार्द्धतः ॥२१९॥
विभीतकस्य याम्येन काकुर्य्यादि समीपगः ।
ततःप्राच्यान्नरैःसार्धे सलिलं सरसम्बहुः ॥ २२० ॥

---

१ भैमदैय्याः ॥ २ वृत्ततो ३ उदुम्बरश्च बिम्बश्चेत् ।

Aho ! Shrutgyanam

कोविदारस्य चैशान्या वाल्मीकःसकुशो यदि ।
तयोर्मध्ये जलं विद्यात् सहार्द्धे पुरुषद्वये ॥ २२१ ॥
वल्मीकनिचितात्सप्त पर्णात्प्राच्यामनन्तरम् ।
पञ्चभिः पुरुषैस्तोयं पाषाणं कुरुविन्दकः ॥ २२२ ॥
सर्व्वेषामेव वृक्षाणामुन्दूरोधस्थितो यदि ।
अधस्तात् सलिलं तस्य सार्धे नरचतुष्टये ॥ २२३ ॥
दक्षिणेन करञ्जस्य काकुस्तस्मात्करत्रये ।
याम्ये नरत्रये यवारि कच्छपःपुरुषार्धतः ॥ २५४ ॥
उत्तरेण मधूकस्य वल्मीकं पश्चिमोत्तरे ।
हस्तानं पञ्चक हित्वा जलमध्याष्टपूरुषैः ॥ २२५ ॥
दक्षिणेन सदुर्व्वस्तु वल्मीकस्तिलकस्य[1] चेत् ।
ततःप्रतिच्या पुरुषैः पञ्चाभिः पूर्व्वतःसिरा ॥ २२६ ॥
पश्चिमेन कदम्बस्य वल्मीको दक्षिणे ततः ।
हस्तत्रयं परित्यज्य षड्भिस्तु पुरुषैर्ज्जलम् ॥ २२७ ॥
तालो वा नारिकेलो वा वल्मीकोपचितस्ततः ।
पश्चात् षड्भिःकरैर्य्याम[2] चतुर्भिःपुरुषैःसिरा ॥ २२८ ॥
दक्षिणेन कपीतस्य वल्मीकश्चेदुदाग्दिशि ।
परित्यज्य करान् सप्त सलिलं पुरुषत्रये ॥ २२९ ॥
त्रिवृच्छूकरपादी च लक्ष्मणा नवमालिका ।
दन्ती च दृश्यते यत्र नृत्रये याम्यतो जलम् ॥ २३० ॥
अतृणा[3] सतृणा भूमिः सतृणा निस्तृणाथवा ।
पादाहता वा निनदेद्धनं वा वारि तत्र तु ॥ २३१ ॥
खर्ज्जूरिविसिरष्का चेद् यत्र स्याज्जलवर्ज्जिते ।
तस्य पश्चिमभागेन सलिलम्पुरुषत्रये ॥ २३२ ॥

---

१ वल्मीकस्थितकस्य । २ ताभ्याम । ३ अत्रणेस ।

Aho ! Shrutgyanam

स्निग्धाश्च या पादपगुल्मवल्यो निश्छिद्रपत्राश्च ततः सिरास्ति ।
पद्मे[2] क्षुरोशीरयुतः[3] सगुन्द्रा काशो कुशो वा नलिका नलो वा२३३
खर्ज्जूरजम्ब्वर्ज्जुनवेतसाःस्युः क्षीरान्विता वा द्रुमगुल्मवल्यः ।
यत्रोदुधनाभाः शुभपत्रनीलाः स्युर्नक्तमालाश्च ससिन्दुवाराः २३४
विभीतको वा मदयन्तिको वा यत्रास्ति[4] तस्मिन् पुरुषत्रयेऽम्भः ।
स्यात् पर्व्वतस्योपरि पर्व्वतेऽन्यैः तत्राम्बुमूले पुरुषत्रये वा॥२३५॥
समीपजैःकाशकुशैश्च युक्ता नीलाच मृद्रत्र सशर्करा च ।
तस्यां प्रभूतं सुरसञ्च तोयं कृष्णाथवा यत्र च रक्तमृद्रा॥२३६॥

कूपःखलो निकेतस्य ग्रामस्य नगरस्य वा ।
ऐन्द्रे भर्तृविनाशाय वह्निकोणे ऽग्निभीतिदः ॥ २३७ ॥
नैर्ऋत्ये बलविध्वंसी वायव्ये वह्नितापदः ।
द्वारवेधं परित्यज्य शेषादिक्षु शुभावहः ॥ २३८ ॥
हस्तामघानुराधा पुष्यधनिष्ठोत्तराणि रोहिण्यः ।
शतभिषजित्यारम्भे कूपानां शस्यते भगणः ॥ २३९ ॥
अञ्जनमुस्तौ शीरैः सराजकोशातकामलकचूर्णैः ।
कतकञ्जलसमायुक्तै र्योगैः कूपोदकं शुभयेत् ॥ २४० ॥

इत्यधोजलादेशः ॥

:O:

होरागतो दिनकरःपरिपूर्णमूर्त्ति
ईष्टःसितेन यदि वा त्रिदशार्च्चितेन ।
नष्टस्य लब्धिमचिराद्विदधातिलाभ
स्थानोपगःप्रबलवीर्य्ययुतःशुभो वा ॥२४१॥
स्थिरे विलग्ने यदि वा स्थिरांशे
वर्गोतमे वापि विलग्नयाते ।

---

१ मल्या । २ रोबीर । ३ सगुञ्जा । ४ तस्मीण । ५ सत्राम्बु ।

Aho ! Shrutgyanam

तत्रैव वाच्यं स्थिरमेवं नष्टं
द्रव्यं स्वकीयेन च तद्गृहीतम् ॥ २४२॥

निर्देश्यमादिमध्यान्ते विलग्नदृष्टैर्द्रेकाणैश्च ।
द्रव्यं द्वारोद्देशे मध्ये भवनावसाने च ॥ २४३ ॥

पूर्णे विधुर्य्यदि विलग्नगतः शुभो वा ।
मूर्द्धोदये भवति सौम्यविलोकितस्तु ।
नष्टस्य लाभमचिरात् कुरुते तदानीम्
लाभोपगोऽथ बलवान् न शुभेतरश्चेत् ॥ २४४ ॥

तोये वित्ते विक्रमे पञ्चमे वा षष्टे वा स्यात् खेचरेन्द्रःशुभश्चेत् ।
नष्टं द्रव्यञ्चाशु लब्धि तदानी ब्रूयात्तस्यासन्नदेशे स्थितिञ्च॥२४५॥
ब्रूयादेषा खेचरैः कण्टकस्थैः यद्वा लग्नाक्षीदमीषादभावे ।
मध्यादूर्ध्वैरंशकैर्वा विलग्नाद्वाच्यन्त्यस्मिनूनध्वतो योजनञ्च२४६

द्रव्यमांशकतश्चौरान् द्रेष्काणैरादिशेत् सुधीः ।
तद्देशकालराशिभ्यो वंशंजातिञ्च लग्नतः ॥ २४७ ॥
मृग[2]कुरङ्गझषाजि[3]तुमस्तथा शुभयुता न शुभेतरवीक्षिताः ।
मुषितमर्थचयं विचरन्त्यमी नियतमम्बरमध्यमधिष्ठिताः२४८॥
लग्नं प्राप्ताः प्रापयन्ति स्वकाष्ठं मेषाद्याश्चेद्राशयःखेचरास्तु ।
सम्वश्यन्ते लग्नसंस्थाःस्वकीयं यातं यद्वा वासराधीश्वरा वा २४९
अर्काद्यंशे विच्युते खाद्रिपादशैलेष्टं काङ्गानि सङ्ख्याक्रमेण ।
स्युर्गव्यूतिक्रोशहस्ता वितस्तिर्यद्वाप्येवं कीर्त्तयेदङ्गुलानि २५०

द्रेष्काणः स्याद् यत्स्वरुपो विलग्ने
[4]तस्याधीशः खेचरो वापि यादृक् ।
वर्णे वर्षे वेष्टिते वा [5]कृतौ वा

---

१ नयूगेतरः । २ तुरङ्ग । ३ जुकु । ४ तस्यांशेशः । ५ क्रमेवा ।

तुल्यःस्तेनस्तेन निर्देश्य एव ॥ २५१ ॥

इति नष्टलाभादेशः ।

तत्कालिकस्फुटं लग्नं कुर्य्याल्लिप्तामयं बुधः ।
गोसिंहौ दशभिर्गुण्यावष्टभिर्मिथुनाष्टमौ ॥ २५२ ॥
सप्तभिश्च तुलामेषौ मृगकन्यौ च पञ्चभिः ।
अनुक्ता राशयःसर्व्वे गुणनीयाः स्वसङ्ख्यया ॥ २५३ ॥
तत्र स्थितग्रहाणाञ्च गुणकारैर्विवर्द्धयेत् ।
जीवे दश कुजे चाष्टौ शुक्रे सप्त विनिर्दिशेत् ॥ २५४ ॥
रवौ शशिनि सौम्ये च रविपुत्रे च पञ्चभिः ।
तद्वस्तविमं राशिं सप्तभिर्गुणयेत्ततः ॥ २५५ ॥
नच देयाश्चरे लग्ने विशोध्याःद्विशरीरके ।
स्थिरेण देयाःनोशोध्या इति व्याचक्षते ऽपरे ॥ २५६ ॥
सम्प्रदायाद्वयं ब्रूमो लग्नद्रेष्काणनिर्णयम् ।
आदौ दद्यात्त्यजेदन्त्ये मध्येनायं विधिःस्मृतः ॥२५७॥
तत्तन्निधनशेषेण तत्तन्नक्षत्रमादिशेत् ।
केचिन्निधनशेषेषु चराद्युक्तविधिं जगुः ॥ २५८ ॥
कलत्रपुत्रमित्रारिभ्रातॄणां स्थानसङ्ख्यया ।
एकोनराशयस्तत्र देयास्तत्तारकागमे ॥ २५९ ॥
तद्वस्तोदितं राशिं चतुर्धा विनिवेशयेत् ।
दशाष्टसप्तपञ्चघ्नास्ते भवन्ति यथाक्रमम् ।
नव देया विशोध्याश्च प्रत्येकं तत्र पूर्व्ववत् ॥ २६० ॥
वत्सरा ऋतवो मासाः पक्षौ चेति पृथक् पृथक् ।
ज्ञेयाः स्वमानशेषेण प्रथमेऽत्रैव राशिके ॥ २६१ ॥
द्वितीये तिथ्यहोरात्रं तृतीये मण्डले भवम् ।

Aho ! Shrutgyanam

चतुर्थे जन्मघटिकस्ततो लग्नं प्रसाधयेत् ।
ततो ग्रहं परिज्ञाय नेयं दायदशाफलम् ॥ २६२ ॥
अजमकरतुलाकुलीरकन्यास्थितभगनाश्चतुरङ्गुलीषु पङ्क्त्या ।
इह गणयेदधिरूढवर्गराशौ प्रभृति भवे नवमर्क्षकं हि यावत् २६३
यामस्य पूर्व्वभागश्चेद् विलोमात्पञ्चराशिषु ।
क्रमात् पञ्चसु चान्तश्चेद् यामस्संप्राद्धतोऽपरे ॥ २६४ ॥
पादं द्विगुणितं लोकयुक्तछायाविशोधितम् ।
भाजकस्थेन शुद्धार्के भाजिते घटिकादयः ॥ २६५ ॥
तत्रार्कभुक्तिं निक्षिप्य लग्नभुक्तिं विशोधयेत् ।
अशोध्यनीलनीतिभ्यः क्रमेणाभ्यस्य भाजयेत् ॥ २६६ ॥
वर्त्तमानस्य लग्नस्य सिद्धभोगविलिप्तिभिः ।
लब्धं भागादिकं तच्च सवर्णीकृत्य कोविदः ॥ २६७ ॥
अन्तकेन विभज्याप्तमृक्षशेषं चतुर्गुणम् ।
तेनैव भाजयित्वाथ लब्धं पादो विधीयते ॥ २६८ ॥
भूयोभ्यासवशादेतत् साधयेद्दैवचिन्तकः ।
भक्ष्याकारविकल्पाभ्यां मुहूर्त्तस्तत्र विधीयताम् ॥ २६९ ॥

इति नष्टकादेशः ।

——ooo——

यदि कण्टकवर्त्तिनः शुभाः सूर्य्यादिवैकादशवेश्मगा विलग्नात् ।
धनवद्गृहमादिशेत्तदानीं द्वारं स्वदिशि ध्रुवं वदेद्विधिज्ञः ॥ २७० ॥
यस्मिन् भागे वेश्मनः सन्ति सौम्याः
तत्तद्द्रव्यं संश्रयस्तत्र वाच्यम् ।

---

१ चान्तेस्वेद । २ सद्यार्द्धतोत्तरे । ३ कृत्यको । ४ भ्यासमसी ।
५ भक्ष्याचाभ्य । ६ मुहूर्तस्तत्र । ७ द्वारञ्च ।

Aho ! Shrutgyanam

यस्मिन् पापाः खेचरास्तत्र भागे
शल्यस्योक्तः संश्रयः प्रश्नकाले ॥ २७१ ॥
धिष्णे समग्रेऽप्युदये विलग्ने विनिर्गते चन्द्रमसापि शून्यः ।
प्राप्तिर्निखातस्य भवं तदानीं कृतेऽपि यत्ने द्रविणस्य चैव ॥७२॥
दशमे हिबुकेऽथ पञ्चमे दुश्चिक्ये नवमे तथोदये ।
यदि सन्ति शुभग्रहास्तदानीम् ध्रुवमत्र द्रविणन्न नश्यति दूरुत२७३

इति निधानादेशः ।

संकीर्णकादेशमिमं यथावद् गुरूपदेशेन नरो विदित्वा ।
नरेन्द्रवांछ्भ्यमुपैति भूयः सर्व्वेण लोकेन च पूजितःस्यात्२७४

इति संकीर्णादेशो नाम विंशोऽध्यायः ।

इत्यनवमदर्शनस्थविरस्य कृतौ देवज्ञकामधेन्वा
मादेशप्रकरणं नाम द्वितीयम् ।

एकविंशोऽध्यायः ।

वशिष्टपूर्व्वाःप्रथमे महर्षयो वितत्य मङ्गल्यविधानमूचिरे ।
ततःसमादादभिसङ्गशंसनं प्रणीयते किञ्चिदिहोपयोगवत्[1]
याम्यायनं कुलीरादि मकराद्युत्तरायनम् ।
शुभकर्म्म सुविज्ञेयमुत्तरायनमुत्तमम् ॥ २ ॥
शुभेन युक्ता करणेन तिथ्या चन्द्रेण योगेन दिनेन तारा ।
ग्रहैर्नभिन्ना न युता च पापैरुत्पातशून्या च शुभेषु पूज्या ॥३॥

---

१ नतत् ।

Aho ! Shrutgyanam

कृत्तिकादीनि चत्वारि बुधवारादिषु क्रमात् ।
भानि यान्यमृतं योगं शुभं सिद्धिस्वसाधकम् ॥ ४ ॥
भानौ भानुश्चन्द्रमाश्चन्द्रवारे भौमे दस्रं बोधने चानुराधः ।
जीवो जीवे रेवती शुक्रवारे रोहिण्यर्कौ सिद्धियोगो निसर्गात्५
मूलं हरिरुपान्त्यर्क्षं कृत्तिका च पुनर्व्वसुः ।
भाग्यः स्वातिश्च सिद्धत्वं भानुवारादिषु व्रजेत् ॥ ६ ॥
शुक्रे नन्दा बुधे भद्रा भूमिजे च जया तिथिः ।
शनौ रिक्ता गुरौ पूर्णा सिद्धियोगयुता भवेत् ॥ ७ ॥
सूरारवारयोर्नन्दा तिथिर्भद्रेन्दुशुक्रयोः ।
बुधे जया च रिक्तेज्ये शनौ पूर्णामृताह्वया ॥ ८ ॥
कदाचिदेकम्यवना हि वह्निमित्रान्त्यमूलाशततारकाणाम् ।
नन्दा च मन्दारदिनेशवारे चेद्योगमाप्ता स वराख्ययोगः ॥९॥

रवौ हरिश्चन्द्रदिने दिने भं
भौमे च मूल[1]श्च भगं बुधेऽह्नि ।
उपान्त्यभं जीवदिने च शुक्रं
स्वातिस्तथार्कौ शिखिभं शुभं स्यात् ॥ १० ॥

शुक्रेज्यशुभचान्द्रीणामक्षीणेन्दोर्दिनं शुभम् ।
एतेषामेव षट्वर्गो दर्शनञ्च सदा शुभम् ॥ ११ ॥
ध्रु[2]वनक्षत्रमुद्द्रष्टुं रोहिणी चोत्तरत्रयम् ।
अभिषेकपुरारम्भप्रभृतीन्यत्र कारयेत् ॥ १२ ॥
उग्राणि त्रीणि पूर्व्वाणि भरणी पैत्रकारकम् ।
विषाग्निशत्रुघातश्च शाठ्याद्यश्चात्र कारयेत् ॥ १३ ॥
अश्विनीहस्तपुष्णाणि लघु तत्र विचारयेत् ।
शिल्पौषधविधानानि भूषालङ्कारकादिकम् ॥ १४ ॥

---

१ मूले । २ द्रुव ।

मृदुवर्गोऽनुराधा च चित्रापौष्णेन्दुभानि च ।
सुरतहितवस्त्राद्यं मित्रताञ्चात्र योजयेत् ॥ १५ ॥
विशाखा कृत्तिका चैव मृदुर्तीक्ष्णाक्रिया हिता ।
श्रवणादित्रयं वायुरादित्यं चरकर्म्मणि ॥ १६ ॥

कुर्य्याद्भवे शुभकरःस्थिरपौष्टिकानि
धर्म्मक्रिया द्विजहितानि च बालवाख्ये ।
सम्प्रीतिमित्रकरणानि च कौलवाख्ये
सौभाग्यसंश्रयपदानि च तैतिलाख्ये ॥ १७ ॥

कृषिबीजगृहाश्रयजागरजे वणिजे ध्रुवकार्य्यवणिग्युतानि ।
नहि विष्टिकृतं विदधाति शुभं परघातविषादिषु सिद्धिकरम् १८
कार्य्यं पौष्टिकमौषधानि शकुनौ मूलानि मन्त्राणि वा
सौकार्य्याणि चतुष्पदे सुरगुरूद्देशश्च[1] राज्यानि च ।
नागे स्थावरजङ्गमानि हरणं दौर्भाग्यकर्म्माण्यतः
किंस्तुघ्ने शुभवृष्टिपुष्टिकरणं माङ्गल्यसिद्धिक्रिया ॥ १९ ॥
त्रीण्युत्तराणि श्रवणन्धनिष्ठा प्रजापतिस्तिष्यसराब्धिभानि ।
ऊर्ध्वाननान्येषु विधेयमूर्ध्वरोहोचितं[2] कार्य्यमशेषमाहुः ॥ २० ॥

चित्राश्विनी मृगशिरश्च पुनर्वसुश्च
ज्येष्ठान्त्यहस्त्युपत्ननान्युपमित्रभश्च ।
तीर्य्यङ्मुखान्युचितमत्र विभक्तिमित्र-
प्रस्थानमङ्गलकृषीक्रयविक्रयाद्यम् ॥ २१ ॥

मघा विशाखा भरणी च मूलं पूर्व्वत्रयम्पन्नगकृत्तिके च ।
अधोमुखं प्रोक्तमिदं प्रशस्तमधोमुखं कार्य्यमशेषमेव ॥२२॥

अजमकरतुलाभृत्कर्कटाःपार्श्ववक्त्रा
युवतिमिथुनमीनान्युन्मुखाः [3]कौर्पिकश्च ।

---

१ सुरगुरूद्देश्य । २ ऊर्ध्वरोहोचितं । ३ कौक्षिकश्च ।

Aho ! Shrutgyanam

वृषभकलशसिंहा वृश्चिकश्चोर्ध्ववक्त्रा
विविधविधिषु युक्ता योजयेद्दृष्टिलग्नम् ॥ २३ ॥
अमुक्तमस्तितश्चैव काङ्क्षितं रैचितं क्रमात् ।
ऊर्ध्वतीर्य्यगधोवक्त्रं भवनं कल्पितं परे ॥ २४ ॥
रुद्राहिमित्रपितृवासववारिभानि
विश्वाभिजित् कमलजन्मविशाखभानि ।
शक्रौषधीशवरुणार्य्यमभाग्यभानि
एतानि पञ्चदश सन्ति दिवा मुहुर्त्ताः ॥२५॥

इति दिवामुहुर्त्ताः ।

———o———

निशार्य्यभोपान्त्यहलिभियाश्वि
यमाग्निवेधः शैशिभादिनिड्याः ।
कृष्णार्कचित्रानिलभान्यमूर्त्तिः
निशामुहूर्त्ताः कथिताः क्रमेण ॥ २६ ॥

इति निशामुहुर्त्तम् ।

———o———

मुहुर्त्ते तावन्नाड़ीनां द्वयं द्वयमुदीरितम् ।
अनुकूलविधिस्तस्य चन्द्रनक्षत्रवद्भवेत् ॥ २७ ॥
सविता भार्गवःसोमश्चान्द्रो मन्दो गुरुःकुजः ।
वारे षट् पञ्चमस्तेषां भुक्तिःसार्द्धद्वयं घटी ॥ २८ ॥

इति कालहोरा ।

———o———

यत्र राशौ स्थितश्चन्द्रस्ततः प्रभृति कल्पयेत् ।
यावदृष्टोदयस्तावच्चैरमादिपदैः क्रमात् ॥ २९ ॥

---

१ रचितः । २ शशिभादिनिड्यं । ३ चरद्वादि ।

Aho ! Shrutgyanam

घरःसुखी मृतस्तुष्टो वालश्च ज्वरितो नृपः ।
भयार्त्तःक्षुधितःकामी निद्रालुःरसिकःशशी ॥ ३० ॥

इति चन्द्रावस्था ।

———o———

अवस्था शशिनःषष्टिर्नक्षत्रे नाडिकावशात् ।
तत्र मेषादिसंज्ञाःस्युः पञ्चपञ्चकलाः क्रमात् ॥ ३१ ॥
स्थानभ्रष्टस्तपोगिण्यः परनारीरथःक्रमात् ।
गुरुर्नागाधिरूढश्च क्रियाःस्युर्मेषपञ्चके ॥ ३२ ॥
सिंहासनस्थितो राजा मन्त्रिभिः सहितःशशी ।
रिपुहारी च सेनानीर्गुणा वृषभपञ्चके ॥ ३३ ॥
प्राणहर्ता शिरश्छेत्ता पाणिपादनिकृन्तकः ।
बन्धको देवरोषीच दशा मिथुनपञ्चके ॥ ३४ ॥
राजा च देवाध्यायी च स्वापी धर्म्मस्थितःशशी ।
धर्म्मकर्त्ता च पञ्चेताः क्रियाःस्युः कर्कपञ्चके ॥ ३५ ॥
साध्वससम्भवश्चन्द्रो निधिजन्मातुरागतः ।
वाक्ययुक्तोवसञ्चारी क्रियाःस्युःसिंहपञ्चके ॥ ३६ ॥
ज्वराप्तः पतितस्थानाद्देशान्तरगतोऽलसः ।
[4]दिशन्त्युचितवित्तञ्च गुणाःस्त्रीपञ्चके क्रमात् ॥ ३७ ॥
आस्थानस्थो भवेच्चन्द्रो मन्त्रिभिःसह मन्त्रयेत् ।
[5]परराष्ट्रगतो [6]द्वेषी गजहस्तौलिपञ्चके ॥ ३८ ॥
समन्त्री युद्धभीरुश्च भयार्तो विप्रभोजकः ।
कृशानुपतितश्चेति क्रियाःवृश्चिकपञ्चके ॥ ३९ ॥
क्षुधारसस्थश्चान्यत्र विचरन् [7]नरमांसभुक् ।
कुदारसहितश्चन्द्रो गुणाःस्युःचापपञ्चके ॥ ४० ॥

---

१ यालार्थः । २ संज्ञायुः । ३ गुरोनाधिसाधिरूढश्च । ४ दिसन्त्युपिन विस्तश्च । ५ चरराष्ट्रा । ६ वोषा । ७ नारामांसभृक् ।

Aho ! Shrutgyanam

विवाहेविभ्रमश्चन्द्रः स्त्रीभिः क्रीडागतस्ततः ।
दूते रतो महाराजः दुःखी मकरपञ्चके ॥ ४१ ॥
शेते रिपुर्नृपःसेव्यः समित्रं क्षितिपस्ततः ।
ध्यानकं मुनिभिःसार्द्धं सजानिघटपञ्चके ॥ ४२ ॥
सुमृष्टानासनश्चन्द्रः प्रवासभयविह्वलः ।
दाता नृत्य[2]विकल्पस्थः क्रियाःस्युर्मीनपञ्चके ॥ ४३ ॥
एवं चन्द्रगुणास्तेषु शुभेषु शुभमाचरेत् ।
सर्व्वदोषाः विनश्यन्ति विशेषनाशनाविधौ ॥ ४४ ॥
प्रश्नकाले च चद्रोऽयं शुभो यदि शुभप्रदः ।
इत्येवं शशिनःषष्टिर्देहष्पतिमते दशा ॥ ४५ ॥
नाडीचन्द्रःस्वोच्चे भवति च दीप्तःस्वस्थःस्वगृहे सुहृद्गृहे ।
मुदितःभानुःशुभवर्गस्थः शक्ता स्याद्व्यक्तरश्मिश्च ॥४६॥
विकलो रविलुप्तकरो ग्रहाभिभूतःप्रपीडितश्चैव ।
पादयुतश्चैव खलो नीचो भीतः समाख्यातः ॥४७॥
शाल्मल्ये कुङ्कुमान्नैस्त्रिकटुकसहितैर्दाधिकान्नैःकपित्थे
रक्तैर्भक्तैः कदम्बे धृतगुणसहितैः क्षीरभक्तैश्च निम्बे ॥
अस्वत्थे पोतभक्तैर्धृतविदलधनैर्नक्तमाले वटाख्ये
कृष्णान्नैःपूतिमांसैः प्रभृतिरविदिनादर्च्चयेदिक्षु नाथान् ४८॥

सीमन्तपुंसवननामविधानमौल
विद्योपनीतकृषिबीजलवाग्रहश्च ।
राजाभिषेकनववेश्मपुरप्रवेश
श्राद्धक्रियाःक्रतुभुजाम्प्रतिमाप्रतिष्ठा ॥ ४९ ॥

एतेषां सविता देवः प्रभायोगः प्रभास्वतः ।
ततःप्राह्णे च मध्याह्ने कर्त्तव्यः शुभकाङ्क्षिभिः ॥ ५० ॥

---

१ विस्वलः । २ तिकल्पस्थः । ३ विलङ्गसर्णैः ।

अङ्कुरार्प्पणमाधानं विवाहः शिशुभोजनम् ।
एतेषां चन्द्रमा देवः कर्त्तव्यस्तु ततो निशि ॥ ५१ ॥
पूर्व्वाह्णे वापराह्णे वा स्नानञ्च श्रुतिवेधनम् ।
केचिदाहुर्दिवारात्रावभिषेकविधिं विदुः ॥ ५२ ॥
यात्रावस्त्रचिकित्साद्यः दिवा रात्रौ च सम्मतः ।
तत्र तत्रोचितस्थाने न विशेषविधिर्य्यदि ॥ ५३ ॥
कन्यानां वरणे चैव तथा पुंसवनेऽपि च ।
सीमन्ते बालभुक्तौ च मूढशुक्रो न दोषकृत् ॥ ५४ ॥
मासि कृत्येषु कार्य्येषु गूढत्वे जीवशुक्रयोः ।
नदोषकृत्तदामासलक्षणं बलवद्यतः ॥ ५५ ॥
मङ्गलानां हि सर्व्वेषामङ्कुरार्प्पणमादितः ।
विधेयं विधिवत्तस्मात्तदत्र प्रतिपद्यते ॥ ५६ ॥
अङ्कुरार्प्पणमिच्छन्ति मङ्गल्यारम्भतःपुरा ।
तृतीये पञ्चमे वापि सप्तमे नवमेऽह्नि वा ॥ ५७ ॥

श्रेयो विधातुरनुकूलदिने शुभानां
वारेषु दोषरहितेषु शुभे विलग्ने ।
तारापतौ बलिनि पश्यति भार्गवोऽयं
बीजार्प्पणं मिलितबन्धुजनैर्विधेयम् ॥ ५८ ॥

अश्वत्थपत्रदुर्व्वाभिर्य्युक्तपादाः शरावकाः ।
विशुष्कगोशकृच्चूर्णसिकतापूरिताःशुभाः ॥ ५९ ॥

अध्मानशङ्खगहितामितभूरिभेरीं
ध्यात्वा श्रियं भगवतीं भवने कृतार्घ्ये[1] ।
क्षीरप्लुतानि च वपेत्तिलमासकादि-
बीजानि पूर्व्वकथितेषु शरावकेषु ॥ ६० ॥

---

१ कृतार्घे ।

Aho ! Shrutgyanam

पिपीलिकाद्यैरिह कीटजातैरुपद्रुता वा यदि नोपरूढा ।
शुष्काश्च ताम्राः कुटिला विरूपा बीजाङ्कुरा विघ्नभयं विदध्युः ६१
शीतलाह्लादिना दीर्घपत्रपुत्रसमाकुलाः ।
अङ्कुराः सिद्धिदातारो भवन्ति कुटिलेतराः ॥ ६२ ॥
अभितःस्थापयेत्प्राज्ञः साक्षिणे भाविशर्म्मणः ।
तृणाङ्कुरशरावस्तु सर्व्वमङ्गलमण्डले ॥ ६३ ॥

इति सामान्यविधिर्नामएकविंशोऽध्यायः ॥

द्वाविंशोऽध्यायः ॥

—ooo—

अनभिज्ञातदेशस्य वपस्य न हि पुष्कलम् ।
अतःप्रवक्ष्ये संक्षेपाद्दोषनिश्चयलक्षणम् ॥ १ ॥
द्विदैवताद्यैरुडुभिः क्रमेण
चतुश्चतुर्भिर्मिहिरादिवाराः ।
एकैकशः सम्मिलिता भवन्ति
वियोगविद्वेशमृता मृताख्याः ॥ २ ॥
अर्कादिवाराश्शरवेदशैलनागेन्दुरामद्वितिथिप्रयुक्ताः ।
द्विदैवतान्त्याजपुरन्दरार्य्य सौरीज्यवह्निश्रयिणोविनाशः
वाराःशनिप्रभृतयःप्रतिलोमवृत्या
पौष्णादिभिः सहगतास्तु चतुश्चतुर्भिः ।
योगाःक्रमेण गदिताः स्थिरवर्द्धमान
वारर्क्षयव्ययमतङ्गजमौषलानि ॥ ४ ॥
पीयूषशूलनामा च सिद्धिःकाकोऽथ मृत्युकः ।
उत्पातो लम्बकः कम्पो नित्रकच्छत्रश्च मुद्गरः ॥ ५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

वज्रे श्रीवत्सकः केतुर्ध्वान्तः काकोदरःप्रजा ।
धूमःकालश्च दण्डश्चाप्यानन्दश्चेति दर्शितः ।
अष्टविंशति योगाः स्युः स्वनामसदृशम्फलम् ॥ ६ ॥
भौमार्कतारयोर्मूलं यत्सङ्ख्या स्यात्ततःपरम् ।
क्रमेण तारा तत्सङ्ख्या स्थुनकण्टक एव च ॥ ७ ॥
ज्वाला स्याद्रक्तनक्षत्रात्पञ्चविंशञ्च षोडशम् ।
तत एव नलज्वाला सप्त पञ्च चतुर्दशम् ॥ ८ ॥
बुधाधिष्ठितनक्षत्रान्महाकण्टकदूषणम् ।
अष्टादशचतुर्विंशमष्टमञ्चेतिभत्रयम् ॥ ९ ॥
जीवभार्गवताराद्यं सप्तमं नवमञ्च भम् ।
व्याधि क्रमादपगतमितिदोषद्वयं भवेत् ॥ १० ॥
खण्डनं दशमं षष्ठं विंशर्क्षं शनितारकात् ।
एकादशं पञ्चमञ्च परिघो वक्रराहुतः ॥ ११ ॥

अतीतवारा मिहिरादथस्ते
त्रिसङ्गुणान्मण्डलतो विशोध्यः ।
तत्रान्तिमाद्या धनरूपमीनाः
काणा अनन्धा इतराश्च ताराः ॥ १२ ॥

सप्तभागूपश्चिमःसप्त सौम्ययाम्यश्च राजयः ।
समन्तात् कोष्टचक्रे स्याद् भगनःकार्त्तिकादिकः ॥ १३ ॥
ग्रहाःक्रूराःशुभाबाथ यद्द्रेकायामवर्त्तिनः[2] ।
तद्रेकाभिमुखी तारा महाशूलेति विश्रुताः ॥ १४ ॥
वृषसिंहालिकुम्भानामर्के पञ्चमभागगे ।
षडाशीति मुखं नाम सभागःशुभकर्म्मनुत ॥ १५ ॥
श्रीमत्सुबोधाचार्य्येण सन्दर्भोऽयं प्रकाशितः ।

---

१ यंसांख्या । २ यद्रेकायामवास्ततः ।

Aho ! Shrutgyanam

सुविचार्य्य ततः कार्य्यमारभेत विचक्षणः ॥ १६ ॥
विशाखादित्रयं याम्यशशाङ्कःशङ्करो मघा ।
तिथयःशैलवेदार्का निन्दिता रविवासरे ॥ १७ ॥
विशाखादिद्वयं वह्निराप्यादिद्वितयं मघा ।
तिथयश्चाङ्करुद्राख्याः नेष्टा वारे हिमत्विषः ॥ १८ ॥
विष्णुवारुणदेवेन्द्रवासवाजकपालिनः ।
शराद्रिछिद्रदिक्सङ्ख्याःतिथयो न शुभाः कुजे ॥ १९ ॥

वसुयमभयमूलान्त्याजभैश्चान्द्रिवारः
तिथिभिरभिदिशाग्निद्रेकैकैश्चावयोगः ।
जलधिशशिभगार्द्रारोहिणीभैर्य्युतो वा
तिथिभिर्ऋतुनवाष्टाङ्कैर्य्युतो जीववारः ॥ २० ॥

पुष्यादिभत्रयं शुक्रो विशाखादिद्वयं विधिः ।
दिक्छिद्राद्रिद्विनागाख्याः स्वास्तिथयो न शुभाःसिते॥२१॥
आर्य्यमादित्रयं पूषा श्रवणाप्यपुनर्व्वसुः ।
तिथयःशैलनागाङ्करुद्राख्या न शनौ शुभाः ॥ २२ ॥

इत्यवयोगः ।

भानुभानुजभौमानां वारवर्गाश्च पापकाः ।
तेषां तु शुभदृष्टस्य भानोर्वारो न दूष्यते ॥ २३ ॥
[2]षट्वेदनागाङ्कदशाष्टभानुविकूदश्रभान्वब्धिकराह्वयाश्च ।
विदध्युरेतास्तिथयोऽग्निभीतिं क्रमेण मेषादिगते खरांशौ ॥२४॥
भान्वादिवारेषु कृशानुचित्राब्रह्मान्तकार्द्राश्रवणान्त्ययुक्ताः ।
वाणाक्षिपूर्णे चलकामषष्ठीभुजङ्गमाख्यास्तिथयो विषाख्याः॥२५॥

इति विषयोगः ।

---

१ खै । २ षट्वेग ।

Aho ! Shrutgyanam

चतुर्थी नवमी चैव तथैवाथ चतुर्दशी ।
त्रीणि रिक्ता दिनान्येवं पक्षयोर्वर्ज्जयेद् बुधः ॥ २६ ॥
चतुर्नवचतुर्दश्याश्चादिमध्यान्ततत्समा ः।
कलास्तत्कालिका रिक्ता भयदा प्राणहारिणी ॥२७॥

इति रिक्ता ।

———o———

तोयर्क्षमाद्यया युक्तमनुराधा द्वितीयया ।
त्र्युत्तराश्च तृतीयायां पञ्चम्यां [1]वह्निपैतृभे ॥ २८ ॥
सप्तम्यां हस्तमूले द्वे अष्टम्यां पूर्व्वभद्रभम् ।
दशम्यां रोहिणीञ्चैव द्वादश्यां [2]सूर्य्यतारका ॥ २९ ॥
विश्वदेवं त्रयोदश्यां बधनक्षत्रमिष्यते ।
शुभकर्मात्र कुर्व्वाणः षण्मासान्मृ[3]त्युमाप्नुयात् ॥ ३० ॥

इति बधयोगः ।

———o———

चैत्रे शून्ये रोहिणीदस्रभे द्वे विश्वे चित्रा कृत्तिका माधवे स्युः ।
शुक्रे मासे चादितिर्भे हि शून्यं स्यादाषाढे वा समं भाग्यभञ्च ३१॥
पूर्व्वाषाढे श्रावणे शून्ययोगः शून्ये रेवत्यश्विभे भाद्रपादे ।
शून्यात् पूर्व्वाभाद्रपादाश्विनेये मासे वोर्ज्जे कृत्तिका चन्द्रभञ्च ३२
चित्राविशाखोत्तरभाद्रपादसहैव पौषे शिवभानुभे द्वे ।
माघे तु मूलश्रवणे च शून्ये ज्येष्ठाभरण्यां च तपस्यमासे ॥३३॥

इति मासशून्यम् ॥

———o———

---

१ वह्निपैत्रभेः । २ सर्प्पतारका । ३ मन्यमाप्नुयात् ।

Aho ! Shrutgyanam

चैत्रादिषु सिते पक्षे तिथयःप्रथमादयः ।
कृष्णे क्रमाद् द्वितीयाद्या द्वादशा यान्ति शून्यताम् ॥३४॥

इति तिथिशून्यम् ।

———o———

कुम्भश्च मत्स्यं वृषभं यमश्च वस्तं कुमारीमथ वृश्चिकञ्च ।
तुलान्धनुःकर्कटकञ्च नक्रं सिंहश्च चैत्रादिषु शून्यमाहुः॥३५॥

इति लग्नशून्यम् ।

——:o:——

भानुस्थितर्क्षात् शशिरामवह्निषड्वह्निषड्वह्निगुणाश्च ताराः ।
कानश्च वह्नित्रयगाद्विषट्काः सम्पूर्णनेत्राःस्युरथान्यथोऽन्धाः३६

इत्यस्वयोगः ।

——:o:——

शुक्ले विष्टिर्दिवाष्टम्यां पौर्णमास्यां तथा तिथौ ।
एकादश्यां चतुर्थ्याञ्च विष्टिःपश्चिमभागगा ॥ ३७ ॥
कृष्णे विष्टिश्चतुर्दश्यां सप्तम्यां पूर्व्वभागगा ।
दशम्याञ्च तृतीयायां विष्टिःस्यादपरार्द्धगा ॥ ३८ ॥
सुजाष्ट्रणी सिते पक्षे गाजिज्ञूढ सितेतरे ।
विष्टिस्तात्कालिकाहलूतु तिथौ यामादिशेश्वराः ॥ ३९ ॥
ईटेसे हन्ति ग्राहकावितिविष्टेर्दिशातिथिः ।
पालनीयो नमो नागो नैव नारी नता पुनः ॥ ४० ॥

इति विष्टिः ।

——:o:——

कृतान्तरुद्रासर्प्पाग्निज्येष्ठा चैव त्रिपूर्व्वका ।
मघा चेन्द्राग्निरित्येते पापाः सामान्यतो दश ॥ ४१ ॥

१ गीद्रा ।

Aho ! Shrutgyanam

व्याघातःपरिघो वज्रं व्यतिपातोऽथ वैधृतिः ।
गण्डातिगण्डशूलानि विष्कम्भो नव पापिनः ॥ ४२ ॥

इति पापनक्षत्रम् ।

———:o:———

आद्यंशको हस्तधनिष्ठयोश्च द्वितीयपादःशिवसर्प्पयोश्च ।
उपान्त्यमाशोश्विपयोस्तृतीये मूले भरण्यां दिनमृत्युरन्त्ये ४३

इति दिनमृत्युः ।

———:o;———

चरेषु सप्तमं भानोः स्थिरराशिषु पञ्चमम् ।
उभयोर्नवमं भागं षडाशीति मुखं विदुः ॥ ४४ ॥

इति षडाशीतिमुखम् ।

———ooo———

रविस्थतर्क्षाद्दशमे च सप्तमे त्रिसप्तके पञ्चदशे च भे शशी ।
रविस्थितांशे न समांशकस्थितः करोति तापं कमलापतेरपि ४५॥
स्थिते भानुस्थभाच्चन्द्रे चतुर्थे धूमकेतुकः ।
परिधिन्नवमे धिष्णे षड्विंशे व्यतिपातकः ॥ ४६ ॥

इति सप्तसूर्य्यदोषः ।

———:o:o:o:———

स्फुटे विनिक्षिपद्भानोर्नागहेमधनम्बुधः ।
चन्द्रे सूरसमिद्वह्निर्भौमे धनुरसायनम् ॥ ४७ ॥
बौधे ज्ञानदयशाक्रे शौक्रे रोगक्षयाश्रयम् ।
अज्ञाननिर्भयंमान्दे राहौज्ञानशुभाभयम् ॥ ४८ ॥

---

१ अद्यांशके ।

Aho ! Shrutgyanam

विशुद्धमण्डलादेते चन्द्रस्फुटसमा यदि ।
रश्मिदोषांश्च यांस्तेषु शुभकर्म्मणि नाचरेत् ॥ ४९ ॥

इति रश्मिदोषः ।

---o---

वामेऽक्ष्णि मृगशीर्षञ्च दक्षिणेऽक्षणि ह्यद्रभम् ।
पृच्छे च मूलं मत्स्यस्य लिखेदन्यानि पार्श्वयोः ॥ ५० ॥
अन्योन्याभिमुखर्क्षस्थौ यदि भानुनिशाकरौ ।
तन्नक्षत्रयुगं बेधो न तत्र शुभमाचरेत् ॥ ५१ ॥
त्रिंशत्त्रिंशत्कला भानोः सङ्क्रान्तावभितस्त्यजेत् ।
पञ्च पञ्च दिनान्येव जीवेन्मूढे समन्ततः ॥ ५२ ॥
चिरं मुह्यति चेच्छुक्रः सप्तभान्यभितस्त्यजेत् ।
गुरोः सप्तमराशिस्थस्त्याजः शुक्रस्तु मूढवत् ॥ ५३ ॥
त्रिशिखं पूर्व्वतः शूलं त्रयं पश्चात्त्रिदण्डकम् ।
लिखेन्द्रोकाष्टकान्तीर्य्यक् तत्र भानुस्थकारकम् ॥ ५४ ॥
मध्यमस्य त्रिशूलस्य मध्येऽन्यस्याथ सव्यतः ।
गणयेन्न[1]च शूलस्थास्तारा नेष्टा पराःशुभाः ॥ ५५ ॥

इति सूर्य्यशूलम् ।

---ooo---

अर्द्धचन्द्राकृतिं कृत्वा तत्र कोष्ठश्च मध्यमे ।
त्रिशूलं त्रिशिखं तेषां मध्यःपार्श्वद्वये ततः ॥ ५६ ॥
त्रींस्त्रीन् बिन्दुन् बिलिख्यात्र मध्यशूलस्य मध्यमे ।
न्यस्यार्कस्थितभं सव्याद् गणं शूलगतं त्यजेत् ॥ ५७ ॥

इति चन्द्रशूलम् ।

---o---

१ नव ।

Aho ! Shrutgyanam

नक्षत्रतारकातुल्यतिथिर्यत्र समागता ।
तद्दिनं हतकार्य्याख्यं न तत्र शुभमाचरेत् ॥ ५८ ॥
रविन्दुस्फुटयोगर्क्षं चतुर्द्धा तत्र निक्षिपेत् ।
प्रियं दानं जयं द्वीपं नवभिस्तानि भाजयेत् ॥
यद्येकमपि शून्यं स्याद्वर्ज्जनीयं हि तद्दिनम् ॥ ५९ ॥

इति चतुर्द्दोषः ।

———000———

रविन्दुस्फुटयोगर्क्षं सप्तधा विनिवेशयेत् ।
मानं चापं धनं रूपं दानं देयं [1]नयानिति ॥ ६० ॥
संयोज्य सारसम्भक्ते शून्यं यदि विवर्ज्जयेत् ।
एकमप्यत्र शून्यं चेन्न तत्र शुभमाचरेत् ॥ ६१ ॥

इति सप्तदोषः ।

———000———

ताराग्रहस्य वैकस्य विभक्ते भवनद्वये ।
तिष्ठतश्चन्द्रसूर्य्यौ चेद्व्यतिवातःसराशिजः ॥ ६२ ॥
स्फुटे कमलिनीबन्धौ नीङ्गजन्मधनं क्षिपेत् ।
धूमस्फुटःसविक्षेयः समचक्राद्विशोधितः ॥ ६३ ॥
व्यतिपातो भवेत् सोऽपि नागलोकसमायुतः ।
परिवेश्यो भवेदेषः पुनश्चक्राद्विशोधितः ॥ ६४ ॥
भवेदिन्द्रधनुस्तत्र निक्षिपेन्नगतोटकम् ।
सकेतुर्नागपुत्राङ्के क्षिपेन्निर्घातको मतः ॥ ६५ ॥
[2]सैचनागकुलैर्य्युक्तं परिघः परिकीर्त्तितः ।
नागलोकयुतः सोऽपि [3]वाङ्गादण्डोऽभ्युदीरितः ॥ ६६ ॥

इत्यष्टमदोषः ।

———000———

१ नयानिति । २ पब । ३ जीवाङ्गदण्डो ।

Aho ! Shrutgyanam

सच ज्ञानधनायुक्तः प्रथमोऽर्कस्फुटो भवेत् ।
चन्द्रस्फुटसमा एते चाष्टौ दोषाय कल्पिताः ॥ ६७ ॥
भौमाच्छोध्या भवेयुश्चेत् सिंहस्याष्टादशांशकाः ।
तद्युक्ततारकं रक्तस्फुटाख्यं न शुभावहम् ॥ ६८ ॥
तत्तद्वारे समारभ्य भुंजीत[1] क्रमशो ग्रहाः ।
कलाश्चतस्रःपादोनं प्रत्येकं प्रतिवासरम् ॥ ६९ ॥
तेषु सौम्यो गुरुःसौरी क्रमादर्द्धप्रहारकः ।
यमदण्डश्च गुलिकस्तेषां भुक्तिं विवर्ज्जयेत् ॥ ७० ॥

इत्यर्द्धप्रहारयमदण्डगुटिकाः ।

———ooo———

नमवरनगनागी[2] वायुकाया नगज्ञा
नरफलननगनारी दायरेखा नराणाम् ।
घटचटनटचाटी नीरवारानिरत्नं
नयनृ[3]पभयतोयं वैरिनागा इति स्युः ॥ ७१ ॥
सङ्ख्याकलानन्तुरगादिभानामेतासु नाडीषु गतासु तत्र ।
कलाश्चतस्रो विषनामधेयाः कुर्य्याद्विषञ्चात्र शुभं न कुर्य्यात् ७२

इति नक्षत्रविषघटिका ।

———ooo———

कन्याजमीनधनुषां प्रथमो भुजङ्गो
गोसिंहतौलिघटमध्यम एव गृद्धः ।
गुग्मालिकर्किमकरान्त्यगतो वराह-
स्त्र्यंशान् वदन्ति विषमत्र शुभं न कुर्य्यात् ॥ ७३ ॥

इति लग्नविषघटिका ।

———ooo———

१ भुञ्जीर-भुञ्जितम् । २ नाभी । ३ हर ।

Aho ! Shrutgyanam

विना द्वितीयां दशमीं पक्षयोरुभयोरपि ।
युग्माःस्युस्तिथयः सर्व्वाः पक्षच्छिद्राह्वया इति ॥ ७४ ॥

इति पक्षच्छिद्रः ।

———०००———

यस्मिन्नास्त्यर्कसंक्रान्तिः संक्रान्तिद्वयमेव वा ।
संसर्पाहस्पती मासौ श्रुत्युक्तौ[1] शुभवर्ज्जितौ ॥ ७५ ॥

इति वर्ज्ज्यमासम् ।

———०००———

पञ्चमे भवने सूर्य्याद्रश्मिकूपःप्रतिष्ठितः ।
तस्मिन्नाचरितं कर्म्म स्वामिनाशाय वर्त्तते ॥ ७६ ॥
रविन्दुयोगश्चक्रार्द्धं व्यतिपातोऽथ वैधृतिः ।
चक्रे तु मैत्रपर्य्यन्तं कथ्यते सर्प्पमस्तकम् ॥
ग्रहोऽस्तमेति यत्रर्क्षे तन्मासैः शुध्यति त्रिभिः ॥ ७७ ॥

इति रश्मिकूपः ।

———०००———

घटिकाद्वयमृक्षान्ते मासान्ते च दिनत्रयम् ।
ग्रहणे सप्त चाहानि वर्णान्ते पक्षमुत्सजेत् ॥ ७८ ॥

दिग्दाहधूमपरिवेशशिवारुतादौ
सन्ध्याघनस्तनितविग्रहशक्रचापे ।
देवोत्सवादिषु च राजमृतौ हिमान्धे
नैवाचरन्ति शुभकर्म्मविधिं विधिज्ञाः ॥ ७९ ॥

जन्मार्क्षाद् दशमं कर्म्म षोडशं घातमादिशेत् ।
अष्टादशं समुदयं गर्भमेकोनविंशभम् ॥ ८०

---

१ इत्युक्तौ ।

Aho ! Shrutgyanam

त्रयोविंशञ्च वै नाशं पञ्चविंशञ्च मानसम् ।
एतानि परिवर्ज्जन्ते सर्व्वत्र शुभकर्म्मणि ॥ ८१ ॥
जन्मकर्म्माष्टमेषाणां मित्रमिन्दुर्न दोषकृत् ।
कृष्यादौ योजयेदेतत् सर्व्वं वहुगुणे सति ॥ ८२ ॥
दग्धमालिङ्गितं धूम्रं नक्षत्रं परिवर्ज्जयेत् ।
ग्रहविग्रहवक्रेभ्यः मुक्तःसन्मासतःशुभम् ॥ ८३ ॥

इत्यन्तदोषम् ।

———ooo———

धिषणाधिष्ठितादाशेः द्वादशं षष्ठमष्टमम् ।
भवनं शीतगे याते शकटः कैश्चिदिष्यते ॥ ८४ ॥
उच्यते शकटःकैश्चिज्जीवस्थानान्निशाकरे ।
हित्वोच्चस्वसुहृत्क्षेत्रमष्टार्था[1]रिव्ययर्क्षगे ॥ ८५ ॥
चन्द्रे गुरोररिवधौ व्ययराशियाते
जीवोपभुक्तनवभागसमांशकस्थे ।
योगो हि नाम शकटो बधबन्धदः स्यात्
पूर्णस्तदा तदशुभक्षयदश्च एव ॥ ८६ ॥

इति शकटयोगः ।

———o———

अवविषवधयोगाः बन्धनं कण्टकाख्यो
दिनमृतिशकटाख्यो ज्वालिका ज्वालिकाग्नेः ।
[2]कुहदिनगुलिकाख्या विष्टिसंक्रान्तिरिक्ता
दिनकरशशिशूला बन्धभा शून्यलग्नम् ॥ ८७ ॥
सर्प्पमूर्द्धौ व्यतीपातो वैधृतिःसूर्य्यदूषणम् ।
हतयोगश्च नक्षत्रलग्नयोर्विषलिप्तिका ॥ ८८ ॥

---

१ मश्यार्थ । २ कुभ ।

Aho ! Shrutgyanam

षड्विंशातिरिमे दोषाः दोषेषु बलवत्तराः ।
अवश्यं परिहर्त्तव्याः सर्व्वमङ्गलकर्म्मणि ॥ ८९ ॥

इति षड्विंशाति दोषनाम ।

ये दोषास्तिथिनक्षत्रवारराशिग्रहोद्भवाः ।
ते जीवदृष्टाःक्षीयन्ते मुनिनामारसैन्यवत् ॥ ९० ॥
करणश्च ततस्तारा तिथिर्होरा ग्रहोदयः ।
ग्रहाश्चेति बलीपङ्क्त्या पादवृद्ध्या बलप्रदाः ॥ ९१ ॥
स्ववर्गस्थाःबलाढ्याश्च शुभाःकेन्द्रत्रिकोणगाः ।
सम्पूर्णदर्शनाः सौम्याः दृष्टिदोषविनाशकाः ॥ ९२ ॥
दुर्व्वला बहवो दोषा बलिभिःकतिचिद् गुणैः ।
हन्यन्ते योजयेत्तस्मादल्पदोषगुणाधिकम् ॥ ९३ ॥
एषु सर्व्वेषु दोषेषु शुभकर्म्म नचाचरेत् ।
पराभिन्नारकर्म्मदौ दोषाः सर्व्वेऽपि सिद्धिदाः ॥ ९४ ॥

इति दोषप्रवादः ।

इति दोषशुद्धिविधानं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ।

त्रयोविंशोऽध्यायः ।

अतःपरं गर्भदशाविधानं प्रणीयते तत्र च सङ्गृहीतम् ।
आसेवनं पुंसवनं तथैव सीमन्तकर्म्मापि यथाक्रमेण ॥१॥
उपचये नरराशिसमाश्रिते
हरिणलक्ष्मणि भौमनिरीक्षिते ।

Aho ! Shrutgyanam

मृगदृशाम्प्रतिमासमृतुस्रवं
किल भवेद् दिवि शास्त्रविदो विदुः ॥ २ ॥
चित्रादित्यन्त्यविश्वेभ्यो नक्षत्रेषु त्रिषु त्रिषु ।
स्वमृत्युर्धननाशश्च दुःखं पतिवधः क्रमात् ॥ ३ ॥
अनुक्तास्तारकाःसर्व्वा योषितां प्रथमार्तवे ।
स्वभर्तृवन्धुमित्राणां मन्दा नन्दनहेतवः ॥ ४ ॥
ऋतुस्रावो यदि स्वापे भोगिनी कुलटागतौ ।
आसने सुखिनी नारी भर्तुर्मरणदा स्थितौ ॥ ५ ॥
ऋतुरक्ते जपावर्णे पुत्रिणी धनिनी घने ।
असिते दुःखभाग्नारी धूम्रे भाग्यविवर्जिता ॥ ६ ॥
निम्बपत्रैर्भुजङ्गत्वक्श्लेष्मातकदलान्वितैः ।
वराङ्गं धूपयेन्नारी रजःपतनकाङ्क्षिणी ॥ ७ ॥
उपचयभवनेन्दौ जीवसौम्यप्रदृष्टे
स्वपति महिमहासा राजमित्रं कुजेन ।
रमयति कितवं सा भार्गवेन प्रवृद्धि
[1]भृतकमिनसुतेन स्यात् समस्तैश्च वेश्या ॥ ८ ॥
हरिर्हस्तानुराधा च स्वातिः पौष्णा च वारुणा ।
त्रीण्युत्तराणि मूलश्च रोहिणी चोत्तमा स्मृता ॥ ९ ॥
चित्रादितीन्दवास्तिष्यास्तुरगश्चेति मध्यमाः ।
जन्मत्रयसमायुक्ताः शेषाःशेषे विनिन्दिताः ॥ १० ॥
अष्टमी पर्व्वरिक्ताभिर्वर्ज्जितास्तिथयः शुभाः ।
चरःश्रेष्ठःस्थिरःस्वामी युक्तः दृष्टःशुभप्रदः ॥ ११ ॥
शेषे प्रशस्ताः सौम्यानां वारवर्गो दयोदयः ।
दशमात्मजयोः शुक्रश्चन्द्रो लग्ने बुधो धने ॥ १२ ॥

---

१ भ्रतकमिन ।

Aho ! Shrutgyanam

स्वांशकं वा स्वराशिं वा सितार्कौ यद्युपाश्रितौ ।
त्रिकोणस्थौ बली जीवो योगोऽयं परमो मतः ॥ १३ ॥
पुत्रार्थिनी पिबेत् क्षीरं श्रीमूलं शवटाङ्कुरम् ।
तद्रसन्नासिदद्याच्च नरस्त्रीपुटयोः क्रमात् ॥ १४ ॥
वसुधां न स्पृशेत्पद्भ्यां न स्थीयात्तद्दिने सदा ।
अश्नीयादौषधे जीर्णे सक्षीरं घृतपेशलम् ॥ १५ ॥

स्त्रीणामृतुर्भवति षोडशवासराणि
तत्रादितस्तु परिहृत्य निशाश्चतस्त्रः ।
युग्मासु रात्रिषु नरं विषमासु पुत्री
[1]मिच्छन्निसेवनविधिं विदधीत धीमान् ॥ १६ ॥

गर्भदोषहरंक्षीरे कतकास्तिपिवेद्वधूः ।
गर्भो न तिष्ठेद्यस्याःसा दग्धा वन्ध्यारजो लिहेत् ॥ १७ ॥
रक्तेऽधिके स्त्री पुरुषस्तु [2]शुक्रे नपुंसकं श्रोणितशुल्कसाम्ये ।
यस्मादतः [3]शुक्रविवृद्धिहेतोः कन्दर्पिकद्रव्यरसं निसेव्य ॥१८
स्रग्गन्धधूपाम्बरभूषिताङ्गो नाध्मानरूपः क्षुधितो न चापि।
नारीमृतुस्नानविभूषिताङ्गीं पतिश्च सद्धामपुटारमेतः ॥१९॥

इति गर्भदानम् ।

———ooo———

मासे तृतीये शशिवृद्धिपक्षे तिथौ प्रशस्ते प्रकृतौ विशेषात् ।
चन्द्रेऽनुकूले कुजजीवभानुवारेषु सत्पुंसवनं विधेयम् ॥२०॥
सौम्ये भयाषाढकभाद्रपादपुष्येऽथमूलादिति विष्णुहस्ताः ।
बुधैस्तुलावृश्चिकचापमीनसिंहोदयाःपुंसवने प्रशस्ताः ॥२१॥
अष्टमस्थाःग्रहाःसर्व्वे नेष्टा पुंसवने बुधैः ।

---

१ मिच्छन्निशेकनविधिं । २ शुक्रे । ३ शुक्रे ।

Aho ! Shrutgyanam

रविमन्दकुजाक्रान्तं मृगाङ्कं सप्तमं त्यजेत् ।
विवाहयात्राप्रासादकार्य्ये पुंसवनेऽपि च ॥ २२ ॥
कुष्ठी लग्नगते रवौ क्षितिसुते स्याद पित्तरोगान्वितो
वातार्त्तो दिनकृत्सुतेन शशिना क्षीणेन याति क्षयम् ।
ज्ञानी चन्द्रसुतेन शुद्धवपुषा शुक्रेण भाग्यान्वितो
दीर्घायुस्तरुणेन्दुना च गुरुणा यज्वार्थशास्त्रप्रदः[1] ॥ २३ ॥
षड्जगन्धारगेयाश्च वीणावेणुस्वनाःशुभाः ।
शङ्खतूर्य्यनिनादाश्च हिताःपुंसवने सदा ॥ २४ ॥
स्थापयेत् सलिलैर्गाङ्गैः सामुद्रैरपि तीर्थजैः ।
पुण्याहवादनिर्घोषैः समन्त्रैरभिषेचयेत् ॥ २५ ॥
शीघ्रुन्यग्रोधमूलानि रक्तस्वेतेन तन्तुना ।
कटीसूत्रवदावर्षा दध्यादापुत्रजन्मनः ॥ २६ ॥
बद्ध्वा गले पुष्करवीजमालामीषानमन्त्राहरणेन सार्द्धम् ।
तस्मिन् दिने सा गुरुगर्भवत्सा रक्षा विधेया पुरुषैःसहास्त्रैः २७

जह्याद्विरुद्धमशनं दृढभर्तृसङ्गं
सन्ध्यादिनानि सुरसद्मवनप्रयाणम् ।
शय्यामृतप्रसवया गमया च सार्द्धं
नारी ततः प्रभृतिसिन्धुसमागमञ्च ॥ २८ ॥

अपुत्रिणी वा या नारी प्रायो वा मृतपुत्रिणी ।
विधिरेखा हितं न स्याद् विशेषाद् गर्भरक्षणे ॥२९॥

इति पुंसवनाविधिः ।

———ooo———

मासे षष्ठेऽष्टमे वा वलिनि तदधिपे शीतगौ चेष्टदृष्टे
पुन्नामर्क्षे प्रयाते नरभवननवांशोदये गर्भिणीनाम् ।

---

१ शास्त्रप्रदः । २ डाह्न ।

Aho ! Shrutgyanam

कुर्य्यात् सीमन्तकर्म्म त्रिदशपतिगुरौ केन्द्रगे कोणगे वा
पापान्मन्यायविद्वन् सहजभवनगे गर्भनिष्पादनार्थी ॥३०॥
प्रजापसैन्दवादित्यपुष्यहस्तोत्तरत्रये ।
पौष्णवासवयोरिन्दुः शुभःसीमन्तकर्म्मणि ॥ ३१ ॥
तिथयःशोभनाश्छिद्ररिक्ताविष्टिविवर्ज्जिताः ।
शुभग्रहाणां कल्याणवारवर्गोदयोदयः ॥ ३२ ॥
भद्रकर्म्मशुभांशेन्दोर्ल्लग्नस्थानां सितेज्ययोः ।
पापात्मनामदृष्टश्च शुभःसीमन्तकर्म्मणि ॥ ३३ ॥
यानि पुंसवनोक्तानि विधानानि विशेषतः ।
तानि सर्व्वाणि निपुणः कुर्य्यात् सीमन्तकर्म्मणि ॥३४॥

इति सीमन्तविधानम् ।

नवग्रहान् क्रमेणैव सर्षपैःसाक्षतैर्ल्लिखेत् ।
अर्च्चयेद्धूम्रमालाद्यैः प्रसवेरिष्टमन्दिरे ॥ ३५ ॥
आढरूषकजं मूलं पर्णं वापम्फणोद्भवम् ।
नाभेरधःसमालिम्पेत् प्रसूते प्रमदासुखम् ॥ ३६ ॥
लाङ्गल्याःकाकमाच्याःवा मूलं लिम्पेत् सकाञ्जिकम् ।
प्रसूते मूढगर्भापि नारीसहजमायुना ॥ ३७ ॥

इति प्रसूतविधानम् ।

इति गर्भदशाविधानं नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ।

चतुर्विंशोऽध्यायः ।

श्रीकौमारदशाविधानमधुना संक्षेपतःकीर्त्त्यते

Aho ! Shrutgyanam

सञ्जातस्य विधिःशिशुग्रहबलिर्बालाभिधानाक्रिया ।
वेधःकर्णयुगस्य निष्क्रमविधिर्गेहात्ततः प्राशनं
क्षौरश्चेति वयःक्रमेण विधयस्सप्तात्र सन्दर्शिताः ॥ १ ॥
कुमारग्रहनाशाय बालारिष्टजयाय च ।
ग्रहाणां सम्प्रसादाय जातकर्म्म विधीयते ॥ २ ॥
जातकर्म्मविधिं प्राहुः कुमारे जातमात्रके ।
प्राङ्नाभिकर्त्तनस्नानादथवा स्तनपानतः ॥ ३ ॥
त्रिष्वतीतेषु कालेषु शुभयोगे शुभोदये ।
जातकर्म्म ततःकुर्य्यादायुःश्रीवृद्धिहेतवे ॥४॥
तातः शुचिस्नानविभूषिताङ्गः प्रमोदवान् मङ्गलवाद्यवाद्यैः ।
आनन्दितः शङ्खमृदङ्गनादैः कलामिवेन्दोस्तनयं निरीक्ष्य॥५॥
दूर्व्वाक्षतप्रशस्तधूपदीपैर्नत्वा ततोरिष्टग्रहात्प्रधानम् ।
तद्धान्यपञ्चोर्ध्वगतः कुमारमाघ्राय शीर्षे जपमारभेत ॥६॥
लग्नायाहं ददामि त्वां तदह्ने तन्निशे ततः ।
सोऽप्यहोरात्रकालाय सोऽर्द्धमासाय दास्यते ॥ ७ ॥
सम्पूर्णाय मासाय समतुभ्यः प्रदास्यति ।
संवत्सराय ते दद्युरसावब्दशताय च ॥ ८ ॥
तत्तुभ्यमभयं दद्यादित्येवमभयं वदन् ।
प्राङ्मुखो मूर्ध्नि हेमाम्भः शीकरैरभिषिञ्चतु ॥ ९ ॥
खट्वारोहश्च कर्त्तव्यो द्वादशे दशमेऽथवा ।
षोडशेवापि दिवसे द्वात्रिंशे वापि जन्मतः ॥ १० ॥
बालैः सेव्या वचासाज्या सदुग्धावाथ तैलयुक् ।
यष्टिकां सङ्खपुष्पिं वा बालः क्षीरान्वितां पिबेत् ॥११॥
वाग्रूपसम्पद्रक्षायुर्बलं श्रीश्च प्रवर्द्धते ।
वचाज्याग्निशिवावाशा शुण्ठी कृष्णा निशागदम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

सयष्टिसैन्धवं वालं प्रातर्म्मेधाकरं लिहेत् ॥ १२ ॥

इति जातकर्मविधिः ।

———ooo———

अथ जातदिने वत्सं ग्रही गृह्णाति पद्मिनी
गात्रोद्वेगा निराहारा लालाग्रीवाविवर्त्तनम् ॥ १३ ॥
तच्चेष्टितमिदन्तस्य मन्त्राणाञ्च बलिं हरेत् ।
मत्स्यमांससुराभक्तगन्धस्रग्दीपधूपितैः ॥ १४ ॥
लिम्पेत्तद्वनकीलोध्र मञ्जिष्ठातालचन्दनैः ।
महिषाक्षेण धूपश्च द्विरात्रे भीषणी ग्रही ॥ १५ ॥
तच्चेष्टाकाशनिःश्वासौ गात्रसङ्कोचनं मुहुः ।
साजमूत्रैर्लिपेत्कृष्णा सैन्ध्यापामार्गचन्दनैः ॥ १६ ॥
गोशृङ्गदन्तकेशैस्तु धूपयेत्पूर्ववद्बलिम् ।
ग्रही त्रिरात्रे घण्टाली तच्चेष्टाक्रन्दनं मुहुः ॥ १७ ॥
जृम्भनं स्तनितत्रासो गात्रोद्वेगमरोचकम् ।
केशराञ्जनगोहस्तिदन्तसाजपयो लिपेत् ॥ १८ ॥
नखराजीं निम्बदलैर्धूपयेच्च वलिं हरेत् ।
ग्रही चतुर्थी काकोली गात्रोद्वेगः प्ररोदनम् ॥
फेणोद्गारो दिशादृष्टि कुल्माषैः सर्षपैर्बलिः ॥ १९ ॥
गजदन्ताहिनिर्मोकावाजीमूत्रैः प्रलेपयेत् ।
प्रट्ङ्कारितु ग्रही षष्ठी त्रासो मोहप्ररोदनम् ॥ २० ॥
निराहारोऽङ्गविक्षेपो हरोन्मत्तादिकाबलिम् ।
राजीगुग्गलुकुष्ठेभदन्ताज्यैर्धूपलेपने ॥ २१ ॥
मुक्तकेशी ग्रही वालं दिने गृह्णाति सप्तमे ।

---

१ क २ । सासपैर्बलिः ।

नादःप्ररोदनं काशःपूतिगन्धश्च जृम्भणम् ॥ २२ ॥
धूपो व्याघ्रनखैर्लेपो वचामूत्रत्वगामयैः ।
त्रिदण्डी चाष्टमी जिह्वा चालनं त्रासरोदनम् ॥ २३ ॥
दिशानिरीक्षणे देयो मत्स्यादिः सर्व्वतो बलिः
बचालसुनसिद्धार्थहिङ्गुभिर्धूपलेपने ॥ २४ ॥
महामहेसी नवमी तच्चेष्टा त्रासरोदनम् ।
उद्वेजनोर्ध्वनिःश्वासौ स्वमुष्टिद्वयखादनम् ॥ २५ ॥
वक्रचन्दन कुष्ठोग्रा सर्षपैर्लेपयेच्छिशुम् ।
कपिरोमनखैर्धूपदशमी रोदनी ग्रही ॥ २६ ॥
तच्चैष्टा रोदनं शश्वत् सुबन्धो नीलवर्णता ।
धूपो निम्बेन कुष्ठोग्राराजीसर्ज्जरसैर्लिपेत् ॥ २७ ॥
वलिश्च निर्हरेल्लाजाकुल्माषचरकोदनैः ।
यावत्त्रयोदशाहं स्यादेवं धूपादिका क्रिया ॥२८॥
गृहूणाति माषिकं वत्सं पूतनासकुणी ग्रही ।
काकवद्रोदनं स्वासो गृध्रगन्धोऽक्षिमीलनम् ॥ २९ ॥
रक्तमूत्रश्च कृच्छ्रेण गोदन्तनखधूपनम् ।
पीतवस्त्रं दिशेद्रक्तं स्रग्गन्धं तैलदीपनम् ॥ ३० ॥
त्रिविधं पायसं मद्यं तिलं मांसं चतुर्विधम् ।
करजायो यमदिशि सप्ताहं तैर्बलिं हरेत् ॥ ३१ ॥
द्विमासिकश्च मकुटा वपुःपीतश्च शीतलम् ।
स्नानपानं न रोचेत तच्छर्द्दि मुखशोषणम् ॥ ३२ ॥
श्रीवाचि वृत्तनिष्पन्दाः पायसं तिलतण्डुलम् ।
अपूपमोदनं दीपं पुष्पगन्धांशुकानि च ॥ ३३ ॥
कृष्णानि दीपयेत्तस्य दीपं तैलेन सर्व्वतः ।
धूपयेन्निम्बपत्रैस्तु कुशुम्भलसुनीयुतैः ॥ ३४ ॥
तृतीया गोमुखी तस्याश्चेष्टा निद्रा प्ररोदनम् ।

Aho ! Shrutgyanam

गोगन्धो मधुगन्धो वा विन्मूत्रश्रवणं तथा ॥ ३५ ॥
जपाप्रियङ्गु पललं कुल्माषं शाकमोदनम् ।
क्षीरञ्च पिण्डकं दीपं दत्वा प्राच्यं बलिं हरेत् ॥ ३६ ॥
मध्याह्ने पञ्चपत्रेण स्नानं धूप्येत सर्षपैः ।
चतुर्थी पिङ्गला गात्रशोषणं दारुणो रवः ॥ ३७ ॥
विश्रम्भेन पयःपानम्पूतिगन्धः सिता तनुः ।
भुजस्य कम्पनं तस्याश्चिकित्सा न विधीयते ॥ ३८ ॥
पञ्चमी लवना गात्रसादनं मुखशोषणम् ।
श्रद्धया पायसम्पानं पीतवर्णं प्ररोदनम् ।
मत्स्यमांशान्नशाकाद्यैः पिष्टभेदैर्बलिं हरेत् ॥ ३९ ॥
मध्याह्ने दक्षिणाशायां षण्मासे पङ्कजी ग्रही ।
तच्चेष्टारोदनं कुक्षिशूलनं विक्रमस्वराः ॥ ४० ॥
शिखिकुक्कुटमेषाणां मांसं सक्तुकुलत्थकम् ।
मांसौदनं सुरापुष्पगन्धादिस्तैर्बलिं हरेत् ॥ ४१ ॥
शीतला सप्तमे मासे [1]निराहारोऽङ्गमाटनम् ।
दन्तखाद्याघ्राति गन्धः समाषान्नसुरातिलैः ॥ ४२ ॥
पद्मादिपुष्पकुल्माषपिष्टशाकैर्बलिं हरेत् ।
अष्टमे यमुनामोहस्तनितं मुखशोषणम् ॥ ४३ ॥
स्फोटिकाःसर्षपाकारास्सर्व्वगात्रेषु कम्पनम् ।
चिकित्सा नच कर्त्तव्या नवमी कुम्भकर्णिका ॥ ४४ ॥
अश्रद्धया पयःपानं तच्छार्दिर्दारुणो ज्वरः ।
रोदनं पाटलो गन्धी मांसं मत्स्यसुरापयः ॥ ४५ ॥
कुल्माषमन्नं पललं गन्धपुष्पञ्च दापयेत् ।
ऐशानीं दिशमाश्रित्य मध्याह्ने बलिमाहरेत् ॥ ४६ ॥

---

१ नीराहारोतमाटनम् ।

Aho ! Shrutgyanam

तापसी दशमे मासे निराहारोऽक्षिमलिनम् ।
उद्वेदनश्च गात्राणां पीत्तं रक्तमथोदनम् ॥ ४७ ॥
घण्टा पताका पिष्टोत्था मत्स्यमांससुरासवम् ।
सौम्यायां दिशि मध्याह्ने बलिमेभिःसमाहरेत् ॥ ४८ ॥
बलिमेकादेशे मासे ग्रही गृह्णाति राक्षसी ।
तच्चिह्नं नेत्रयोरन्धं तस्य नैव चिकित्सितम् ॥ ४९ ॥
चपला द्वादशे मासे त्रासःस्वासश्च चेष्टितम् ।
कुल्माषपुंष्पदग्धान्नतिलचूर्णैर्विधानवित् ॥ ५० ॥
माहेन्द्रदिशि मध्याह्ने सप्तरात्रिं बलिं हरेत् ।
एताःस्युर्मासिकं ग्राह्यं पूतनापदपूर्वकात् ॥ ५१ ॥
द्वितीये वत्सरे वालं ग्रही गृह्णाति यातना ।
पतनं रोदनं दाहो निराहारोऽक्षिमीलनम् ॥ ५२ ॥
मत्स्यमांसं तिलं मद्यं गुलं स बोलिका दधि ।
कुल्माषलाजागन्धादिस्तैः प्राच्यां वलिमाहरेत् ॥ ५३ ॥
स्नानं पञ्चदलैर्धूपं केशगोदन्तगोक्षुरैः ।
तृतीये वत्सरे वालं ग्रही गृह्णाति रोदनी ॥५४॥
विन्मूत्रसक्तसंमिश्रज्वरो हस्तस्य कम्पनम् ।
प्ररोदनं मुहुर्गात्रं पद्मकेशरसन्निभम् ॥ ५५ ॥
गुलोदनं तिलं पूपं कुल्माषं स्विन्नफलं गृषम् ।
दधिसक्तुफलं लाजा प्रतिमाशालिपिष्टजा ॥ ५६ ॥
एभिःस पुष्पगन्धाद्यैः प्राच्यां दिशि बलिं हरेत् ।
स्नापयेत् पञ्चपत्रैस्तु धूपैराजीफणित्वचा ॥ ५७ ॥
चतुर्थे चटकासोमो ज्वरःसर्व्वाङ्गसादनम् ।
अवीक्षणं मन्दाहारो वामपादस्य कम्पनम् ॥ ५८ ॥

---

१ दध्यन्न ।

Aho ! Shrutgyanam

तिललाजान्नकुल्माष मत्स्यमांससुरादधि ।
प्रतिमां फलकस्थाञ्च कौबेर्यां दिशि दापयेत् ॥ ५९ ॥
स्नानं पञ्चदलैर्धूपः पिञ्जेन क्षुररोमभिः ।
चञ्चला पञ्चमे वर्षे ज्वरस्त्रासोऽङ्गसादनम् ॥ ६० ॥
बालस्य तिलकृष्णान्नैः कालेऽनुक्ते बलिं निशि ।
धूपयेन् मेषशृङ्गेण स्नानं स्यात् पञ्चपत्रयुक् ॥ ६१ ॥
पलासो दुम्बरास्वत्थवटविल्वदलं हितत् ।
धावती वत्सरे षष्ठे वैवर्णं मुखशोषणम् ॥ ६२ ॥
उद्वेजनं बहुमूत्रस्त्रवणं गात्रसादनम् ।
तिलोद्भवसुरामत्स्यमांसैःपक्वसुरादधि ॥ ६३ ॥
कृसरं पायसश्चैभिः सप्तरात्रिं बलिं हरेत् ।
स्नानं पञ्चदलैर्धूपो लशुनीकेशरादिभिः ॥ ६४ ॥
सप्तमे यमुनाच्छार्दिनाना हारोऽङ्गसादनम् ।
मत्स्यं मासं सुरासक्तुकृसरम्पायसं दधि ॥ ६५ ॥
एभिःस बोलिकापूपैस्त्रिरात्रि च हरेद्बलिं ।
स्नानं पञ्चदलैर्धूपो गोशृङ्गक्षुररोमभिः ॥ ६६ ॥
जाते चेदष्टमे वर्षे निराहारः प्रकोपनम् ।
मत्स्यमांसं दधि क्षौद्रं घृतान्नं पायसं पयः ॥ ६७ ॥
एतैश्च कृसरापूपैर्बलिं दत्वार्द्धरात्रतः ।
चत्वरस्ते तिलैःकुण्डे पञ्चाहममुना हुनेत् ॥ ६८ ॥
कुष्माण्डिनी भगवती रजनी समुदिताधुना ।
ज्ञापयति मुञ्चदह सरबालकान् गच्छ ॥ ६९ ॥
राजी निम्बदलैर्धूपः कालिनी नवमी ग्रही ।
तच्चेष्टा गर्ज्जनं त्रासो बाह्वोरस्फोटनं मुहुः ॥ ७० ॥
बलिःस्यात्कृसरापूपसक्तुकुल्माषपायसैः ।
ॐ मुञ्चपञ्चदहजय आगच्छ बालिके ॥ ७१ ॥

Aho ! Shrutgyanam

अनेन पूर्व्ववद्बुध्वा कुर्य्यात् स्नानं सधूपनम् ।
दशमे कलहंसी स्याद्दाहोऽङ्गकृशता ज्वरः ॥ ७२ ॥
बोलिकापूपदध्यन्नैः पञ्चरात्रिं वलिं हरेत् ।
लेपयेत्तं वचाकुष्टलशुनैः सर्षपान्वितः ॥ ७३ ॥
धूपं निम्बदलैःकुर्य्यात् सगोरोमगजद्विजैः ।
एकादशे देवदूती हासःपानाशनं बहु ।
विकारा बहवोऽङ्गानां नित्यं [1]वल्हीनधावनम् ॥ ७४ ॥
यामियामीतिविन्मूत्रस्रवणं स्वगृहे क्षणम् ।
गात्रोद्वेगोऽक्षिरोगश्च क्रीडनं निष्ठुरं वचः ॥ ७५ ॥
कोद्रवान्नं लाजदधि कुल्माषपूपबोलिकाः ।
पक्कं मांसं स्विन्नमत्स्यं मद्यं पुष्पं हयारिजम् ॥ ७६ ॥
बलिःस्यात् कुंकुमाद्यैःस्यात् स्नापनं पञ्चमात्रिकम् ।
धूपयेत्तगरोपेतैर्महिषाक्षनखामयैः ॥ ७७ ॥
बालिका द्वादशे वर्षे श्वासो नयनयोर्गदः ।
काकारवश्च तच्चेष्टा शाककुल्माषसक्तवः ॥ ७८ ॥
बोलिकामोदकापूपसक्तुलाजपयोघृताः ।
गुलं पक्कं मत्स्यमांसं त्रिरात्रं तैर्बलिं हरेत् ॥ ७९ ॥
राजिनिम्बदलैर्धूपो वायसी च त्रयोदशे ।
तच्चेष्टा मुखवाद्याङ्गं सादनं मुखशोषणम् ॥ ८० ॥
रक्तान्नगन्धमालाद्यैर्बलिःपञ्चदलैःश्रवः ।
राजीनिम्बदलैर्धूपो यक्षिणी च चतुर्दशे ॥ ८१ ॥
शूलनं ज्वरदाहौच पिबेच्चाभ्यञ्जयेत् घृतम् ।
शाल्योदनं सुरामांसमत्स्यकुल्माषपायसैः ॥ ८२ ॥
सलाजकृषरैर्दद्यान्मध्याह्ने त्रिदिनं वलिम् ।
स्नानं पञ्चदलैःकुर्य्यान्मुञ्चकास्यात् त्रिपञ्चके ॥ ८३ ॥

---

१ वल्कल ।

Aho ! Shrutgyanam

तच्चेष्टासृक्श्रवःशश्वत् कुर्यान्नात्र चिकित्सितम् ।
वानरी षोडशे भूमौ वादो निद्रा सदा ज्वरः ॥ ८४ ॥
पायसं केवलं पूपं कुल्मापं कृषरं सुरा ।
एतैःसफल्गुषैःकुष्टैः प्रदोषे त्रिदिनं बलिः ॥ ८५ ॥
स्नानं पञ्चपत्रेण धूपनं चन्दनेन च ।
पद्मगन्धीसप्तदीशे गात्रोद्वेगःप्ररोदनम् ॥ ८६ ॥
मुञ्चामीतिवचोहासः स्नापयेत् पञ्चपत्रकैः ।
कुल्माषकृषरापूपातिलपिष्टान्नफल्गुषैः ॥ ८७ ॥
सलाजदधिभिःप्राच्यां मध्याह्ने त्रिदिनं बलिः ।
धूपेनवाजगोशृङ्गैः कुमारी बालिका ततः ॥ ८८ ॥
पूर्व्वाश्च वर्षिका ग्राह्यं कुमारीपदपूर्व्विका ।
तच्चेष्टा वमनं स्वाशो निराहारोऽङ्गसादनम् ॥ ८९ ॥
नास्ति तस्य चिकित्सैवं प्रोक्ता बालग्रहाःपृथक् ।
ओंचामुण्डे सावरीकण्टनकेशी भगवति ह्रींहुं ॥ ९० ॥
मुञ्च रक्षां कुरुकुरुबलिं गृह्णफट् ।

बालग्रहेषु बलिदानकृदेषमन्त्रः ।

ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च स्कन्दो वैश्रवणस्तथा ।
रक्षन्तु त्वरितं बालं मुञ्चयन्तु कुमारकम् ॥ ९१ ॥

नीराञ्जनाय बलिकर्म्मविधौ स्मृऽतोयम् ।

ह्रींकुष्माण्डकारिणं दूषणा
भगवती चामुण्डेओंमुञ्च ॥
दहसरबालकान् गच्छ गच्छ
होमंतिलाविभिरत्रैःकरोतु मन्त्री ॥

चामुण्डे नमोहिन्येषु ओंह्रींदुष्टग्रहानहुं तत्र ।
गच्छन्तु गुग्रहुका यत्रस्थानकुरुकुरु रुद्रो ज्ञापयति ॥

Aho ! Shrutgyanam

स्यात्सर्व्वकर्म्मकयङ्चवरोभिषेके ॥ चण्डौ मकण्णविनलौ
विनिष्टौचान्तःसनासार्द्ध शशीवचण्डम् ॥ हुंफट्
शिरोऽन्तो मनुरेषहन्यादुबालग्रहान् क्लृप्तजपादिकर्म्म ॥
तारालुयुग्ममुदकं शिर एभिरन्नैः
शक्तिव्रता च शिशुना चवती शशाङ्के ।
अर्द्धेन्दुकैर्बहिरधोवदनैः परीत-
चक्रं तदाशु शिशुरोदनमुत्क्षिणोति ॥ ९२ ॥

इतिबालग्रहविधिः ।

——:o:——

ब्राह्मणे द्वादशे क्षात्रो दशमेऽहनि जन्मतः ।
वैश्यस्तु षोडशे शूद्रो द्वात्रिंशे नाम कारयेत् ॥ ९३ ॥
उत्तराशुश्रविष्टायां रेवतीहस्तयोरपि ।
मूलवारुणिपुष्येषु श्रवणादित्ययोरपि ॥ ९४ ॥
रोहिणीस्वातिमैत्रेषु सोत्सवं नाम कारयेत् ।
उक्तावधिव्यतिक्रान्तौ सहान्नप्रासनेन वा ॥ ९५ ॥
विदोषास्तिथयःशस्ताः सौम्यवारोदयादयः ।
द्वादशस्थानगा नेष्टाः सर्व्वे स्युर्नामकर्म्मणि ॥ ९६ ॥
राशयस्तु स्थिरश्रेष्टाः द्विस्वभावाः शुभैर्य्युताः ।
शिष्टास्तु सशुभाश्चापि नेष्टाःस्युर्नामकर्म्मणि ॥ ९७ ॥
त्रिषडायगताः पापाश्चन्द्रो लग्नगतःशुभः ।
शुक्रो भवो गुरुःकेन्द्रे व्ययं शुद्धञ्च शोभनम् ॥ ९८ ॥
मेषादिषट्सु युगलोकधनं जयाग्नि
रामद्रिकाश्चरगताः कथिताः क्रमेण ।
काद्यास्तुलादिषु च पञ्चसु पञ्चवर्गाः
याद्या भवन्ति लिपयश्चरमे च राशौ ॥ ९९ ॥

१ सेवती ।

Aho ! Shrutgyanam

राज्यलाभोपकाराय प्रारभ्यारिःखरःकुरुः ।
गोपालककुटिम्प्रायफुल्लापीसक्षरःक्रमः ॥ १०० ॥
अश्विन्यादिषु विज्ञेयः स्वरान्तौ रवतीयुजौ ।
लचटतपादावर्गाःकुजभृगुबुधजीवभानुपुत्राणाम् ।
शशिनो याद्या वर्गाः स्वरास्त्वकारादयोर्कऽस्य ॥ १०१ ॥

सर्व्वादिमध्यान्तगलौ त्रिकौ तौ
म्नौभ्यौजरौस्तौ च गणाः क्रमात्ते ।
भूस्वर्गचन्द्राम्बुविवस्वदग्नि
वाव्यम्बराख्याश्च तथा स्युरष्टौ ॥ १०२ ॥

शुभाःस्युःस्थिरराशीनां क्षितिचन्द्रार्कवायवः ।
चराणाञ्चैव राशीनां द्योसमुद्राम्बरानिलाः ।
शोभनाः द्विस्वभावानामिन्दुक्षितिनभोनलः ॥ १०३ ॥
ग्रहनक्षत्रराशीनामक्षरैश्च गणैरपि ।
सुहृन्नामाक्षरं प्रायं युग्माक्षरसमाह्वयम् ॥ १०४ ॥
इदं विधानमुद्दिष्टं गीतेऽपि श्लोकबन्धने ।
वीरनाम्नि च मन्त्रे च मित्रेऽपि च विशेषतः ॥ १०५ ॥
बालिशं भूषयेत् प्राज्ञो बलयैः कटिदामभिः ।
अष्टाविंशे दिने चाथ द्वात्रिंशे वापि जन्मतः ॥ १०६ ॥

इति नामविधिः ।

———o———

कर्णवेधेऽङ्गहानिःस्यात्तया लक्ष्मीक्षयो भवेत् ।
इति मत्वा न कुर्वन्ति केचिच्छ्रवणवेधनम् ॥ १०७ ॥
अङ्गहानिर्यदि प्राहुः कर्णवेधनमात्रतः ।
कथं नु विदधीरन्ते पूर्व्वतो नाभिकर्तनम् ॥ १०८ ॥
सतः शास्त्रानुसारेण विधेयं श्रुतिवेधनम् ।

---

१ सुहृत्तमाक्षरः ।

Aho ! Shrutgyanam

जन्मतो दशमे चाह्नि द्वादशे वाथ षोडशे ॥ १०९ ॥
सप्तमे मासि वा कुर्य्यादष्टमे वा विचक्षणः ।
उक्तकालव्यतिक्रान्तावायुग्माब्देऽपि कारयेत् ॥ ११० ॥
पुष्यादितिश्रवणसोमशिवश्रविष्ठाः
तिष्योत्तरत्रयसहस्रकराः प्रशस्ताः ।
पर्व्वाष्टमीविरहितास्तिथयो विरिक्ता
विष्टीतराश्च शुभदाः शुभवासराद्याः ॥ १११ ॥
वृषवर्जाःस्थिराःसर्व्वे न शुभा मकराजहौ ।
मध्यमा अवशिष्टास्तु शोभनाः कर्णवेधने ॥
रन्ध्रारिव्ययगोनेष्टो गुरुःशेषेषु शोभनः ।
सुतरन्ध्रगताःसौम्याः नेष्टाः स्युः कर्णवेधने ॥ ११२ ॥
षट्सप्ताष्टमगः शुक्रो न शुभोऽन्यत्र शोभनः ।
इन्दुस्तृतीये पुत्रस्त्री धर्म्मकर्म्मायगः शुभः ॥११३॥
विशुद्धमष्टमस्थानं पापाश्च त्रिषडायगाः ।
लग्नं वृहस्पतिक्षत्रं शोभने कर्णवेधने ॥ ११४ ॥
अभ्यर्च्य दैवज्ञभिषग्वरेण्यौ समङ्गलं शङ्खमुदङ्गनादैः ।
यथाक्रमं दक्षिणवामकर्णौ पुंसास्त्रियोस्तौ विपरीतवेध्यौ ११५
कुटजं नरवीरञ्च साङ्गलीं चित्रकं तथा ।
अपामार्गोऽश्वगन्धा च शुष्कं संचूर्ण्य तैलयुक् ॥ ११६ ॥
लेपयेत् कर्णवल्यन्तु मांसलावस्थिरा भवेत् ।
इदं सर्व्वत्र निर्दिष्ट मूनावयवपूरणे ॥ ११७ ॥
अश्विनीहस्तमैत्रेषु शुभवारांशकोदये ।
सम्पूर्णमण्डले चन्द्रे दापयेच्छ्रुतिभूषणम् ॥ ११८ ॥
संक्षा लोके पशूनाञ्च दाशानाञ्च विधीयते ।

---

१ लोम ।

Aho ! Shrutgyanam

शुभार्त्तौ दाहविच्छेदे कर्णवेधविधिर्य्यथा ।। ११९ ।।

इति कर्णवेधविधिः ।

उपनिष्क्रमणं नाम ग्रहात्प्रथमनिर्गमः ।
आयुस्तेजोबलोद्दीप्तैर्विधिरेष विधीयते ॥ १२० ॥
चतुर्थे मासि भूदेवास्तृतीये वसुधाभुजः ।
विशोऽन्नप्रासने कुर्य्युः शुद्रास्तु द्वादशेऽहनि ।। १२१ ।।
मित्रोत्तरत्रयतुरङ्गमृगश्रविष्टा
राधाविधात्रमधुजिद्भगनाःप्रशस्ताः ॥
कन्यातुलानिमिषवृश्चिकराशयश्च
शस्ता विदोषतिथयोऽपि च सौम्यवाराः ॥ १२२ ॥
भूरिपुष्पनिकरं सतोरणं तोयपूर्णकलसोपशोभितम् ।
धूपगन्धबलिपूजितं द्विजं प्रोक्तवेदमिह मण्डपं शुभम्॥१२३॥
मातुलो वा पिता बालं शुचिस्नानविभूषितम् ।
मण्डपं तदुपानीय धान्यपद्मे निवेश्य च ।। १२४ ।।
सूर्य्यं सन्दर्शयेत्तस्मिन् सादरञ्च प्रणामयेत् ।
अथ दूर्वाक्षतैः रत्नहेमाम्भोभिश्च सेचयेत् ।। १२५ ।।

इत्युपनिष्क्रमणविधिः ।

अन्नेन स्फीयते लोकस्त्रिवर्गश्च प्रवर्त्तते ।
भोक्तृभोज्यानयत्केतत् प्रवक्ष्ये लक्षणं लघु ।। १२६ ।।
ब्रह्मक्षत्रिययोः शस्ता युग्मा मासाः शुभप्रदाः ।
अभिष्टा विषमा मासाः भोजने वश्यशूद्रयोः ॥ १२७ ॥
पञ्चशाद्दिवसात्प्रात् पश्चात्त्रिहतषाष्ठिकात् ।
अर्द्धांशे चोत्तमा भुक्तिर्मासकालस्तु सावणात् ॥ १२८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

पौष्णादितीन्दुहस्ताश्वि[1]त्वष्ट्रावायव्यविष्णवम् ।
रोहिणीचैत्रतिष्येव वारुणा चोत्तरत्रयम् ॥ १२९ ॥
श्रविष्ठा च तथा हेते षोडशान्नासने शुभाः ।
भोक्तुर्नवत्वे सम्प्रोक्तास्ते च नूतनभोजने ॥१३०॥
मघा विशाखा मूलाच शिष्टा नेष्टास्त्रयोऽपिच ।
शिष्टे तु भरणी कैश्चिच्छुभदृष्टाच्छुभाःस्मृताः ॥ १३१ ॥
पक्षच्छिद्रश्च विष्टिश्च रिक्ताश्चैव विवर्ज्जयेत् ।
शुभानां विगतेन्दूनां वारासाद्याःसुशोभनाः ॥ १३२ ॥
वृषचापघटाःकन्यातुलानक्रमृगाधिपाः ।
कर्क्किकत्वे ते शुभाःप्रोक्ता नवत्वे भोक्तृभोज्ययोः ॥१३३॥
कुजक्षेत्रश्च मीनश्च न कदाचिच्छुभप्रदम् ।
मध्यमं मिथुनं प्रोक्तं राशीनां केवलं फलम् ॥ १३४ ॥
निन्दिता भोजने जन्मविपत्प्रत्यारिमृत्यवः ।
ग्रहाःकर्म्मगताः सर्व्वे शिशोःप्राणविनाशकाः ॥१३५॥
कुजोऽष्टमे शशी लग्ने सप्तमे सितचन्द्रजौ ।
नेष्टौ बुधमहीपुत्रौ तथैवाष्टमधर्म्मगौ ॥ १३६ ॥
भुक्तौ शुभकरो योगो जीवे केन्द्रे त्रिकोणगे ।
त्रिषडायास्तथैकास्मिन् क्रूरे बलसमन्विते ॥ १३७ ॥
इन्दुस्सत्कर्म्मकर्ता चेच्छुभांशे गुरुवीक्षितः ।
शुभो यदि बली केन्द्रे योगोऽयं बहुसिद्धिदः ॥ १३८ ॥
शुक्ले पक्षे शुभांशस्थे चन्द्रे जीवे त्रिकोणगे ।
शुक्रे च कण्टके लग्ने योगोऽयश्च मृतोपमः ॥ १३९ ॥
नानाविधैर्मङ्गलतूर्य्यनादैः पुण्याहघोषेण च मोदमानम् ।
बालं शुचिस्नानविभूषिताङ्गं

---

१ त्वाष्ट्रावासवद्यविष्णम् ।

Aho ! Shrutgyanam

पिता च मातापि च भोजयेत्तम् ॥ १४० ॥
पूर्णेन्दुमण्डलं तत्स्थं जलं वा चतुरीयकम् ।
ध्यात्वा तं भोजयेदेवमायुरारोग्यमश्नुते ॥ १४१ ॥
शुभाङ्कस्थे निशानाथे रोहिण्यां पितृभेऽथवा ।
वहसादिफलान्यग्रात् सिंहलग्ने शुभेक्षिते ॥ १४२ ॥
फलाग्रभुक्तौ तु झषः प्रसूनःपर्णाग्रभुक्तावजवृश्चिकौ च ।
वृक्षो क्षणो वाजिगजोपभुक्तौ बालान्नभुक्ताविव सर्व्वमाहुः १४३
नवे कनकपात्रादौ कटकादौ च नूतने ।
अन्नप्रासनवत् प्राहुर्विधानं विधिवेदिनः ॥ १४४ ॥

इत्यन्नप्रासविधिः ।

कुर्व्वन्त्सकाले ये क्षौरं तेषां वर्षशतायुषाम् ।
अर्व्वाग्मरणमभ्येति ततः क्षौरं विचारयेत् ॥ १४५ ॥
तृतीयेऽब्दे शिशोर्गर्भात्पञ्चमे सप्तमे ऽपि वा ।
सहोपनयने वापि केचित् क्षौरविधिं जगुः ॥१४६ ॥
वर्ज्जयेद् दधिमासञ्च दक्षिणायनमेव च ।
उपरागावसानञ्च मूढत्वं जीवशुक्रयोः ॥ १४७ ॥
चित्राश्विनीमृगशिरोऽदितिहस्तपौष्णा
ज्येष्ठासुरेढ्यहरयः प्रवरास्तु चौले ।
स्वात्युत्तरत्रयधराम्बुधयश्च मध्यः
सौम्योदयांशकदिनानि शुभावहानि ॥ १४८ ॥
पर्व्वरिक्ताष्टमी षष्ठी प्रतिपद्द्वादशी तिथिः ।
वर्ज्जनीयाः शुभाःकेचित् पूर्णञ्च द्वादशीं विदुः ॥ १४९ ॥

---

१ विधिवेधिनः ।

Aho ! Shrutgyanam

बनारससंस्कृतसीरीज़नाम्नी वाराणसेयसंस्कृतपुस्तकावली ।

इयं पुस्तकावली खण्डशो मुद्रिता भवति । अस्यां संस्कृतभाषानिबद्धा बहवः प्राचीना दुर्लभा उत्तमोत्तमाः क्वचिदङ्गलभाषानुवादसहिताश्च ग्रन्था मुद्रिता भवन्ति । तांश्च ग्रन्थान् काशिकराजकीयसंस्कृतपाठशालीयपण्डिता अन्ये ऽपि विद्वांसः शोधयन्ति । यैर्ग्राहकमहाशयैरियं पुस्तकावली नियमेनाविच्छेदेन संग्राह्या तैस्त्वेकैकस्य खण्डस्य ।॥) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देयः । अन्यैर्महाशयैर्यैः कानिचित् खण्डानि संग्राह्याणि तैश्च प्रत्येकं खण्डानां) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देय इति ॥

तत्र मुद्रिता ग्रन्थाः ।	रु०	आ०
सिद्धान्ततत्त्वविवेकः खण्डानि ५	५	०
अर्थसङ्ग्रहः अंग्रेजीभाषानुवादसहितः	१	०
तन्त्रवार्त्तिकम् खण्डानि १३	१३	०
कात्यायनमहर्षिप्रणीतं शुक्लयजुःप्रातिशाख्यम् सभाष्यं ख० ६	६	०
सांख्यकारिका चन्द्रिकाटीकागौडपादभाष्यसहिता	१	०
वाक्यपदीयम् खण्डानि ५ (प्रथमभागः प्रथमद्वितीयकाण्डे पुण्यराजटीकासहित खण्ड ३ । द्वितीयभागः तृतीयाकाण्डम् हेलाराजटीकासहित खण्ड २)	५	०
रसगङ्गाधरः खण्डानि ९	९	०
परिभाषावृत्तिः खण्डे २	२	०
वैशेषिकदर्शनं किरणावलीटीकासंवलितप्रशस्तपादप्रणीतभाष्यसहितम् खण्डे २	२	०
शिक्षासङ्ग्रहः खण्डानि ५	५	०
नैष्कर्म्यसिद्धिः खण्डानि ४	४	
महर्षिकात्यायनप्रणीतं शुक्लयजुःसर्वानुक्रमसूत्रम् सभाष्यम्	३	०
ऋग्वेदीयशौनकप्रातिशाख्यं सभाष्यम् खण्डानि ४	४	०
(बृहत्) वैयाकरणभूषणम् पदार्थदीपिकासहितम् खण्डानि ४	४	०
विवरणोपन्यासः सटीकवाक्यसुधासहितः खण्डे २	२	०
तत्त्वदीपनम् (पञ्चपादिकाविवरणस्य व्याख्यानम्) ख० ८	८	०
वेदान्तदीपः (श्रीभगवद्रामानुजाचार्यविरचितः) खण्डानि ३	३	०
टुप्टीका खण्डानि ४	४	०

Aho ! Shrutgyanam

पातञ्जलदर्शनम्।श्रीरामानन्दयतिकृतमणिप्रभाऽऽख्यवृत्ति स० १ ०

व्याकरणमिताक्षरा। श्रीमदन्नंभट्टप्रणीता खण्डानि ६ ६ ०

रसमञ्जरी। व्यङ्गयार्थकौमुद्या प्रकाशेन च सहिता ख० १ १ ०

भेदधिक्कारः व्याख्यासहितः श्रीमदप्पयदीक्षितकृत उपक्रमपराक्रमसहितः खण्डे २

बोधसारो नरहरिकृतः तच्छिष्यदिवाकरकृतटीकया स० ख० ५ ५ ०

ब्रह्मसूत्रदीपिका श्रीमच्छङ्करानन्दभगवद्भिरचिता। १ ०

दैवज्ञकामधेनुः अर्थात् प्राचीनज्योतिषग्रन्थः। २ ०

श्रीमदणुभाष्यम्। श्रीश्रीवल्लभाचार्यविरचितम्।
गोस्वामिश्रीपुरुषोत्तमजी महाराजविरचितभाष्यप्रकाशाख्यव्याख्या समेतम्। ३ ०

ब्रजभूषण दास और कम्पनी

चांदनीचौक के उत्तर नई सड़क बनारस

BENARES SANSKRIT SERIES;
A
COLLECTION OF SANSKRIT WORKS
EDITED BY THE
PANDITS OF THE BENARES SANSKRIT COLLEGE,
UNDER THE SUPERINTENDENCE OF
R. T. H. GRIFFITH, M. A., C. I. E.
AND
G. THIBAUT, PH. D.
Nos. 97, 104, & 116.

दैवज्ञकामधेनुः ।

अर्थात्

प्राचीनज्योतिषग्रन्थः ।

लङ्कायाम् हस्तवनगल्यनामकेमहाविहारेऽध्युषितेन
महामहोपाध्यायेन श्रीमताअनवमदर्शीसङ्घराजवरेण सङ्कलिता ॥

DAIWAGNAKÂMADHÊNU,

A Treatise on Astrology

BY the very Venerable Anavamadarsî Sangharâja
Mahâsthavira of the Hastavanagalya Parivena, Ceylon.

Edited by the Very REV. C. A. Seelakkhandha
Sthavira of the "Sailabimbârâma" Vihâra,
DODANDUWA, CEYLON
& *Seetarama Upadhyaya, Sanskrit College Benares.*

BENARES:
Published by the Proprietors Messrs. Braj B. Das & Co.,
AND SOLD BY H. D. GUPTA,
Secretary, Chowkhamba Sanskrit Book Depot.

Printed at T. P.W. & the Vidyâ Vilâs Press,
BENARES.

1906.

Registered under Act XXV. of 1867. (ALL RIGHTS RESERVED.)

Aho ! Shrutgyanam

Aho ! Shrutgyanam

BENARES SANSKRIT SERIES

A

COLLECTION OF SANSKRIT WORKS

EDITED BY THE

PANDITS OF THE BENARES SANSKRIT COLLEGE,

UNDER THE SUPERINTENDENCE OF

R. T. H. GRIFFITH, M. A., C. I. E.

AND

G. THIBAUT, PH. D.

No. 116.

दैवज्ञकामधेनुः ।

अर्थात्

प्राचीनज्योतिषग्रन्थः ।

लङ्कायाम् हस्तवनगल्यनामकेमहाविहारेऽध्युषितेन
महामहोपाध्यायेन श्रीमताअनवमदर्शीसङ्घराजवरेण सङ्कलिता ॥

DAIWAGNAKÂMADHÊNU,

A Treatise on Astrology

BY the very Venerable Anavamadarsî Sangharâja
Mahâsthavira of the Hastavanagalya Parivena, Ceylon.

Edited by the Very REV. C. A. Seelakkhandha
Sthavira of the "Sailabimbârâma" Vihâra,
DODANDUWA, CEYLON

& *Seetarama Upadhyaya, Sanskrit College Benares.*

Fasciculus III.

BENARES:

Published by the Proprietors Messrs. Braj B. Das & Co.,
AND SOLD BY H. D. GUPTA,
Secretary, Chowkhamba Sanskrit Book Depot.

Printed at T. P.W. & the Vidyâ Vilâs Press,
BENARES.

1906.

Registered under Act XXV. of 1867. (ALL RIGHTS RESERVED.)

Aho ! Shrutgyanam

सूचीपत्रम् ।

गणपाठः	०	४	०
गोलप्रकाशः	२	८	०
गंगालहरी	०	१	०
गुरुसारणी	०	४	०
जातकतत्त्वम्	०	१२	०
तत्त्वदीप	०	१	०
तर्कसंग्रहः	०	१	६
दत्तकमीमांसा	०	८	०
धर्म्मशास्त्रसंग्रहः	०	१	६
धातुपाठः (शिला -))	०	२	०
धातुरूपावली	०	२	०
नैषध चरित नारायणी टीका टाइप	४	०	०
परिभाषापाठः	०	१	०
पाणिनीयशिक्षा भाष्यसहिता	०	२	०
प्रथम परीक्षा	०	२	[illegible]
प्रथमपुस्तक हिन्दी	०	१	[illegible]
प्रश्नभूषणम् (प्रश्न विचार का बहुत उत्तम ग्रन्थ)	०	४	[illegible]
बीजगणितम् (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	८	[illegible]
मनोरमा शब्दरत्नसहिता (टाइप)	९	०	[illegible]
लघुकौमुदी टिप्पणीसहिता	०	४	[illegible]
लघुकौमुदीभाषाटीका	४	०	[illegible]
लक्षणावली	०	२	[illegible]
लीलावती (म० म० पं० सुधाकरकृतटिप्पणीसहित)	१	०	[illegible]
वसिष्ठसिद्धान्तः	०	१	[illegible]
विष्णु सहस्रनाम	०	१	०
शब्दरूपावली	०	१	[illegible]
शृङ्गार सप्तशती	१	८	[illegible]
समासचक्रम्	०	१	[illegible]
समासचन्द्रिका	०	१	[illegible]
सरस्वतीकण्ठाभरणम्	३	०	[illegible]
साङ्ख्यचन्द्रिका टिप्पणीसहिता	०	८	[illegible]
साङ्ख्यतत्त्वकौमुदी	०	६	[illegible]
सिद्धान्तकौमुदी	३	०	[illegible]
सिद्धान्तमुक्तावली दिनकरीटिप्पणीसहिता	३	०	[illegible]
उपसर्गवृत्ति	०	१	[illegible]
क्षेत्रकौमुदी	०	६	[illegible]
क्षेत्रसंहिता	२	०	०

Aho ! Shrutgyanam

स्त्रीणां वारादयश्चेन्दोर्विप्राणान्तु शुभा रवेः ।
क्षत्रियाणां क्षमासूनोः पातङ्गेर्वैश्यशूद्रयोः ॥ १५०
आधानजन्मनक्षत्रवैनाशिकगते विधौ ।
अष्टमं राशिमासे च क्षौरं मृत्युकरं भवेत् ॥ १५१ ॥
आकोकेरश्च मत्स्यश्च बुधशुक्रेन्दुराशयः ।
सर्व्वेषां सिद्धिदातारः शुभवारोदयादयः ॥ १५२ ॥
चित्तविक्रमपुत्रस्त्रीधर्म्मकर्म्मायगः शशी ।
चेरे चन्द्रज्ञजीवाश्च क्षौरे सौभाग्यसाधकाः ॥ १५३ ॥
त्रिषडायगताः पापाः शुभाःसंशुद्धमष्टमम् ।
यमभार्गवभौमाख्याः सप्तमस्थाःशुभच्छिदः ॥ १५४ ॥
क्षौरं यात्राविधानश्च पुत्रस्य पितृजन्मनि ।
भयं विघ्नप्रदं प्राहुः कुमार्य्यो मातृजन्मनि ॥ १५५ ॥
अभ्यङ्गभुक्तियात्रासु स्नाने वा भूषितेऽपि वा ।
सन्ध्यानिशासु संग्रामे क्षौरं नेष्टं निरासने ॥ १५६ ॥
शासने राजविप्राणां व्रतान्ते मृतसूतके ।
बन्धमोक्षे च दीक्षायां क्षौरं नात्र विचार्य्यते ॥ १५७ ॥
अशुभर्क्षे कृते क्षौरे कुर्य्यात् क्षिप्रं पुनःशुभे ।
पञ्चगव्येन मधुना केशान्निर्व्वा[2]पयेद् बुधः ॥ १५८ ॥
दर्शे प्रतिपदष्टम्योर्मासस्त्रीतैलसेचनात् ।
चतुर्दश्यां तथाष्टम्यामाहुरायुक्षयम्बुधाः ॥ १५९ ॥
पञ्चदश्यां चतुर्दश्यामष्टम्याञ्च त्रिजन्मसु ।
क्षौरं व्यवायं तैलञ्च वर्ज्जयेद्दन्तधावनम् ॥ १६० ॥
राजकार्य्यनियुक्तानां नटानां रूपजीविनाम् ।
श्मश्रुरोमनखच्छेदे नास्ति कालविशिष्टता ॥ १६१ ॥

---

१ स्वरेचन्द्रज्ञजीवाश्च । २ निर्वापयेत् ।

Aho ! Shrutgyanam

न तेषामपि कालोऽस्ति क्षुरं नित्यं स्पृशन्ति ये ।
दन्तधावनमिच्छन्ति व्रतीनां प्रतिवासरम् ॥ १६२ ॥
शुक्रार्कवारावन्येषां विहितौ दन्तधावने ।
गुरुर्भृगुर्वा शीतांशुरुदयस्थो बलान्वितः ।
यद्युपचयगो लग्नाच्चूडायोगोऽयमुत्तमः ॥ १६३ ॥
सशुक्रे सबुधे कुम्भलग्ने व्ययगते रवौ ।
त्रिकोणगे गुराविन्दौ चूडायोगोऽयमुत्तमः ॥ १६४ ॥
भव्ययोदयेष्वर्कबुधशुक्राः यदा स्थिताः ।
चन्द्रे शुभांशके केन्द्रे चूडायोगोऽयमुत्तमः ॥ १६५ ॥
सुमनोक्षतदुर्वाकं तोयमभ्यक्षमस्तके ।
ध्यात्वा भगवतीं लक्ष्मीं जपमेवमुदीरयेत् ॥ १६६ ॥
पालयन्तु सुराःसर्व्वे त्वामविघ्नं शतायुषा ।
[1]ऋद्ध्या कान्त्या श्रिया स्मृत्या नित्यं त्वामपि वर्द्धयेत् १६७
पान्तु सन्ततमेव त्वां प्रसन्ना देवमातरः ।
दीर्घमङ्गलसयुक्तां[2] यूना त्वं सुभगा भव ॥ १६८ ॥

पुंसस्त्रियश्च क्रमशोऽभिमन्त्र्य
समङ्गलं दक्षिणपाणिनैव ।
प्रदक्षिणं मूर्द्धललाटशङ्खे
[3]सुप्रस्पृशेत्तं निशितक्षुरेण ॥ १६९ ॥

धात्रीभृङ्गरसं प्रस्तं तैलञ्च क्षीरमाढकम् ।
यष्ट्याञ्जनफलं तैलं तत्र केशाक्षिशिरोहितम् ॥ १७० ॥
तटाककूपशुद्धिश्च गजदन्तनिकृन्तनम् ।
नौकादीनां जले क्षेपः क्षौरयोगवदिष्यते ॥ १७१ ॥

इति क्षौरविधिः ।

———ooo———

१ ध्यकान्ताश्रियस्मृत्या । २ युता । ३ सुपष्प्रशेस्तन्तिसितक्षुरेण ।

Aho ! Shrutgyanam

इति कौमारदशाविधानं नाम चतुर्विंशोऽध्यायः ।

पञ्चविंशोऽध्यायः ।

शिक्षादशासमुचितं क्रमशो विधानं
वक्ष्यामि सम्प्रति समाहृतमल्पमत्र ।
आच्छादनोपनयनाध्ययनानि सम्य
गावर्तनं वितरणञ्च गवां [१]द्विजेभ्यः ॥ १ ॥
प्रभूतवस्त्रदाश्विनी भरण्यथापहारिणी ।
प्रदह्यतेऽग्निदैवते प्रजेश्वरेऽर्थसिद्धयः ॥ २ ॥
मृगे तु मूषिकाद्भयं व्यसुत्वमेव शङ्करे ।
पुनर्वसौ शुभागमस्तदग्रहे धनैर्युतः ॥ ३ ॥
भुजङ्गमे विलुप्यते मघासु वैरमादिशेत् ।
हयाह्वये नृपाद्भयं धनागमं तथोत्तरे ॥ ४ ॥
करणेकर्मसिद्धयः शुभागमश्च चित्रया ।
शुभाश्च भोज्यमनिले विदैवते सुहृद्द्युतिः ॥ ५ ॥
सुहृत्प्रियश्च मित्रभे तदग्रहेऽम्बरक्षयः ।
जलप्लुतिश्च नैर्ऋतौ रुजो जलाधिदैवते ॥ ६ ॥
मृष्टमन्नमपि विश्वदैवते वैष्णवे भवति नेत्ररोगिणां ।
द्रव्यधान्यनिचयस्तु वासवे वारुणे विषकृतं महद्भयम् ॥७॥
भाद्रपदे सलिलेन भयं स्यात्तत्परतश्च भवेत् सुतलब्धिः ।
रैक्तयुतं कथयन्ति च पौष्णे वासकवस्त्रनवत्वविधाने ॥८॥
विजीर्णमार्द्रं मलिनान्तनीयो रवीन्दुमन्दाक्षितिपुत्रवारे ।
आच्छादितं नूतनवस्त्रमन्यवारे शुभत्वाय चिराय च स्यात् ॥९॥

---

१ विजेभ्यः । २ द्युती । ३ वासव । ४ रक्तयुतिं ।

Aho ! Shrutgyanam

प्रतिपद् द्वादशी रिक्ता षष्ठी विष्टिविवर्ज्जिताः ।
तिथयःशुक्लजाः शेषाः शोभना वस्त्रधारणे ॥ १० ॥
सिंहालिमकराजाख्यैर्वर्ज्जिताःराशयः शुभाः ।
त्रिषडायगताः पापाः शुभाःकेन्द्रत्रिकोणगाः ॥ ११ ॥
रिःफं परिभवस्थानं हित्वा सर्व्वत्र चन्द्रमाः ।
शुभांशस्थः शुभैर्दृष्टः शोभनो नूतनाम्बरे ॥ १२ ॥
नृपप्रसादे दीक्षायां विवाहे च न दृश्यते ।
अविचारितकालानामाच्छादनविधिं नृणाम् ॥ १३ ॥

वस्त्रस्य कोणेषु भवन्ति देवाः
नरास्तु पासान्तदशान्तमध्ये ।
शेषास्त्रयश्चापि निशाचरांश
स्तथैव शय्याशनपादुकानाम् ॥ १४ ॥
लिप्ते महीगोमयकर्द्दमाद्यैः
छिन्नप्रदग्धे स्फुटिते च विद्यात् ।
पुष्टन्नचेदल्पतरश्च भुक्ते
पापं शुभं वा फलमुत्तरीये ॥ १५ ॥
रुद्राक्षशांगेष्वथवरश्य मृत्युः ।
पुंजन्मतेजश्च मनुष्यभागे ।
भागेऽमराणामथ भोगवृद्धिः
प्रान्तेषु सर्व्वत्र वदत्यनिष्ठम् ॥ १६ ॥
छत्रध्वजस्वस्तिकवर्द्धमान
श्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतोरणाभा ।
छेदाकृतिर्नैर्ऋतिभागगापि
पुंसां विधत्ते न चिरेण लक्ष्मीम् ॥ १७ ॥

---

१ रुप्रार्द्ध । २ रणे ।

Aho ! Shrutgyanam

विधिरेष समो नूतनकम्बलस्तरणादिके ।
विशेषोऽत्रकलत्रस्थो देवमन्त्री न शोभनः ॥ १८ ॥

इत्याच्छादनविधिः ।

———O———

आषष्ठं[1] पञ्चमादूर्ध्वं वर्षादादशमाद्द्विजम् ।
एकादशाब्दे राजन्यं वैश्यं वा द्वादशे तथा ॥ १९ ॥
उपनेतुमुपाध्यायैः कालयोगोऽयमीरितः ।
अतिषोडशिको विप्रो नोपनेयःकदाचन ॥ २० ॥
क्षत्रियो विंशतेरुर्ध्वान्न वैश्यः पञ्चविंशकात् ।
प्रशास्तत्दूषणाभ्येते वृषला एव सम्मताः ॥ २१ ॥
अयन्तूपनयो नाम यज्ञसूत्रनिवेशनम् ।
द्वितीयजन्मवत्प्रोक्तं व्रतोपादानमित्यपि ॥ २२ ॥
सितेज्य[2]मूढबालत्वं वृद्धता दक्षिणायनम् ।
अधिमासश्च वर्ज्यः स्यात् कृष्णे चान्तिमपञ्चकम् ॥ २३ ॥
प्रतिपत्पर्व्वरिक्ताभिर्वर्ज्जितास्तिथयःशुभाः ।
शुभाः सौम्येन्दुजीवानां वारवर्गोदयादयः ॥ २४ ॥
त्रिषूत्तरेषु रोहिण्यां हस्ते पौष्णे पुनर्व्वसौ ।
वासवत्वाष्ट्रसौम्येषु श्रेष्टस्तूपनयो मतः ॥ २५ ॥
मेषे भवति वा कुष्टी वित्तविद्यार्ज्जितो वृषे ।
मिथुने वेदार्थदर्शीकः कर्क्यां नित्यं षडङ्गवित् ॥ २६ ॥
शिल्पकर्म्मकरः सिंहे षष्ठे भवति पण्डितः ।
तुलायान्तु वणिग्वृत्ति काण्डप्लुष्टोऽथ वृश्चिके ॥ २७ ॥
सर्व्वत्र पूजितश्चापे शून्यवृत्तिःमृगे तथा ।
राजप्रेष्यकरःकुम्भे मीने शास्त्रार्थपारगः ॥ २८ ॥

---

१ अतूपनयनो । २ सितेज्य मुढिबालन्तं ॥

Aho ! Shrutgyanam

दुःस्थःसुखी जडो मूर्खो जयी रुग्णोऽतिमृत्युभाक् ।
दुःखी दुर्व्वचनःश्रीमान् भीतो व्याधिःसुभानुना ॥ २९ ॥
शान्तःसुखी शुभः शुद्धो रुग्णः पीतो महामयः ।
धर्म्मकृत् भूर्जितस्तुष्टः साधुर्व्याधिःशुभेन्दुना ॥ ३० ॥
दुर्गमः सुखितस्तप्तो विपन्नो मुदितः प्रियः ।
आर्त्तः शोकी भयी रुपी दीनाङ्गः क्षितिसूनुना ॥ ३१ ॥
विना षष्टाष्टमं जीवसौम्यौ सर्व्वत्र शोभनौ ।
सर्व्वत्रेष्टः सितस्त्यक्त्वा सप्तमं षष्टमष्टमम् ॥ ३२ ॥
हीनःप्रीतोऽधिरोगश्च मूर्खो ज्ञानी महाभयः ।
मृत्युभाग् दुःखितःक्लिष्टःसुखी दुःखी च भङ्गुरः ॥ ३३ ॥
त्रिषडायं विना राहुकेतू सर्व्वत्र दूषणौ ।
अष्टमस्थानगाःसर्व्वे दद्युरायुःक्षयं ग्रहाः ॥ ३४ ॥
कुष्टी क्षयी ज्वरार्त्तश्च बुद्धिमान् स्वकुलोत्तमः ।
शिक्षितःसुव्रतश्चेति लग्नस्थैर्भास्करादिभिः ॥ ३५ ॥
बुधार्कशुक्राः कर्म्मायलग्नगाः क्रमशो यदा ।
चन्द्रःशुभांशके योगः शुभश्चोपनये मतः ॥ ३६ ॥
मेषगोकर्कटप्राप्ताः भानुशुक्रेन्दवो यदा ।
यमोदये भवेद्योगो द्विजोपनयने शुभः ॥ ३७ ॥
नानामङ्गलतूर्य्येण पुण्याहपदपूर्व्वकम् ।
शिशुर्मन्त्रसमुच्चारैरुपनेयं पुरोधसा ॥ ३८ ॥

इत्युपनयनविधिः ।

———o———

अथोपनयनादूर्ध्वं विद्यारम्भः शुभः शिशोः ।
कन्यासमागते भानौ ततो मासत्रयं शुभम् ॥ ३९ ॥
ताराश्चतस्रः सौम्याद्यास्तिस्रो हस्तादिकास्तथा ।
मैत्राश्विहरयःपूज्याः विद्यारम्भे मनीषिभिः ॥ ४० ॥

Aho ! Shrutgyanam

उत्तराणां त्रयं पौष्णं रोहिणीञ्चैव मध्यमम् ।
वसुवारुणमूलानि शुभदानीति केचन ॥ ४१ ॥
मूलं वशिष्ठमुनिना शास्त्रारम्भे निराकृतम् ।
पर्व्वरिक्ताष्टमी षष्ठी द्वादशी प्रतिपत्तथा ॥ ४२ ॥
गर्हिता विबुधैःकेचित् पूर्णामिष्टतमा विदुः ।
केचिन्नेच्छन्ति निपुणाः सप्तमीं च त्रयोदशीम् ॥ ४३ ॥
शुभदृष्टः शुभांशस्थश्चन्द्रस्तत्रापि दोषनुत् ।
मन्दमाहेययोर्नैन्ध्याद्वारवर्गोदयादयः ॥ ४४ ॥
मध्यमाः रविशीतांश्वोः शेषाणामुत्तमाः स्मृताः ।
चरस्थिरोभयाःपङ्क्त्या मध्यमाधमपूजिताः ।
अष्टमं शुद्धमिच्छन्ति केचित् पञ्चममेव वा ॥ ४५ ॥
त्रिषडायगताः पापाः शुभाः सौम्याश्च कण्टके ।
शस्त्रशिक्षाहिता मित्रविष्णुत्रयरवीश्वराः ॥ ४६ ॥
गुरुभार्गववाराद्याः विदोषास्तिथयोऽपि च ॥
चित्राश्विरविशक्राश्च परघातविधौ शुभाः ।
मूलाश्विपितरश्चापशिल्पेभौमार्कवारयोः ॥ ४७ ॥
कुन्ताभिक्षुरिकाभ्यासे वाजिवारणविग्रहे ।
मल्लाङ्गकारशिक्षासु महानसविधौ तथा ॥ ४८ ॥
पौष्णश्रवणरोहिण्यां सौम्यं वायूत्तरत्रयम् ।
रुद्रतिष्ये तु शुभदे सौरभ्यकरणेषु च ॥ ४९ ॥
अश्विनीचाश्वशिक्षासु गजशिक्षासु सोमभम् ।
तयोरारोहणे पौष्णं हरिर्ब्रह्मोत्तरत्रयम् ॥ ५० ॥
खरोष्ट्रमहिषादीनां शिक्षने च यमात्त्रयम् ।
हयानां वारुणाश्विन्यौ व्यवायेषु शुभप्रदौ ॥ ५१ ॥
[1]भेरितालादिशास्त्रेषु भरतेषु विशेषतः ।

---

१ कालादि ।

हस्तस्तिष्यस्तथादित्यः सङ्गीते सौम्यभं शुभम् ॥ ५२ ॥
सार्पांशाकुनिकज्ञाने वेदशास्त्रेषु रोहिणी ।
वैष्णवं चौरमायादौ चित्रा स्याच्चित्रकर्म्मणि ॥ ५३ ॥
धर्म्मशास्त्रेषु विस्वाद्यास्तिस्रस्ताराश्च रेवती ।
योगशास्त्रेऽब्धिमूलार्कः सतर्कसमये शशी ॥ ५४ ॥
अश्विनी रोहिणी सौम्यस्तिष्यो हस्तादिपञ्चकम् ।
ज्योतिःशास्त्रे शुभं वैद्ये स्वातिहस्तः पुनर्वसुः ॥ ५५ ॥
वासवो रेवती सौम्यो रोहिणी तिष्यमित्रभम् ।
अदितिश्च तथा हस्तः शब्दशास्त्रेषु पूजितः ॥ ५६ ॥
गणिते रेवतीहस्तपुष्यमित्रेन्दुशङ्कराः ।
धात्रादिपञ्चकं प्रोक्तं पुराणेषु पुरातनैः ॥ ५७ ॥
आदित्यवैष्णवस्वातिहस्ताश्विपरमेष्ठिनः ।
उत्तराणां त्रयं पुष्यं वास्तु शास्त्रे सुपूजितम् ॥ ५८ ॥
अनुक्तेषु च शास्त्रेषु विद्यादुक्तानुसारतः[2] ।
अश्विनीपौष्णहस्तास्तु सर्व्वशास्त्रेषु पूजिताः ॥ ५९ ॥
हस्तर्क्षे तु बुधस्यांशे वर्त्तन्ते ज्ञेन्दुभास्कराः ।
बुधवारे च तल्लग्ने योगःसारस्वतो मतः ॥ ६० ॥
चन्द्रार्कज्ञदिने वारनाथे लग्ने बुधांशके ।
हस्तर्क्षस्य यदा योगस्तदा वागीश्वराह्वयः ॥ ६१ ॥
स्वात्युच्चे लग्नगो भानुः ज्ञसितौ वृषमीनगौ ।
वर्गोत्तरगतौ यद्वा योगो वागीश्वराह्वयः ॥ ६२ ॥
बुधोत्तरे गुरोरंशे केन्द्रगा ज्ञार्कभार्गवाः ।
त्रयोदश्यां यमे लग्ने योगो बुद्धिप्रबोधकः ॥ ६३ ॥
कर्की पञ्चमभागस्थे गुराबुदयगे तदा ।
गुरोर्वारेऽब्धहोरायां योगो जाड्यहरो मतः ॥ ६४ ॥

---

१ रोहिणीसौम्य । २ युक्तानुसारतः ।

लये बुधांशकस्थश्चेदिन्दुज्ञार्कबुधोदये ।
बुधवारेऽस्य होरायां योगो मोहविनाशनः ॥ ६५ ॥
अनुक्ता ये ग्रहास्ते च स्वात्युच्चोदयगाःयदा ।
स्ववारे च स्वहोरायां योगाःस्युः ज्ञानसाधकाः ॥ ६६ ॥
वारनक्षत्रयोगाःये शुभास्तत्र दिनाधिपे ।
लग्नगे तस्य होरायां योगो मूगप्रभाषकः ॥ ६७ ॥

वाणीं गणेशञ्च गुरुञ्च भक्त्या
सम्पूज्यमाना बलिभिः प्रभूतैः ।
कृताभ्यनुज्ञे गुरुणारभेत
शास्त्राणि पूर्व्वाभिमुखःकुमारः ॥ ६८ ॥

यथोक्तयोगसद्भावे नात्र दोषं विचारयेत् ।
इन्दोर्वारे पराह्ने च विद्यामुक्तिर्विधीयते ॥ ६९ ॥

इत्यध्ययनविधिः ।

———ooo———

समावर्त्तविधिर्नाम स्नानरोमच्छिदादयः ।
विद्यान्ते च व्रतान्ते च विधिरेष विधीयते ॥ ७० ॥
आदित्यसौम्यसावित्र्यमत्र तिष्योत्तरत्रयम् ।
रोहिणीश्रवणपुष्या सौम्यवारोदयादयः ॥ ७१ ॥
द्वितिया च तृतीया च पञ्चमी सप्तमी तथा ।
दशमी द्वादशी शस्ता विशेषेण त्रयोदशी ।
नृपाणां पूज्यते षष्ठी वैश्यानां दशमी तथा ॥ ७२ ॥

इति समावर्त्तनविधिः ।

———o———

एष षोडशिको भूत्वा प्रविश्य गृहमेधिताम् ।
इष्टापूर्त्तविधानञ्च गोदानञ्च समाचरेत् ॥ ७३ ॥

Aho ! Shrutgyanam

ब्रह्माविष्णुमहेशाश्च जीवभास्करतारकाः ।
त्रिदोषास्तिथयश्चात्र चरलग्नश्च पूजितम् ॥ ७४ ॥
ऋक्षेषूर्ध्वमुखेष्वेव चरलग्ने शुभोदये ।
शुभवारेषु होरायां श्मश्रुकेशविवर्धनम् ॥ ७५ ॥
केशरं बृहतीमूलं गोजीयष्टिकणोत्पलम् ।
साजाक्षीरं सतैलं तन्मृक्षणं रोमजन्मकृत् ।
शीर्य्यमानेषु केशेषु स्थापनञ्च भवेदिदम् ॥ ७६ ॥
तैलं वाचा शिलातालमञ्जिष्ठाभिः सुसाधितम् ।
हरेदस्थानजन्मानि रोमान्युन्मूल्य लेपतः ॥ ७७ ॥

इति गोदानविधिः ।

इति शिक्षाविधानं नाम पञ्चविंशोऽध्यायः ।

षड्विंशोऽध्यायः ।

प्राच्यैःप्रणीतमधुना खलु तन्त्रजातं
संहृत्य यौवनदशाविधिमारभिष्ये ।
सङ्कीर्तितोऽत्र बलिभुग्बलिदानपूर्व्वं
प्राणिग्रहश्च नरराजसुताभिषेकः ॥ १ ॥

विवाहोचितनक्षत्रे दम्पत्योरनुकूलके ।
सुमुहुर्त्ते शुभे वारे प्रशस्तविहगोदये ॥ २ ॥
पूर्व्वपक्षे च पूर्व्वाह्णे पूर्व्वयामार्द्धके बुधः ।
स्नातःशुचि सरित्तीरे देवतायतने ऽपि वा ॥ ३॥
गोमयैर्मण्डलं कुर्य्यात् समन्तात् पञ्चहस्तकम् ।
कल्पयेत्स्वस्वचिह्नेन दिक्पालान् दिक्चतुष्टये ॥ ४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

मध्ये ब्रह्माणमाधाय क्रमशस्तान् समर्च्चयेत् ।
इन्द्रः सुरभितृप्तः स्याद्यमः पुष्पेण मोदते ॥ ५ ॥
वरुणो धूपतृप्तःस्यात् सोमो दीपेन तृप्यति ।
ब्रह्मा तु सर्व्वैरेतैश्च पूर्णकुम्भैश्च तण्डुलैः ॥ ६ ॥
पयोदधिघृताभ्यक्तान् पिण्डान् शाल्योदनान् हितान् ।
कुक्कुटाण्डप्रमाणांस्तान् पञ्चषांश्च सुयोजयेत् ।
जलसम्प्रेक्षणञ्चैव स्वस्वमन्त्रैर्विधीयते ॥ ७ ॥
ओंदीर्घायुःसुमङ्गला च इन्द्रदिग्देवेभ्यः स्वाहा ॥
ओंचिरं तिष्ठतु दीर्घायुर्य्याम्यदिग्देवेभ्यः स्वाहा ॥
ओंभद्रो वरुणदिग्देवेभ्यः स्वाहा ॥
ओंश्रेयः सौम्य दिग्देवेभ्यः स्वाहा ॥
ओंपुत्रपौत्रवृद्धिः स्याच्चतुर्मुखेभ्यः स्वाहा ॥
अङ्कुताकङ्कुकताश्चैव कुन्द्रपुत्रास्तथैव च ।
वायसा ब्रह्मपुत्राश्च बलिं गृह्णन्तु ओंनमः ॥ ८ ॥
प्रणम्य मन्त्रेणानेन दूरे स्थित्वा निरीक्ष्यताम् ।
प्रथमग्रस्तपिण्डेन तत्र विद्याच्छुभाशुभम् ॥ ९ ॥
ऐन्द्रे पुत्रविवृद्धिःस्याद्याम्ये भर्तृविनाशनम् ।
वारुणे कुलनाशःस्यात् सौम्ये स्यात् पुत्रपौत्रकम् ॥
शुभं ब्रह्मे बहुविधं विनिश्चित्य विनिर्दिशेत् ॥ १० ॥
पुमान्नाममयःस्थूलः सर्व्वेषां प्रियदर्शनः ।
बलिभुक् प्रथमं ग्रासि सर्व्वस्मिन्नातिदोषदः ॥ ११ ॥
सर्व्वत्र शुभकार्य्ये च युद्धे बन्धविमोक्षणे ।
इदं विधानमुद्दिष्टं सममेव पुरातनैः ॥ १२ ॥

इति वायसबलिविधिः ।

———ooo———

Aho ! Shrutgyanam

दैवज्ञं सुखमासीनं सम्पूज्यादौ यथाबलम् ।
दम्पत्योराख्यया सार्द्धं सकृत् पृच्छेच्छुभाशुभम् ॥१३॥
तत्कालवाक्ये केन्द्राभ्यां ततो ज्ञात्वा शुभाशुभम् ।
त्रिकालज्ञा इवाचष्टे दैवज्ञः शास्त्रचक्षुषा ॥ १४ ॥
लग्ने पापग्रहैर्युक्ते नीचशत्रुग्रहस्थिते ।
अष्टमे सप्तमे चैव दम्पत्योर्न शुभस्तदा ॥ १५ ॥
पापयुक्तोदयाच्चन्द्रः षष्टे वाअष्टमे स्थितः ।
विवाहसमयान् मृत्युं दद्यादब्देऽष्टमे तयोः ॥ १६ ॥
प्रश्नलग्ने यदा चन्द्रस्तस्मात् षष्ठाष्टमे कुजः ।
अष्टाब्दैर्मनुजो याति यमालयमपुत्रकः ॥ १७ ॥
लग्नाष्टमे यदा पापा रिपुनीचनिरीक्षिताः ।
विधवा सा भवेत् कन्या लग्नं पापयुतं यदि ॥ १८ ॥
नीचस्थःशत्रुसंदृष्टः पापः पञ्चमगो यदि ।
कुलटा सा भवेत् कन्या मृतपुत्राथवा भवेत् ॥ १९ ॥
स्थितौ यदेन्दुमाहेयौ लग्नसप्तमयोः क्रमात् ।
यमालयं तदा याति सप्तमे मासि मानवः ॥ २० ॥
सप्तमं यदि शून्यं स्यात् दुर्व्वलं दुर्ग्रहे क्षितम् ।
सौम्यग्रहदृशा हीनं भर्ता कापुरुषो भवेत् ॥ २१ ॥
मन्दे सप्तमराशिस्थे पापशत्रुनिरीक्षिते ।
कन्यैव विधवा भूत्वा जरामपि च गच्छति ॥ २२ ॥
पापः पञ्चमराशौ चेद्वन्ध्या वा पुत्रनाशिनी ।
नीचारिराशौ पापश्चेद्गीतपुष्पा भवेद्वधूः ॥ २३ ॥
पुत्रस्थेषु शुभेष्वेषु बहुपुत्रवती भवेत् ।
स्वर्क्षतुङ्गत्रिकोणेषु तत्पुत्राः बहुजीविनः ॥ २४ ॥

इतिविवाहप्रश्ने शुभाशुभनियमः ।

———ooo———

Aho ! Shrutgyanam

शुभाशुभमिति ज्ञात्वा प्रश्नकेन्द्रेण दैववित् ।
अतःपरं दिनादीनि क्रमादेव निरूपयेत् ॥ २५
जन्मसम्पद्विपत्क्षेमः प्रत्यरिः साधको वधः ।
मित्रं परममित्रञ्च जन्मर्क्षादिः पुनःपुनः ॥ २६
चरक्षमनुकूलञ्चेत् शुभं स्त्री जन्मतारकात्
त्रिजन्मताराः क्रमशश्चोत्तमाधममध्यमाः ॥ २७

इतिदिननियमः ।

———oo———

*सौम्यादिभत्रयमरुत्तुरगान्सहस्ता
मित्रान्त्यविष्णुसहितानि नवामराणाम् ।
पूर्व्वोत्तरत्रिकयमेशविधातृभानि
प्राहुर्नृणामितिभुवामपराणि तज्ज्ञाः ॥ २८ ॥
बहुशुभविधिरेकजातिभे स्यात्
नरसुरभे यदि मध्यमन्तु नश्यात् ।
असुरसुरगणे विनाशयोगोऽ
दितिसुतमानुषभे च सर्व्वनाशः ॥ २९ ॥

इति गणनियमः ।

———ooo———

† चतुर्थसप्तमर्क्षञ्च दशमर्क्षं त्रयोदश ।
षोडशे कूनविंशर्क्षं द्वाविंशत्पञ्चविंशभं ।
सप्तविंशति नारीभान्माहेन्द्रः शुभमेधते ॥ ३० ॥

इति माहेन्द्रनियमः ।

———ooo———

* सौम्यादितिद्वय । † चतुर्थतश्चतुर्थञ्चेत् कन्यकक्षात् पुनः पुनः । पुरुषार्क्षे शुभं विद्या दन्यथा सर्व्वनाशनः ।

Aho ! Shrutgyanam

आदित्यहस्तश्रवणाश्विनितिष्यमित्रार्य्यमप्रोष्ठपदानि पुंसः।
षण्डस्य मूलं शतभश्च सौम्यशेषास्त्रियः षोडशतारकाःस्युः३१
स्त्रीपुंसोः स्वस्वनक्षत्रं विवाहे शुभसाधनम्।
मध्यमः षण्डयोगःस्याद् वैपरीत्यं विरोधकृत् ॥ ३२ ॥

इति पुन्नक्षत्रम्।

———ooo———

वार्तमेतदशास्त्रज्ञैः कथञ्चित् परिकल्पितम्।
त्रयोदशादिनादूर्द्ध्वं स्त्रीदीर्घं शुभमिष्यते ॥ ३३ ॥

इति स्त्रीदीर्घनियमः।

———o———

तुरङ्गमश्च मातङ्गो मेषी सर्प्पश्च पन्नगी।
श्वा विडालश्च बस्तश्च मार्ज्जारी मूषिकाखवः ॥ ३४ ॥
वृषभो महिषी व्याघ्री लुलायो व्याघ्रकामिनी।
मृगी कुरङ्गी च शुनी कपिर्धेनुः प्लवङ्गमः ॥ ३५ ॥
नारी च सारमेयश्च नरश्च वृषभस्तथा।
करिणीति क्रमादेता योनयश्चाश्विभादितः ॥ ३६ ॥
दम्पत्योरेकयोनित्वं सम्पत्यै निर्द्दिशेद्बुधः।
मध्यमं भिन्नयोनित्वं दोषकृच्छत्रुयोनिता ॥ ३७ ॥
स्वनक्षत्रसमुद्दिष्टं साधितं योनिमेव च।
नाद्यान्नपीडयेन्नित्यमायुष्कामी बुधो नरः ॥ ३८ ॥

इति योनिनियमः।

———ooo———

द्विचतुर्द्दशषष्ठैश्च द्वादशाष्टमराशिभिः।
विना शेषा हिताय स्युरन्योन्यममृतोपमाः ॥ ३९ ॥

Aho ! Shrutgyanam

विनाषष्ठाष्टमं तेषु शेषश्चेदेकनायकः ।
दम्पत्योः शुभमित्युक्तं सारस्वतमते पुनः ॥ ४० ॥
राशिर्यदि च दम्पत्योस्तृतीयैकदशौ शुभौ ।
कुटुम्बवृद्धिदौ स्यातां यदि चाष्टमसप्तमौ ॥ ४१ ॥

इतिराशिनियमः ।

सुहृदौ यदि दम्पत्योर्भवने यौ हिताय तौ ।
मध्यमौ मध्यमौ प्रोक्तौ वैरिणौ वैरिकारणौ ॥ ४२ ॥

इतिराश्यधिपतिनियमः ।

मेषस्यालिहरीवश्यं वृषे कर्कटतौलिनौ ।
यमस्य कन्यकावश्यं कर्किनश्चापवृश्चिकौ ॥ ४३ ॥
तुला सिंहस्य कन्यायां यममत्स्याबुदीरितौ ।
वृकस्य मृगपार्थोना वलिनः कर्कटो भवेत् ॥ ४४ ॥
चापस्य मीनो नक्रस्य मेषकुम्भाबुदीरितौ ।
मेषःकुम्भस्य वश्यं स्यान्मीनस्य मकरो भवेत् ॥ ४५ ॥
अभिन्यामानसोख्यानां दम्पत्योर्वश्यराशिभिः ।
ततोऽवश्यमवश्येन विवाहेषु विचारयेत् ॥ ४६ ॥

इति वश्यनियमः ।

पादस्थिता मघामूलपौष्णाश्वीन्द्रभुजङ्गमाः ।
ऊरुस्थिता यमेज्याप्यमित्रोपान्त्यभगाह्वयाः ॥ ४७ ॥
नाभिस्थिता विशाखादित्यार्यमाजाग्निविश्वकाः ।
बाहुस्थिता हरिब्रह्मशिवार्काम्बुधिवायवः ॥ ४८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

मूर्द्धस्थितास्त्रयस्तत्र चित्रावसुहिमांशवः ।
इत्येवं क्रमशो ज्ञेयाः सप्तविंशतितारकाः ॥ ४९ ॥
दम्पत्योस्तारकाद्वन्द्वमेकरेखागतं यदि ।
तदा महाभयं विद्याद्रेखान्तरगतं शुभम् ॥ ५० ॥
पादवेधे च पान्थत्वमुरुवेधे च रोगिना ।
नाभिवेधेऽप्यपुत्रत्वं बाहुवेधे दरिद्रता ॥ ५१ ॥
मूर्द्धवेधे भवेन्मृत्युरेवमाह बृहस्पतिः ।
केचिद् गर्गादयः प्राहुः सर्व्वत्र मरणं ध्रुवम् ॥ ५२ ॥

इति रज्जुनियमः ।

———000———

मरुद्द्विधिर्वह्नियमेन्द्रदस्रराधानुराधा खलु पूर्व्वसूत्रे ।
हरीशविश्वादितिचन्द्रशक्र चित्राभिमूलाक्षितयोर्द्वितीयं ॥५३॥
उत्पान्त्यभाग्यार्य्यमहस्तपौष्ण त्वजैकपाद्बार्द्धिमघास्तृतीये ।
एकत्रसूत्रे प्रतितत्रशस्ता जन्मर्क्षयुग्मे मिथुनस्य वेधः ॥५४॥
पूर्व्वत्र सूत्रे मरणं द्वितीये गर्भर्क्षयोऽन्यत्र धनप्रणाशः ।
एवं विवाहे विधिवद्विदध्याच्छुभाशुभं वेधकलक्षणेषु ॥५४॥

इति वेधकनियमः ।

———000———

पृथिवी वारिहृत्भूकपवनाकाशभौतिकाः ।
ताराभूतर्तुवाणर्तुपञ्चकस्तुरगादिकाः ॥ ५५ ॥
दम्पत्योर्जन्मनक्षत्रमेकभूते शुभावहम् ।
प्रीतिकृन्मित्रभूते च वैरिभूते विनाशकृत् ॥ ५६ ॥
जलाग्निभूते नाशःस्यान्मित्रश्चवायुतेजसी ।
सर्व्वत्रैव नभोभूते न विरोधाय कल्प्यते ॥ ५७ ॥

इतिभूतनियमः ।

———000———

Aho ! Shrutgyanam

सार्पाच्चतुष्कं याम्यञ्च रौद्रं त्वाष्ट्रात् त्रिकं जलम् ।
विश्वेन्दुवासवाःपुंसःस्त्रीलिङ्गाः समुदाहृताः ॥ ५८ ॥
सौम्यवारुणमूलानि नपुंसकादिनानि हि ।
उभयत्रावशिष्टास्तु पुंलिङ्गास्तारका दश ॥ ५९ ॥
पुंसि पुंलिङ्गतारा चेत् स्त्रियस्त्रीलिङ्गभं यदि ।
उत्तमं बिपरीते स्यादधमो मध्यमोऽन्यथा ॥ ६० ॥

इतिलिङ्गनियमः ।

ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रानुलोमप्रतिलोभकाः ।
अश्वाद्याश्शततारान्ताः पौनः पुन्येन कीर्त्तिताः ॥६१॥
शेषास्त्रयस्त्रिवर्णानामेकजातौ शुभं मतम् ।
मध्यमं भिन्नजातौ स्यादधमं प्रतिलोमके ॥ ६२ ॥

इतिजातिनियमः ।

मरीचिश्च वशिष्टश्चाप्यङ्गिराश्चात्रिरव च ।
पुलस्यः पुलहश्चैव क्रतुश्चेति महर्षयः ॥ ६३ ॥
अश्विन्यादिषु ताराषु साभिजित्सु यथाक्रमम् ।
चतुर्भिर्मण्डलैर्य्योज्यः भुनयोगोऽत्रयोगतः ॥ ६४ ॥
दम्पत्योर्जन्मनक्षत्रमेकगोत्रे भवेद्यदि ।
प्रायशः कलहाय स्याद् भिन्नगोत्रे शुभावहम् ॥ ६५ ॥

इतिगोत्रनियमः ।

भेरुण्डःपिङ्गलःकाकः कारण्डश्च शिखावलः ।
अश्विन्यादिषु विज्ञेयाश्चत्वारः पञ्च लाभिनः ॥ ६६ ॥

Aho ! Shrutgyanam

पञ्चमःसप्तलाभी स्यादित्येवं पक्षितारकाः ।
भिन्नपक्षिषु नाशःस्यादेकपक्षिषु शोभनम् ॥ ६७ ॥

इति पक्षिनियमः ।

———ooo———

प्रथमा नवमी चैव ब्रह्माणीध्वज एव च ।
इन्द्रोरविरथैते षट् प्राचीन्दिशिमुपाश्रिताः ॥ ६८ ॥
द्वितीया दशमी धूमः कौमारी भौम एव च ।
अग्निश्च षडिमे सर्व्वे प्राग्दक्षिणदिशि स्थिताः ॥ ६९ ॥
तृतीयैकादशी सिंहो देवमन्त्री यमस्तथा ।
वाराही च तथैते षट् दक्षिणस्यां दिशि स्थिताः ॥ ७० ॥
चतुर्थी द्वादशी चैव वैष्णवी चन्द्रनन्दनः ।
निरुतिः सारमेयश्च स्थितो दक्षिणपश्चिमे ॥ ७१ ॥
पञ्चमी च त्रयोदश्यां सार्द्धमैन्द्री वृषा तथा ।
वरुणः शुक्रसंयुक्तः पश्चिमान्दिशमाश्रितः ॥ ७२ ॥
षष्ठी चतुर्दशी चैव चामुण्डीकर एव च ।
पवनः शिखिना युक्तः पश्चिमोदग्दिशि स्थितः ॥ ७३ ॥[1]
सप्तमी पौर्णमासी च गजो माहेश्वरी तथा ।
शशी वैश्रवणश्चैवमुत्तरस्यां दिशि स्थितौ ॥ ७४ ॥
अमावास्याष्टमी चैव राहुःकाकस्तथेश्वरः ।
महालक्ष्मीरिति प्रोक्ता प्रागुदग्दिशि संस्थिता ॥ ७५ ॥
ब्रह्माणि पूर्व्वदेवीनामस्त्राद्यमण्डलैस्त्रिभिः ।
योजनीयास्त्रयश्चान्त्यं वैष्णव्याधीनमीरितम् ॥ ७६ ॥
तारकास्तुल्ययोगिन्यो दम्पत्योरतिशोभनाः ।
अनिष्टाः भिन्नयोगिन्यो न चिरान्मरणप्रदाः ॥ ७७ ॥

इति योगिनीनियमः ।

———ooo———

१ पश्चिमोदग्रदिशि स्थिताः ।

Aho ! Shrutgyanam

आयस्ताराःक्रमात्प्राग्वदुष्ट्रजधूमादिषु स्थिताः ।
स्वायःसुजातो मध्यस्थे मध्यमस्त्वधमे व्ययः ॥ ७८ ॥

इत्यायनियमः ।

देवताराःक्रमात्प्राग्वदिन्द्रवह्न्यादिषु स्थिताः ।
तुष्टिःसुहृदि मध्यस्थे चोपेक्षा द्वेषणाद्विषौ ॥ ७९ ॥
रविसाग्निहरिच्छन्ति यमं केचित्सुहृत्तमम् ।
यमःसर्व्वत्र वै रीतिर्बृहस्पतिमते पुनः ॥ ८० ॥

इति देवनियमः ।

तत्तत्तिथिसमुद्दिष्टदिक्षु यात्रा न शोभना ।
तत्तद्ग्रहसमुद्दिष्टदिङ्मुखो न निषीदतु ॥ ८१ ॥
दिनङ्गणश्च माहेन्द्रं स्त्रीदीर्घश्चाथ योनयः ।
राशिराश्याधिपोऽवश्यं रज्जुर्वेधस्ततः परम् ॥ ८२ ॥
भूतं लिङ्गञ्च जातिश्च गोत्रम्पक्षिविधिस्तथा ।
योगिन्यायश्च देवश्च वर्गास्त्वष्टादशेरिताः ॥ ८३ ॥
सर्व्वेष्वेतेषु शास्त्रेषु विवाहःश्रेष्ठसम्मतः ।
नवाधिकेषु मध्यः स्यान्नवोनेष्वधमो भवेत् ॥ ८४ ॥
गणो योनिश्च वेधश्च रज्जुराश्याधिपस्तथा ।
लिङ्गञ्च योगिनीचेति प्राधान्येनेह कल्पिता ॥ ८५ ॥
*क्षेत्रस्यमूलमान्येन मित्रयोश्च परस्परम् ।
सप्तसन्धाविधौ चैवमवश्यं स निरूपयेत् ॥ ८६ ॥
पुमानेकोऽपि नारीणामनेकासां पतिर्य्यतः ।
साध्वी तु कामिनी तस्माद्योजनोयानुकूलतः ॥ ८७ ॥
विशेषादनुकूलर्क्षे पक्षे वर्द्धिष्णुशीतगौ ।
अर्द्धरात्रे त्रयोदश्यां पञ्चदश्यामथापि वा ॥ ८८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

स्वमनोरथसिद्ध्यर्थं नानावलिविधानतः ।
जपान्मदनगायत्र्यां कुर्यान्मनसिजार्चनम् ॥ ८९ ॥

ॐ नमो मदनाय *वीतमहे कामदेवाय धीमहि त्वं नो मदनप्रमोदाय स्वाहा

हरिद्रामलकं मुस्ता तुलसी विल्वपल्लवम् ।
दुर्व्वातण्डुलसिद्धार्थं क्षरं पद्मकेशरम् ॥ ९० ॥
एभिःप्रमार्ष्टि गात्राणि चत्वारिंशद्दिनानि या ।
सप्तकृत्वं प्रतिदिनं सा कन्या प्राप्नुयात्पतिम् ॥ ९१ ॥
एतदुद्वर्त्तनं श्रेष्ठं श्रीकरं व्याधिपापहृत् ।
यदुक्तं कन्यकायास्तु तद्वरस्यापि शस्यते ॥ ९२ ॥
मेषमत्स्यकुलीराद्यं हित्वा मासचतुष्टयम् ।
शेषास्तु शुभदाःमासाः सौराःपरिणये सदा ॥ ९३ ॥
कुम्भमासश्च नेच्छन्ति केचिद्गुरुदृशोज्झितम् ।
उद्वाहकाले सम्भाव्या ग्रहाणामनुकूलता ॥ ९४ ॥

त्रीण्युत्तराणि परमेष्टिशशाङ्कमूलं
पुष्पाश्विगन्धवहतिग्मकरानुराधा ।
वर्द्धिष्णुभद्रतमभावयुताम्तश्च
युक्ताःशुभाः परिणये चिरमावहन्ति ॥ ९५ ॥

मृत्युश्च दारिद्रमसद्गुणत्वं बिरूपतां वैरमथापि दीक्षाम् ।
करोति शीतांशुरिनादियुक्तं कुमारिकायाः न चिराद्विवाहे॥
केचिदिच्छन्ति जीवेन बुधेनापि समागमम् ।
शशाङ्कस्य शुभांशश्च शुभवर्गमुपेयुषः ॥ ९७ ॥
पर्व्वरिक्ताष्टमीविष्टिपक्षच्छिद्रविवर्ज्जिताः ः
तिथयः सद्ग्रहाणश्च वारवर्गोदयाःशुभाः ॥ ९८ ॥
जारसक्ता च दुर्वृत्ता कुलद्वयविवर्द्धिनी ।
कुलटा पुत्रहीना च पतिमातुलपूजनो ॥ ९९ ॥

---

* क्षेत्रस्य मूल मात्येन । * विदमहे ।

Aho ! Shrutgyanam

रतिप्रिया धनाढ्या च स्थिरभावविवर्ज्जिता ।
परसक्ता दुराचारा विना चापोदयं क्रमात् ॥ १०० ॥
*उढा शेषेषु मेषादिष्वेवम्भवति कन्यका ।
पूर्व्वार्द्धे धनुषःपापा परार्द्धे च पतीव्रता ॥ १०१ ॥
मृत्युरर्थविनाशश्च वन्धुवित्ताप्तिरेव च ।
भर्तृनाशः सुताभावः पतिलक्ष्मीविवर्द्धनम् ॥ १०२ ॥
वैधव्यं मरणं धर्म्मविच्छेदःशोकनाशनम् ।
बहुलाभो धनत्यागो लग्नादिगतभानुना ॥ १०३ ॥
निस्त्यागो च सुरूपा च प्रिया वन्ध्या च बन्धुनुत् ।
सपत्नी मरणं प्राप्ता कृपाहीना सुखोत्तरा ॥ १०४ ॥
धनाढ्या धनहीना च कुमारी क्रमशो भवेत् ।
लग्नाद्यबयवस्थेन विवाहे शिशिरत्विषा ॥ १०५ ॥
धुतमृत्युर्धनत्यागो धनावाप्तिपरोद्भवः ।
भर्तृनाशः पतिभीतिर्दुष्टचित्तिर्लोहिताश्रयः ॥ १०६ ॥
पतिद्वेषं कठोरत्वं लाभः सर्व्वव्ययस्तथा ।
महीपुत्रेण लग्नादिगतेन परिकल्पितः । १०७ ॥
पतीव्रता शुभा भर्तृपुजिनी वन्धुपूजिता ।
बहुपुत्रा विनष्टारिर्दुः[2]स्था प्रव्राजिता तथा ॥ १०८ ॥
दानशौण्डा [3]कृशाङ्गी च धनयुक्ता च दुर्भगा ।
लग्नादिस्थास्नुना चन्द्रपुत्रेणैवं भवेद्वधूः ॥॥ १०९ ॥
प्रिया पतीव्रता दुष्टा सती च वहुपुत्रिणी ।
निःसपत्नी पतिच्छेत्री मन्दायुष्कातिसुन्दरी ॥ ११० ॥
शोभना नित्यसश्रीका धनसक्ता च कामिनी ।
लग्नाद्यवयवस्थेन स्यादेवं देवमन्त्रिणा ॥ १११ ॥

---

* उम्मा । १ तस्सहस्वा । २ निश्चागत्य । दुःस्थाप्रव्रर्जिता ।
३ कृशाशिव ।

Aho ! Shrutgyanam

शुक्रःसर्वत्र शुभदः षट्सप्ताष्टान्तिमं विना ।
त्रिषडायां विनासौरिं सर्वत्र न शुभप्रदः ॥ ११२ ॥
अष्टमं शुद्धमेव स्यादित्याह बृहतां पतिः ।
केचित् सप्तममिच्छन्ति परिशुद्धो विचक्षणः ॥ ११३ ॥
नरग्रहबलात् स्त्रीणां पुमान्भवति वल्लभः ।
विपरीतेऽन्यथा भर्तुरर्थादन्यत्र चिन्तयेत् ॥ ११४ ॥
स्वाहापतिं पुरष्कृत्य समन्त्रेण पुरोधसा ।
विधेयं विधिना वेदे सोत्सवं पाणिपीडनम् ॥ ११५ ॥
चतुर्थेऽह्नि विधेयःस्याच्चतुर्थे भौममङ्गलम् ।
संवेशनविधिश्छात्रसुमुहुर्त्ते विधीयताम् ॥ ११६ ॥

इति विवाहविधिः ।

——oo——

आस्तिको नास्तिको द्वेषी शस्त्रशास्त्रविशारदः ।
सुजातो धार्म्मिकःशस्तो राजामानं विधीयते ॥ ११७ ॥
पुरातनैरुत्तममुत्तरायनं रवौ तथा सिंहगते च मध्यमम् ।
उदीरितं राजसुताभिषेचने तथा परैर्वृश्चिकमासि च स्मृतम् १८
ज्येष्ठा श्रेष्ठतमा हरिःकमलजस्त्रीण्युत्तराण्यश्विनी
तिष्यःपौष्णमथांशुमानितिबुधैराभूतिनां मध्यमम् ।
अच्छिद्रास्तिथयः शुभा हि नवमी पर्व्वेतराःशीतगु
र्वार्द्धिष्णुश्च विना तुलाजयुवतीः शेषोदयाः पूजिताः॥११९॥
गोसिंहमिथुनाजाली लग्नं वाशिष्टकीर्त्तितम् ।
बृहष्पतिमते कुम्भं हित्वा शेषाः स्थिराःशुभाः ॥ १२० ॥
द्वियीयां दशमोश्चापि बशिष्टः पुनरिच्छति ।
सिंहासनस्थितश्चन्द्रः पूर्व्वाह्लश्चाथ शोभनः ॥ १२१ ॥

१ शुद्धवैश्यादित्या ।

Aho ! Shrutgyanam

वासवादिक्षणं पञ्च कौलवं करणं शुभम् ।
विष्टिवर्ज्यानि शेषाणि मध्यमानि विदो विदुः ॥ १२२ ॥
बुधार्कजीवशुक्राणां वारवर्गादयःशुभाः ।
अधिराजेन्दुयोगाश्च शुभा राजाभिषेचने ॥ १२३ ॥
त्रिलाभशत्रुगाःपापाः चाष्टमं शुद्धमिष्यते ।
धनस्थानञ्च संशुद्धं वशिष्ठेन प्रकीर्त्तितम् ॥ १२४ ॥
कौलवे करणे ज्येष्ठायोगे जीवनवांशके ।
सूर्य्यवारे गुरोर्ल्लग्ने चन्द्रयोगे समागते ॥ १२५ ॥
नानामङ्गलघोषेण सदैवज्ञःपुरोहितः ।
मन्त्रेण विधियुक्तेन महीन्द्रानभिषेचयेत् ॥ १२६ ॥
सर्व्वरत्नमयं हैम मुकुटं धारयेत्तथा ।
राजचिह्नानि सर्व्वाणि सेवेत धरणीपतिः ॥
कृताभिषेको भुञ्जीत शृणुयाद्धर्म्मपद्धतिम् ॥ १२७ ॥
अतीतस्य नरेन्द्रस्य महामात्यं पुरोधसम् ।
*महिषीं वाजिनागञ्च दैवज्ञञ्च विवर्ज्जयेत् ॥ १२८ ॥
दैवज्ञमभ्यर्च्यपुरोधसञ्च धनैरनेकैर्ज्जनमर्च्चनञ्च ।
दत्वा प्रजानामभयञ्च राजा कुर्व्वीत कारागृहमोक्षणञ्च ॥ १२९ ॥

इतिराजाभिषेकाविधिः ।

इतियौवनदशाविधानं नाम षड्विंशोऽध्यायः ।

सप्तविंशोऽध्यायः ।

संक्षेपतः समुपभोगदशाविधानं
वक्ष्यामि साम्प्रतमिह प्रकटीकृतास्तु ।

* तुरङ्गमञ्च मातङ्गं महिषिञ्च बिसर्ज्जयेत् ।

Aho ! Shrutgyanam

वास्तुप्रवेशशयनासनभूषणस्त्री
पट्टासिलक्ष्मविधयो मुनिशास्त्रदृष्टाः ॥ १ ॥
[1]निम्नं निन्दितमुच्चन्तु प्रशस्तं वास्तुकर्म्मणि ।
प्रागुदक्प्रवणस्थानं नित्यं वृद्धिकरम्भवेत् ॥ २ ॥
ऊषरञ्च सवल्मीकं पाषाणसिकताधिकम् ।
कपालैस्सकलैर्य्युक्तं दुर्गन्धं निर्ब्बलस्थलम् ॥ ३ ॥
श्लेष्मातकविभीताद्यैः संकीर्णञ्च सकण्टकैः ।
दंष्ट्रीव्याघ्रादिसर्पैश्च युक्तस्थानं विवर्ज्जयेत् ॥ ४ ॥
शुभानि यत्र दृश्यन्ते निमित्तं शकुलानि च ।
जलाशयः समीपे च तत्र वस्तुषु पूजितम् ॥ ५ ॥
अथोत्तरायने कुर्य्याद् वर्ज्जयेद्दक्षिणायनम् ।
ग्रामञ्च नगरं खेटं प्रासादगृहमेव वा ॥ ६ ॥
पौषं चैत्रञ्च वैशाखं श्रेष्ठं मासत्रयंविदुः ।
अत्यायिके तु सम्प्राप्ते श्रवणञ्च परे जगुः ॥ ७ ॥
मीनादिषु त्रिषु निधाय शिरः प्रतीच्यां
प्राच्यान्तु वालमवलोक्य च दक्षिणाशाम् ।
क्षोणीं फणीशमधिशय्य विवर्त्ततेऽसौ
मासैस्त्रिभिस्त्रिभिरतः खलु पृष्टकेन ॥ ८ ॥
निन्दन्त्यमुष्य परिवर्त्तितमासमुच्चै
राविध्य तन्न विदधीत गृहं विधिज्ञः ।
द्वारं तदीयननयनाभिमुखं न कुर्य्या
त्तद्दर्शनेन हिततश्च गृहं प्रवेशम् ॥ ९ ॥
स्त्रीणां शुक्रेऽस्तगे मृत्युं पुंसामस्तमये गुरौ ।
वास्तुकर्म्मणि देशस्य न शस्यादधिमासके ॥ १० ॥

---

१ निम्नम् ।

Aho ! Shrutgyanam

रोहिण्यादीनि तिष्येन्दुहस्तमैत्राश्च युग्मगाः ।
विष्णोत्तरत्रयान्ताश्च प्रशस्ता वास्तुकर्म्मणि ॥ ११ ॥
ओजास्तु तिथयः पूज्याः नवमी पर्व्ववर्ज्जिताः ।
द्वितीया दशमी षष्ठी शुक्लपक्षे तु पूजिताः ॥ १२ ॥
जीवभार्गवसौम्यानां वारवर्गोदयादयः ।
प्रशस्ताः शुक्लपक्षे तु चन्द्रवर्गश्च शोभनः ॥ १३ ॥
कुम्भवृश्चिकगोसिंहयुग्ममत्स्यहयाङ्गणाः ।
वास्तुकर्म्मणि सम्पूज्याः वर्ज्जिताश्चरराशयः ॥ १४ ॥
होराचोर्ध्वमुखी श्रेष्ठा तिर्य्यगाश्च शुभेक्षिता ।
वेश्मकर्म्मसु नैवेष्टा शुभयुक्ताप्यधोमुखी ॥ १५ ॥
वृद्धिं कुर्व्वन्ति लग्नस्था वास्तुकर्म्मणि सद्ग्रहाः ।
शशी च पापा लग्नस्थाः कुर्व्वन्ति गृहनाशनम् ॥ १६ ॥
अष्टमस्था ग्रहाःसर्व्वे विना शुक्रं मृतिप्रदाः ।
आरम्भे रौति चेद्गोली शान्ता दक्षिणभागतः ।
पिङ्गला वरटा चाथ शुभमत्र विनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥
शुभे मुहुर्त्ते सम्प्राप्ते विदध्यात् खननं बुधः ।
पौरुषञ्च त्रिहस्तं वा द्विहस्तश्चैकमेव वा ।
खानयेच्च यथाभूमिर्दोषहीना दृढा भवेत् ॥ १८ ॥
भस्मलोष्टादिशुद्धाभिः पुनर्मृद्भिश्च पूरयेत् ।
अब्दं षण्माशमर्धं वा तूष्णीमासीत बुद्धिमान् ॥ १९ ॥
निर्दोषत्वं ततो ज्ञात्वा जलस्थिरया द्रवीकृते ।
पवित्रितेऽथ गोवासैः श्वभ्रं तत्र च खानयेत् ॥ २० ॥
तैरेव पांशुभिः श्वभ्रं पूरयेत् पुनरेव तत् ।
अधिके वृद्धिदं विद्याद्धीने हीनं समे समम् ॥ २१ ॥
खन्यमाने तु दृश्यन्ते सर्प्पमण्डूकवृश्चिकाः ।

Aho ! Shrutgyanam

भस्मकाष्ठास्थिलोष्ठा वा वर्जयेत्तत्र तद्गृहम् ॥ २२ ॥
शुभे मुहुर्त्ते सम्प्राप्ते दैवज्ञम्ब्राह्मणानपि ।
पूजयित्वाथ वस्त्राद्यैः कारयेत् कर्षणं ततः ॥ २३ ॥
यवसिद्धार्थिकादीनि तत्र बीजानि वापयेत् ।
तेषु प्ररुढवृद्धेषु गोभिस्तानिच खादयेत् ॥ २४ ॥
समीकृत्य ततो भूमिं पञ्चगव्यैर्विशोधयेत् ।
ज्ञात्वाम्बुभिश्च तत्साम्यं प्राप्ते शुभदिनोदये ॥ २५ ॥
शङ्कुषड्ङ्गुलानाहमुत्सेधाद् द्वादशाङ्गुलम् ।
समवृत्तमृजं मूर्द्धनि वुद्बुदाभं निवेशयेत् ॥ २६ ॥
शङ्कुपादतलाधस्तात्कलिकन्निकने तथा ।
शङ्कुपादो यथाधस्तात्किञ्चित् स्पृशति भूतलम् ॥ २७ ॥
शङ्कुकीलनिबद्धेन शङ्कुमानेन तन्तुना ।
परितो विलिखेद्वृत्तं क्रमात्पूर्व्वापराह्णयोः ॥ २८ ॥
शङ्कुच्छाया यदा रेखां प्रवेशोपक्रमैः स्पृशेत् ।
तत्र बिन्दुद्वयं देयं ततः शीतेतरत्विषा ॥ २९ ॥
ज्ञात्वायनञ्च वीथिञ्च भुक्ताभुक्तानि तत्र च ।
याम्येन वाथ सौम्येन मध्यच्छायां विशोधयेत् ॥ ३० ॥
स्वदेशोदयरेखायामुदयत्यंशुमालिनी ।
मध्यच्छाया च न भवेद्र्ज्वीच्छाया च शाङ्कवी ॥ ३१ ॥
प्राची च पश्चिमा चैवं समसूत्रागता भवेत् ।
दिग्विन्दुद्वयमारभ्य पृथग्वृत्तद्वयं लिखेत् ॥ ३२ ॥
मत्स्यपुच्छद्वयाकारो याम्योत्तरदिशोर्भवेत् ।
चत्वारो वाहवः कार्य्याः समावाप्याथवा यतः ॥ ३३ ॥
विषुवद्दिवसे चैवं शङ्कोर्मण्डलमालिखेत् ।
बिन्दुद्वयस्थवृत्ताभ्यां मत्स्यपुच्छौ प्रसाधयेत् ॥ ३४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

मध्यं दिनगते भानौ मत्स्यपुच्छावतारिणी ।
शङ्कुच्छाया [1]मुपातव्या शङ्कुनैव यथांशकम् ॥३५॥
विषुवद्व्यङ्गुलं नाम तदेतत् परिकीर्त्तितम् ।
अङ्गुलं द्वितयं तत्र पदमीत्याभिधीयते ॥ ३६ ॥
यवमर्धाष्टकं ज्ञेयमङ्गुलम्मध्यमस्य तु ।
पुंसो दक्षिणहस्ते तु मध्यमाङ्गुलसम्भवन् ॥ ३७ ॥
मध्यपर्व्वापि वा ज्ञेयं वितस्ति द्वादशाङ्गुलम् ।
हस्तो वितस्ति द्वितयं दण्डःस्यात्तचतुष्टयम् ॥ ३८ ॥
ग्रामादौ दण्डमानं स्याद्धस्तमानं ग्रहादिषु ।
शयनासनञ्च खट्वादौ विद्यादङ्गुलमानकम् ॥ ३९ ॥
भूषादौ यवमानञ्च विज्ञातांशो नियोजयेत् ।
दैर्घमाहृत्य विष्कम्भैश्चतुर्वर्ग ततो नयेत् । ४० ॥
अष्टघ्ने च त्रिघ्नैः शिष्टं नक्षत्रन्तुरगादिकम् ।
कर्त्तुर्नामर्क्षजन्मर्क्षविरुद्धं वास्तु वर्ज्जयेत् ॥ ४१ ॥
अष्टघ्ने भानुना शिष्ट आयः स्यात्व्ययतोऽधिकः ।
त्रिघ्ने मनुहृते शिष्टो व्ययःस्यात् किञ्चिदायतः ॥ ४२ ॥
नक्षत्रेष्वष्टशिष्टन्तु व्यय इत्यपरे जगुः ।
त्रिघ्ने वाष्टहृते शिष्टं योनयो ऽष्टौ ध्वजादयः ॥ ४३ ॥
ध्वजो धूमो हरिश्वागो खरश्चेभश्च वायसः ।
ध्वजगोगजसिंहेषु वस्तु वृद्धिकरं मतम् ॥ ४४ ॥
ओजयोनियुतं यत्स्याद्व्ययादायाधिकञ्च यत् ।
कर्तुस्तारानुकूलं यत् तद्भवेद्वास्तु वृद्धिदम् ॥ ४५ ॥
इदं लक्षणमुद्दिष्टं वशिष्टेन महर्षिणा ।
केचित् षड्वर्गमप्याहुर्[2]वोत्तरावयवो यथा ॥ ४६ ॥

---

१ प्रमातव्या । २ वात्तंरथ्यावर्चो यथा ।

वसुबिलगुणनासच्छिद्रवेदाभिवृद्धिं
विभजतु रविनाडी दन्तितारादिरन्ध्रैः ।
वदतु तदवशिष्टैरायमन्यश्च योनिं
तदनुभवनतारा वारमंशं क्रमेण ॥ ४७ ॥

स्थिरे चोभयराशौ वा शुभग्रहसमन्विते ।
नानामङ्गलघोषेण स्थापयेत् प्रथमां शिलाम् ॥ ४८ ॥
नन्दा भद्रा जया पूर्णा शिला स्थाप्याः प्रदक्षिणम् ।
तन्मध्यं श्वभ्रमम्भोभिराधिवासितकुम्भगैः ॥ ४९ ॥
पूरयेद्दक्षिणावृत्तं यदि तोयं शुभावहम् ।
श्रियं विवर्द्धयेद्वस्तु चिराच्छुष्यति चेज्जलम् ॥ ५० ॥
देवब्राह्मणयोर्युग्मा हस्तसङ्ख्याःसुपूजिताः ।
अयुग्मसङ्ख्याः शेषाणां जनयन्ति गृहश्रियम् ॥ ५१ ॥
प्रागूपश्चिमगता रेखा दश तत्र प्रकल्पयेत् ।
याम्योत्तरगताश्चैवमेकाशीतिपदं भवेत् ॥ ५२ ॥
ग्रामालयादौ सर्व्वत्र पदमेवं विचारयेत् ।
प्रागुदक्कोणमारभ्य क्रमादेवं निवेशयेत् ॥ ५३ ॥
शिखी तथैव पर्ज्जन्यो जयन्तःपाकशासनः ।
सहस्रकिरणःसत्यो भृतश्चैवान्तरीक्षकः ॥ ५४ ॥
चित्रा भानुश्च पूषा च वितथश्च गृहक्षतः ।
यमराजश्च गन्धर्व्वो भृङ्गराजो मृगस्तथा ॥ ५५ ॥
निर्ऋतिर्द्वारपालश्च सुग्रीवःपुष्पदन्तकः ।
वारुणश्च सुरःशेषो राजयक्ष्मा तथैव च ॥ ५६ ॥
समीरणश्च नागश्च मुख्योपल्लाटकस्तथा ।
ईशो भुजङ्गमश्चैवमदितिर्दोंधितिः पुनः ॥ ५७ ॥
द्वात्रिंशद् बाह्यकोष्टस्थाः देवाः स्वान्तास्त्रायोदश ।

Aho ! Shrutgyanam

वास्तुमध्ये तथा ब्रह्मा ज्ञेयो नवपदाधिपः ॥ ५८ ॥
तस्य पूर्व्वादिकोष्ठासु चत्वारःषट् पदेश्वराः ।
आर्य्यमा च विवस्वांश्च मित्रश्च पृथिवीतरः ॥ ५९ ॥
सावित्रःसविता चाग्नेर्ब्रह्मणोऽन्तेऽव्यवस्थितौ ।
विजयश्च महेन्द्रश्च निर्ऋतेश्च ब्रह्मोत्तरे ॥ ६० ॥
रुद्रश्च राजयक्ष्मा च वायुर्ब्रह्मान्तरे स्थितः ।
आपश्चैवापवत्सश्च रुद्रह्मान्तरे स्थितौ ॥ ६१ ॥
एतेऽष्टौ कोष्ठमेकञ्च कोष्ठार्द्धश्चैव भुञ्जते ।
तत्तत्पादेषु ते देवाः पूजनीया यथाविधि ॥ ६२ ॥
पदमध्यं पदाग्रश्च वस्तुनो मर्म्म कथ्यते ।
पदाष्टमगतं मर्म्म तुलास्तम्भादिषु स्मृतम् ॥ ६३ ॥
खरकी च विदारी च पूतना चैव राक्षसी ।
ईशानादिषु कोणेषु वाह्यस्थाश्च पिशाचिकाः ॥ ६४ ॥
रविःशुक्रःकुजो राहुः सौरश्चन्द्रो बुधो गुरुः ।
प्रागादिकास्तु दिक्पालाः पूजनीया यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥
भूम्यारम्भं विधायैवं वनारम्भो विधीयते ।
परिघं परिहृत्यैव सर्व्वारम्भविधिं जगुः ॥ ६६ ॥
पौराणिकास्तु न ग्राह्याः स्तम्भोत्तरतुलेष्टिकाः ।
चैत्यश्मशानगा वृक्षाः सच्छिद्रा वह्निदूषिताः ॥
अपशस्ताच जन्मर्क्षाः जाता स्तम्भादिनोचिताः ॥६७॥
विदध्याद्वांशिकं स्तम्भं द्वादशांशं ततःक्रमात् ।
एकादशविभागं वा दशभागमथापि वा ॥ ६८ ॥
यांशोनं कर्णपादःस्याद्वारबाहा ततोऽपि च ।
नरांशोऽन्यत्र विष्कम्भो[३] तदंशेनाहिभागनुत् ॥ ६९ ॥

---

१ चाग्नेर्ब्रह्मानोन्नव्यवस्थितौ ।

Aho ! Shrutgyanam

स्तम्भोत्तरतुलादीनां स्थापनञ्च स्थिरोदये ।
मरुन्मार्गप्रतिष्ठा च कवाटश्चोभयोदये ॥ ७० ॥
अधन्यमतिसंक्षिप्तं विस्तीर्णं शत्रुवृद्धिदम् ।
अत्युच्छायश्च नैवेष्टमतिखर्व्वञ्च वस्तुनुत् ॥ ७१ ॥
चतुरस्रं गृहं श्रेष्ठं प्रागायत्तं धनावहम् ।
न शस्तं तिर्य्यगायत्तं वृत्ताकारञ्च निन्दितम् ॥ ७२ ॥
चतुःशालं गृहं शस्तं प्रागुदग्निम्नवृद्धिदम् ।
दक्षिणापरनिम्नन्तु दुःखदारिद्रकृत् सदा ॥ ७३ ॥
उदक्शीनं त्रिशालञ्च प्राग्पार्श्वोनञ्च वृद्धिदम् ।
याम्योनं सौख्यवित्तघ्नं पश्चिमोनञ्च दुःखदम् ॥ ७४ ॥
याम्यपश्चिमयुक्तन्तु गृहं शस्तं द्विशालकम् ।
प्रागुदक्पार्श्वयुक्तन्तु व्याधिनैधन्यकारणम् ॥ ७५ ॥
एकशालगृहं याम्ये पश्चिमे वा प्रशस्यते ।
प्राच्यां वाप्युत्तरस्यां वा नैधन्यं मरणप्रदम् ॥ ७६ ॥
यदीच्छेद्वेश्मनि वृद्धिं समन्तात्तस्य वर्ज्जयेत् ।
पूर्व्वस्यामुत्तरस्यां वा वेश्मवृद्धिः प्रशस्यते ॥ ७७ ॥
दौवारिके च पर्ज्जन्ये नागे च वितथे तथा ।
कर्त्तव्यो जलनिस्रावः द्वारदेशे मनीषिणा ॥ ७८ ॥
गृहक्षते महेन्द्रे च भल्लाटे पुष्पदन्तके ।
गृहद्वारं हि कर्त्तव्यमेवं केचित् प्रचक्षते ॥ ७९ ॥
सर्व्वदिक्षु पदे तूर्य्ये वामात् षष्टेऽपि याम्यतः ।
प्रागुदीच्योस्तृतीये वा द्वारं मध्येऽप्युदग्गतम् ॥ ८० ॥
कूपान् वा चैत्यवृक्षान् वा हित्वा मार्गमथापि वा ।
न कुर्य्याद्द्वारविन्यासं वेशद्वारन्तु वामतः ॥ ८१ ॥
अन्नशाला भवेत् प्राच्यामप्राच्यां धान्यसङ्ग्रहः ।

Aho ! Shrutgyanam

उदीच्यां देवतागारं प्रतिच्यां धनरक्षणम् ॥ ८२ ॥
महानसस्तथाग्नौवा ईशाने वा सुरालयः ।
मारुते धान्यगेहश्च निर्ऋतौ भाण्डसञ्चयः ॥ ८३ ॥
ईशाने जलभाण्डाद्या उदीच्यां वा प्रशस्यते ।
प्रागुदीच्योर्गजाश्वाजगोजातीनां निकेतनम् ॥ ८४ ॥
मृगे च द्वारपाले च वारुणे राजयक्ष्मणि ।
समीरणे च नागे वा मल्लवेश्म विधीयते ॥ ८५ ॥
ग्रामवस्तु यथेशाने सर्व्वदेवान्निवेशयेत् ।
बुधं दाक्षिणदिग्भागे जिनं याम्ये निवेशयेत् ।
स्कन्दं दक्षिणदिग्भागे दुर्गामुत्तरकोणतः ॥ ८६ ॥
प्राच्यां रविञ्च शास्तारं निर्ऋतौ विनिवेशयेत् ।
पश्चादुदग्गतं विष्णुं ज्येष्ठामुपजलाशयम् ॥ ८७ ॥
उत्तरेशानयोर्मध्ये मातरो ग्रामतो बहिः ।
देवानेवं प्रतिष्ठाप्य पश्चाद्वर्णं निवेशयेत् ॥ ८८ ॥
पूर्व्वतो विप्रजातिः स्याद्दक्षिणे नृपतेः कुलम् ।
वारिजं पश्चिमेकुर्य्याच्छुद्रांस्तूत्तरतःपुनः ॥ ८९ ॥
कुलालान् बाह्यतःसौम्येनापि तान् पूर्व्वदक्षिणे ।
चक्रिणं याम्यदिग्भागे बहिर्ग्रामे निवशयेत् ॥ ९० ॥
क्रोशार्द्धमात्रे चाग्नौ वा स्वर्णकारादितक्षकान् ।
चण्डालान् ग्रामसीमान्ते परितःसन्निवेशयेत् ।
ईशाने क्रोशमात्रे तु मारुते वा श्मशानकम् ॥ ९१ ॥
कोष्टागारं तथाग्नौ वा र्निऋतौ पशुकोष्टकम् ।
अश्वशाला च वायव्ये छागशाला च शाम्भवे ।
र्निऋतौ होमदेशश्च कारागारं शिवे तथा ॥ ९२ ॥
भौमवारेऽम्बु तारायां यमलग्ने विशेषतः ।

Aho ! Shrutgyanam

प्राकारबन्धनं कुर्य्यात् परिखामिन्दुभे खनेत् ॥ ९३ ॥
स्वातौ सेतुं निबध्नीयान्मन्दवारे वृषोदये ।
सिंहोदये च कार्य्याणि जीवाहे दुर्गवासकृत् ॥ ९४ ॥
चान्द्रे पुष्येण संयुक्ते जीववारे विचक्षणः ।
गोष्ठञ्च वृषशालञ्च कारयेद्वृषभोदये ॥ ९५ ॥
रौद्राग्निमूलयाम्याहियुक्ते भौमार्कवासरे ।
नन्दायाञ्च युतेकुर्य्याद्दासदर्शननिग्रहौ ॥ ९६ ॥
कृष्णे भूततिथौ मूले स्थिरलग्ने शुभोदये ।
निदध्याद्द्रविणं भूमौ तन्न नश्यति केनचित् ॥ ९७ ॥
मन्दस्य वारे हस्तऽर्के पूर्णा या चेत् समागता ।
शनेर्ल्लग्नेऽस्य होरायां व्ययं कुर्य्याद्विचक्षणः ॥ ९८ ॥

इतिवास्तुविधानम् ।

वास्तुप्रवेशनं कुर्य्यान्मतिमानुत्तरायने ।
विहाय कोणगान् मासान् विवृतद्वारदिङ्मुखम् ॥ ९९ ॥
शुक्लपक्षःप्रशस्तःस्यात् कृष्णस्यासप्तमादिनात् ।
पूर्व्वाह्णे सुप्रशस्तःस्यान् मध्याह्ने मध्यमो मतः ॥ १०० ॥
रोहिण्युत्तरहस्ताश्विमैत्रातिष्येन्दुविष्णवः ।
पौष्णादिसाश्विनीप्रोक्ता द्वादशैते प्रवेशने ॥ १०१ ॥
गुरुशुक्रबुधानान्तु द्रेष्काणांशदिनादयः ।
गृहप्रवेशे शस्यन्ते मध्यमाःशनिचन्द्रयोः ॥ १०२ ॥
तिथयःसुप्रशस्ताःस्युः पक्षच्छिद्रविवर्ज्जिताः ।
गोमीनसिंहकुम्भाश्च नृयुग्कन्यातुरङ्गमाः ।
सप्त शस्ताः प्रवेशेषु शुभयुक्तश्च वृश्चिकः ॥ १०३ ॥
लग्नार्थपुत्रधर्म्मायकर्म्माम्बुसहजस्थिताः ।

Aho ! Shrutgyanam

गुरुभार्गवसाम्याश्च प्रवेशे शुभदाःस्मृताः ॥ १०४ ॥
त्रिषडायगताःपापाः शशी धर्म्मार्थलाभगः ।
पञ्चमं शुद्धमिच्छन्ति केचिद्रन्ध्यान्तिमावपि ॥ १०५ ॥
दूर्व्वान्द्विजोपभोगेन गोनिवासैश्च पावनम् ।
ततो ग्रहबलं कुर्य्याद्विधिना मङ्गलोचितम् ॥ १०६ ॥
वर्द्धेन्द्रवल्लीम्भद्राश्च खरपुष्पं पितृद्रुमम् ।
पलाशश्च शिरीषश्च परिसम्मार्ज्जयेद् गृहम् ॥ १०७ ॥
गोमयेनोपलिप्य क्ष्मां पिच्चिरक्तमृदापि वा ।
कपिला पञ्चगव्येन गृहञ्च परिषेचयेत् ।
फलं भित्तिविभेदादौ ज्ञेयं नक्षत्रचक्रतः ॥ १०८ ॥

वामावृत्तो मलिनकिरणःसस्फुलिङ्गोऽल्पमूर्त्तिः
क्षिप्रं नाशं व्रजति विमलं स्नेहवसान्वितोऽपि ।
दीपःपापं कथयति फलं शब्दवान् वेपथुश्च
[1]व्यादीर्घार्च्चिर्विशलभमरुद्यश्च नाशं प्रयाति ॥१०९॥

प्रदीपो विमलःस्निग्धः सशब्दप्रथुवर्ज्जितः ।
सुस्थिरः किरणोद्भूतो वर्द्धयेद्भवनश्रियम् ॥ ११० ॥
पुण्याहवादैःसानन्दः प्रविशेद्भवनं प्रभुः ।
दक्षिणाङ्घ्रिप्रवेशाद्यं सज्ञातिः ससुहृज्जनः ॥ १११ ॥
पश्चिमे शयनं कुर्य्याद् दक्षिणे च विशेषतः ।
आरादभूतपदं जह्यादनुवंशं शयीत वा ॥११२॥
प्राङ्मुखस्त्वेव भुञ्जीत न याम्योदङ्मुखःसदा ।
पुरीषोच्चिष्टमूत्रादिसङ्कीर्णां न स्पृशेद् भुवम् ॥ ११३ ॥
पौर्णमास्याममावास्यामुपरासौ च संक्रमैः ।
शुक्रेन्दुवारयोर्गेहं गोकरीषेण लेपयेत् ॥ ११४ ॥

---

१ व्यादीर्घार्च्चिशालाभमरुद्यश्च नाशं प्रयाति ।

दिनस्याद्यन्तयोरेवं दीपं प्रज्वालयेद् गृहे ।
फाल्गुणे मासि माघे च पौर्णमास्यामुषस्यपि ।
विशुद्धबलिगन्धाद्यैरर्च्चयेद् गृहदेवताम् ॥ ११५ ॥
गृहागताश्च सम्पूज्या ब्राह्मणातिथिबान्धवाः ।
गृहमेधीति कुर्व्वाणः श्रियं नियमवाप्नुयात् ॥ ११६ ॥
पूषा पुष्यपुनर्व्वसू वसुहरी चित्रा शशी रोहिणी
तारास्तास्तिथयोंशुमत्फणिमया दिक्पञ्चदश्यो हरा ।
वाराश्चन्द्रसुतेन्दुशुक्रगुरवो युग्मं कुलीरो धनुः
कुम्भान्तावपि राशयो निगदिता गव्यं प्रयोगायते ॥ ११७ ॥
चन्द्राश्चाश्लेषयाश्लिष्ट कृष्णपक्षे चतुर्दशीं ।
भुजङ्गांशोदयः कैश्चिन्नागयोग इतीष्यते ॥ ११८ ॥
पृकूथ शिरःपञ्चसरोजपत्रं निश्छिद्रमेकीकृतवद्धनालम् ।
गव्यं प्रपूर्णं निखनेदनन्तर्मूषा तदा क्षुद्रविनाशिगेहे ॥ ११९ ॥
मूत्रं द्विभागं शकृदेकभागं पयोऽष्टभागं दधि तत्समानम् ।
क्षीरार्द्धकं वा चतुरंशमाज्यं गव्यानि सर्व्वाणि समानि वास्युः १२०
गव्येक्षुशालीयवमुद्गमास गोधूमबिल्वास्थितिलाब्जवीजम् ।
पद्मच्छदस्थं विनिधाय ताम्रे क्षुद्रानिखन्याद् भुवि नागयोगे १२१

इतिप्रवेशविधानम् ।

———:o:———

पनसास्तिन्दुको निम्बःस्यन्दनश्चन्दनोऽर्जुनः ।
शिंशपाशालकाः स्मर्य्याः सुरदारुश्च शोभनः ॥ १२२ ॥
सर्व्वे ते तरवःशस्ता ये च स्वादुफलोद्गमाः ।
गजाः संनिहताश्चैस्यश्मशानपथगान्विताः ॥ १२३ ॥
नान्यं संयोगमिच्छन्ति तिन्दुकी शिंशपाशनाः ।
केवलःस्पन्दनो नेष्टो दन्तःशस्तस्तथाविधः ॥ १२४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शितांशुङ्गुलम्भवेद्राज्ञां शयनं विजयप्रदम् ।
नवतिश्च सक्राद्विस्त्रीः षड्‌नशयनासनम् ।
क्रमेण युवराट् मन्त्री वलनेत्रपुरोधसाम् ॥ १२५ ॥
भोक्तुश्च पादवैकल्यमेकास्यिन् निम्नमस्तके ।
द्वयोर्न ज्जीर्य्यते चान्नं त्रिचतुर्षु वधागमः ॥ १२६ ॥
द्रुमेणैकेन शस्तः स्याद् द्वाभ्यां शस्ततरस्तथा ।
त्रिभिरात्मजवृद्धिःस्याच्चतुर्भिश्च यशोधनः ॥ १२७ ॥
पञ्चभिःपञ्चतां याति षट् सप्ताष्टमहीरुहैः ।
जायते वंशविच्छेदः घटिते शयनासने ॥ १२८ ॥
त्रिवितस्तिस्तु विस्तारो मध्यमस्त्र्यङ्गुलोतरः ।
वरिष्टःशयनस्योक्तो दैर्घं पञ्चवितास्तिकम् ॥ १२९ ॥
मध्यमं तद्वरिष्ठं स्यात् पुनःपञ्चाङ्गुलोत्तरम् ।
सर्व्वीयशयने ज्ञेयावेवमायामविस्तरौ ॥ १३० ॥
पादोत्सेधो वरिष्टःस्यादर्द्धोत्तरवितस्तिकः ।
तदर्द्धार्द्धापहारेण मध्यमश्चाधमो मतः ॥ १३१ ॥
स्वोच्चो यस्य चतुर्थांशः पञ्चमो वास्य विस्तरः ।
एवं शयनपादे स्याद्विस्तारायामलक्षणम् ॥ १३२ ॥
कुलज्येष्ठाश्च ये पूज्या जातिविद्यावयोऽधिकाः ।
तेषामभिमुखेनैव सेवेत शयनासनम् ॥ १३३ ॥

इतिशयनाशनविधिः ।

——ooo——

यत्काकपादकलुषोत्तरर्शकराणु—
विद्धञ्च शीर्णमथवा द्विगुणश्रियुक्तम् ।

---

१ जीर्य्यते चार्णम् ।

Aho ! Shrutgyanam

अन्तर्निगूढमलिना कृतिकेशधातु—
युक्तं समस्तजनदुःखवधाय रत्नम् ॥ १३४ ॥
यत् स्निग्धमम्भसि क्षिप्तं लघुप्रतरनिश्चयम् ।
अदृष्टं विदितं वज्रमवशत्रुरिपापहम् ॥ १३५ ॥
वज्रं न किञ्चिदपि धारयितव्यमेव
पुत्रार्थिनीभिरबलाभिरुषन्ति तज्ज्ञाः ।
शृङ्गाटकात्रिपुटधान्यकवास्थितं यत्
श्रोणीनिभञ्च शुभदं तनयार्थिनीनाम् ॥ १३६ ॥

एकावली नाम यथेष्टसंख्या
हस्तप्रमाणा मणिविप्रयुक्ता ।
संयोजिता वा मणिना तु मध्ये
सा यष्टिरुक्ता सकलेन भोज्या ॥ १३७ ॥

निवृत्तस्य हि विप्रस्य नेष्टमाभरणं सदा ।
यज्ञकुण्डलतःशेषं शेषस्य सकलं शुभम् ॥ १३८ ॥
चतुर्वर्गविधानेन भूषणं मुकुटादिकम् ।
नामजन्मर्क्षयोरिष्टं धारयेद्धरणीपतिः ॥ १३९ ॥
सौभाग्यं वकुलेऽथवापि ककुभे सर्ज्जे च कुन्दे यशः ।
पाटल्यां समितं जने च पटुतामाधुर्य्यमाम्लातके ।
निर्गुण्ड्यामपि रोगशोकहरणं जम्वाम्रयोःपाटवम्
पुन्नागे विजयो जयश्च तिलके नागे तथोदुम्बरे ॥ १४० ॥
उदङ्मुखं प्राङ्मुख एव वासौ जोषं यथेष्टं विनिमार्ज्य दन्तान् ।
जलाजलौ शीतगुमण्डलस्थं ध्यात्वा जपित्वा च तुरीयमुच्चैः १४१
प्रक्षाल्य वक्त्रं विधिवद्विधिज्ञो ध्यात्वाथ देवं व्यनुलिप्य तैलैः ।
देहन्ततो जप्तशुभञ्जनेन व्यभ्यञ्ज्य नेत्रं सकलं प्रियं स्यात् १४२
तुल्यस्त्रियोगं प्रकरोऽतिरागं रागक्षयं पूगफलातिरिक्तः ।
चूर्णाधिको वक्त्रविकारगन्धिःपत्राधिकःसाधु करोति गन्धम्॥१४३

Aho ! Shrutgyanam

लौहे पात्रे तण्डुलान् कोद्रवाणां शुक्तौ पक्का लोहचूर्णेन सार्द्धम् ।
लिप्त्वा रूक्षे मूर्ध्नि शुक्त्याम्बु केशे दत्त्वा तिष्ठेद् वेष्टयित्वार्द्रपत्रैः १४४
याते तृतीये प्रहरे विहाय दद्याच्छिरस्यामलकप्रलेपम् ।
प्रच्छाद्य पत्रैःप्रहरद्वयेन प्रक्षालनं कार्ष्ण्यमुपैति शीर्षम् ॥१४५॥
पश्चाच्छिरःस्नानसुगन्धितैलैर्लोहाम्लगन्धान् शिरसोपनीय ।
हृद्यैश्च गन्धैर्विविधैश्च धूपैः सनिर्विशेद्राज्यसुखं प्रियाभिः ॥१४६॥

इति भूषणविधिः ।

———ooo———

विरक्तचेष्टा भ्रुकुटी मुखत्वं पराङ्मुखत्वं कृतविस्मृतिश्च ।
असम्भ्रमो दुष्परितोषतांच तादिष्टमैत्री परुषञ्च वाक्यम् ॥१४७॥
सुस्पृष्टमालोक्य दुनोति गात्रं करोति गर्व्वं न रुणद्धि यानृतम् ।
चुम्बादिरामे वदनप्रमार्ष्टिः पश्चात्समुत्तिष्ठति पूर्व्वसुप्ता ॥१४८॥
इमास्तु विद्यादनुरक्तचेष्टा प्रियाणि ब्रूते च धनं ददाति ।
विलोक्य संहृष्यति वीतरोषः प्रमार्ष्टि दोषान् गुणकीर्त्तनेन ॥१४९
तन्मित्रपूजा तदरिष्टमैत्री कृतस्मृतिःप्रोषितदौर्मनस्यम् ।
स्तनौष्ठदन्तैरुपगूहनश्च स्वेदोऽथ कम्पम्प्रथमाभियोगे ॥ १५० ॥
यस्यामनूनामनुरक्तचेष्टां निरीक्षते तत्र रमेत धीमान् ।
सा चेत् पराधीनवधूर्न तत्र रमेत लोकद्वयवृद्धिमिच्छन् ॥१५१॥

इति स्त्रीविधानम् ।

———o———

मध्येऽष्टाङ्गुलविस्तीर्णं पट्टं राज्ञःशुभावहम् ।
महिष्याःसप्तविस्तीर्णं युवराजस्य षडङ्गुलम् ॥ १५२ ॥
चतुरङ्गुलविस्तीर्णं पट्टं सेनापतेर्भवेत् ।
द्वाभ्यां प्रसादपट्टं स्यात् पट्टं पञ्चैवमीरितम् ॥ १५३ ॥

---

१ स्थानाष्टद्रुतेः । २ लोकवायवृद्धामिच्छन् ।

स्त्रमध्यद्विगुणा यामाः सर्व्वे ते हेमनिर्म्मिताः ।
मुखे विस्तीर्य्यमानास्ते क्रियमाणेषु शोभानाः ॥ १५४ ॥
राज्ञःपञ्चशिखं पट्टं त्रिशिखं पुत्रभार्य्ययोः ।
सेनापतेरेकशिखं शिखाविरहितोऽपरम् ॥ १५५ ॥
अंङ्कःसमाङ्गुलं प्राप्तो हर्त्ता जीवितराज्ययोः ।
मध्ये विष्फुटितस्त्याज्यः पार्श्वे विष्फुटितस्तथा ॥ १५६ ॥
यवमानेन पट्टेषु चतुर्वर्गविधिं जगुः ।
सम्भोक्तुरनुकूलोऽयं पट्टो विजयवर्द्धनः ॥ १५७ ॥

इति पट्टविधिः ।

———o———

पञ्चादशाङ्गुलमितः प्रवरः कृपाणः ।
प्रोक्तः पुराणनिपुणैरधमस्तदर्द्धम् ।
अङ्कःसमाङ्गुलगतः शुभरुपकश्च
दिष्टाहवस्त्वित रथा विपदं विधत्ते ॥ १५८ ॥
क्वणिते मरणं काण्डे पराजयश्चापवर्त्तिते कोशात् ।
स्वयमुद्गीर्णे युद्धः ज्वलिते विजयो भवेत् खड्गे ॥१५९॥
नाकारणेन व्रणयन्न वदेच्च मूल्यं
पश्येन्न तत्र वदनं न विघट्टयेच्च ।
देशेन तस्य कथयेत्प्रतिमानयेच्च
नैव स्पृशेन्नृपतिरप्रियतोऽसि यष्टिम् ॥ १६० ॥

इति खड्गविधिः ।

———ooo———

इत्युपभोगदशाविधानं नाम सप्तविंशोऽध्यायः ॥

———o———

१ अङ्कस्सावाङ्गुप्रोक्तो ।

Aho ! Shrutgyanam

अष्टाविंशोऽध्यायः ।

——:o:——

वक्ष्याम्यतः परमहं लघुना क्रमेण
स्पष्टान्वयैरुपचयार्हदशाविधानम् ।
भूमिप्रवेशकृषिकर्म्मविशिष्टवस्तु
बीजाप्तिसङ्ग्रहबणिग्मरणानि तत्र ॥ १ ॥
प्रविश्य विधिवत्पूर्व्वं विदधीत कृषिं ततः ।
उत्तरत्रयमार्द्रा च चित्रा याम्यश्च मित्रभम् ॥ २ ॥
स्वातिर्मघानुराधे च पुष्यं शस्तं प्रवेशने
विदोषास्तिथयः शस्ताः श्रेष्ठं भौमादिनं तथा ॥ ३ ॥
कैश्चिच्चन्द्रादिनम्प्रोक्तं बुधजीवौ तु मध्यमौ ।
गोकुलीरालिकन्यानामुदयांशाः शुभाःस्मृताः ।

इति प्रवेशविधिः ।

——:o:——

रेवतीपुष्यहस्ताश्च रोहिणी चोत्तरत्रयम् ।
अदितिर्मूलमित्येतद् विशिष्टे कृषिकर्म्मणि ॥ ४ ॥
राधानुराधा स्वातिश्च विष्णुःपैत्रं त्रिपूर्व्वकम् ।
चित्राश्विनीतिचैत्राणि परे प्राहुःकृषिक्रिये ॥ ५ ॥
शुक्रार्कज्ञेन्दुजीवानां वारवर्गोदयाः शुभाः ।
विदोषास्तिथयःसर्व्वाः कृषिकर्म्मणि पूजिताः ॥ ६ ॥
मृगो मीनःकुलीरश्च मिथुनं वृषभोदयः ।
श्रेष्ठो धनुस्तुला कन्या मध्यमा कृषिकर्म्मणि ॥ ७ ॥

---

१ स्पष्टानूट्यैः । * प्रतिमानयेच्च।

Aho ! Shrutgyanam

आर्तिमायजलोत्सर्गे शस्तं मूलादिभत्रयम् ।
कौश्चिच्छ्रवणनक्षत्रं पूषा च परिकीर्त्तिता ॥ ८ ॥
क्षीरान्नं मधुना भुक्त्वा शुचिःप्रयतमानसः ।
शुभेन वृषयुग्मेन क्षेत्रंसम्प्राप्य कर्षकः ।
अर्च्चयेद् बलिदानेन तस्यां सायं दिनेश्वरम् ॥ ९ ॥
उदङ्मुखः प्राङ्मुख एव वासौ कृषीवलः शस्तहलंगृहीत्वा ।
कुर्य्यात् कृषिं तस्य हलस्य रेखास्तिस्रो यथा सुप्रकटी भवन्ति॥१०
बलिभुक् बलिमादाय यदि गच्छेन् महादिशम् ।
प्रशस्तः कोणदिग्यातः सस्यहानिप्रकाशकः ॥ ११ ॥
बहवो वायसास्तत्र सूचयन्ति महाभयम् ।
न कश्चिद्यदि गृह्णाति* द्विजातिर्वा भयंतथा ॥ १२ ॥
हलभङ्गे कुलक्षोभः[1] शीर्षभङ्गे स्त्रियो वधः ।
युगस्य भङ्गे जानीयाद् दुरितं गृहमेधिनः ॥ १३ ॥
फालस्य भङ्गे दुहितुः सूनोर्गोत्रस्य पीडनम् ।
वृषपादस्य भङ्गे तु स्वकुलक्षयमादिशेत् ।
विधिना श्रुतिदृष्टेन शमयेत् पौष्टिकेन तत् ॥ १४ ॥
वहुलाभङ्गते भौमवारे कुर्य्याद्विशेषतः ।
वनानां छेदनैश्चैव[2] दाहकर्म्म च तत्र हि ॥ १५ ॥
फलपल्लवपुष्पाढ्यान् वनस्पतिमहीरुहान् ।
विद्यात् सस्यादिपौष्कल्यान् हानिञ्च विपरीततः ॥१६॥
रक्तशालिरशोकेन शालैः कलमशालयः ।
यवको वटप्लक्षेण तिन्दुकेन च षष्टिकाः ॥ १७ ॥
अश्वत्थेन च निष्पत्तिः सर्व्वसस्यस्य निश्चिता ।
जम्बुभिस्तिलमाषाश्च यवाः सप्तदलेन च ॥ १८ ॥

---

* विजातिर्वा । १ कुलक्षोपः । २ वानाङ्कंदनञ्चैव ।

मुद्गाःशिरीषवृक्षेण गोधूमाश्च मधूकतः ।
अतिमुक्तककुन्दाभ्यां कार्पासस्य च सम्पदः ॥ १९ ॥
अशनैः सर्षपा ज्ञेयाः कुलत्था बदरीद्रुमैः ।
मुद्गाश्च चिरविल्वेन वेतसैरतसीश्रियः ॥ २० ॥
कोद्रवाश्च पलासेन चणवृद्धिरथेङ्गुदैः ।
मुक्तारंजनशङ्खानां समृद्धिस्तिलकेन च ॥ २१ ॥
करिणो हस्तिकर्णेन वाजिकर्णेन वाजिनः ।
गोजातिः पाटलीभिःस्यात् कदलीभिरजाविकाम् ॥२२॥
प्रवाला बन्धुजीवेन कनकानि[2] च चम्पकैः ।
वैदूर्यं नन्दियावर्त्तै र्वज्रकुरवकेन च ॥ २३ ॥
तालकश्च कुशुम्भेन सिन्दुवारेण मौक्तिका ।
रक्तोत्पलेन राजानो मन्त्री नीलोत्पलेन च ॥ २४ ॥
श्रेष्ठी सुवर्णपुष्पेन कुमुदेन पुरोहितः ।
सौगन्धिकेन सन्येशः स्वर्णमर्केन वर्द्धते ॥ २५ ॥
क्षेममाम्रद्रुमैर्विद्याद्भयं भल्लातकैर्भवेत् ।
आरोग्यं पीलुभिर्ज्ञेयं सुवृष्टिःककुभेन च ॥ २६ ॥
दुर्भिक्षमनुमेयं स्यात् शमीखदिरसम्पदः ।
पिचुमन्दश्च नागैश्च सुभिक्षान् जगतां वदेत् ॥ २७ ॥
मरुत्कोपः कपित्थेन व्याधयः कुटजेन च ।
अनावृष्टिश्च निचुलैः समरःशाल्मलीद्रुमैः ॥ २८ ॥
इक्षवः कुशदुर्व्वाभ्यां कोविदारेण चित्रकम् ।
श्यामा लतानां सम्पत्ता बन्धुकीनां विवृद्धयः ॥ २९ ॥

इति विशिष्टवस्तुविधिः ।

---

१ मतिमुत्काक । २ कतकानि । ३ कालकश्चकुम्भेन । ४ वर्द्धने ।

एवं वर्द्धनशीलानि बीजानि सुपरीक्ष्य च ।
उप्तिमारभते विद्वान् शास्त्रोक्तविधिनामुना ॥ ३० ॥
मासस्त्वाषाढसंज्ञश्च ज्येष्ठं मूलञ्च सम्मतः ।
कालो भौमार्त्तवस्येति वापस्तत्र प्रशस्यते ॥ ३१ ॥
वापः प्रशस्ततारान्द्यैः कलिकारसमर्दितम् ।
बीजमङ्कुरयेद्गेहे प्राक्सप्ताष्टनवाहतः ॥ ३२ ॥
मूलं मैत्रं मघा हस्तः पौष्णसर्पोत्तरत्रयम् ।
प्राजापत्यञ्च पुष्यञ्च स्वातिश्रवणवारुणे ॥ ३३ ॥
बीजकर्म्माणि शस्तानि नक्षत्राणि चतुर्दश ।
आर्द्रादित्याश्विवस्विन्दुतारका मध्यमाःस्मृताः ॥ ३४ ॥
पञ्चमी सप्तमी चैव पौर्णमासी त्रयोदशी ।
तृतीयैकादशी चैव प्रशस्ता बीजकर्म्मणि ॥ ३५ ॥
द्वितीया दशमी षष्ठी मध्यमेति प्रकीर्त्तिता ।
विष्टिवर्ज्यानि शस्तानि चराणि करणाणि षट् ॥ ३६ ॥
*गोसिंहकर्किमीनाश्च मकरश्चैव पूजिताः ।
†यमकुम्भतुला मध्याः शेषाः सर्व्वे विगर्हिताः ॥ ३७ ॥
शुक्रेन्दुजीवसौम्यानां प्रशस्ता दिवसादयः ।
षष्ठायभातृगाःपापाः श्रेष्ठाःशेषेषु वर्ज्जिताः ।
शशिबन्ध्वर्थपुत्रस्त्रीभातृकर्म्मायगाःशुभाः ॥ ३८ ॥
अष्टमस्थाःग्रहा नेष्टाः शुक्रो नेष्टश्च सप्तमे ।
विनिन्दिताःशुभाःषष्ठे कालकर्णीकलस्तथा ॥ ३९ ॥
वपनं यत्र तारायां बीजं नेयं हि तादृशम्[१] ।
प्राङ्मुखाः कृत्तिकाद्यास्तु मघाद्या दक्षिणामुखाः ।
पश्चान्मुखाश्च चैत्राद्या वस्वाद्यास्तूत्तरामुखाः ॥ ४० ॥

---

* गोनृयुकार्कि । † हरि । १ तर्द्दिशाः ।

परिघो नाम दण्डोऽस्ति वायुवह्निसमश्च यः ।
न गच्छेत्तमतिक्रम्य बीजकर्म्मणि बुद्धिमान् ।
तस्मात्तत्तन्मुखारम्भं कृष्याद्यारम्भमाचरेत् ॥ ४१ ॥
वामकर्णाविभिन्नौ[1] द्वौ थान्तौ[2] नक्रयुतायुतौ ।
श्येनश्वानौ[3] च न शान्तौ बीजानां वपने विदुः ॥ ४२ ॥
शकुनाः सुस्वरा वामे बीजानिर्गमने शुभाः ।
ब्राह्मे मुहूर्त्ते सर्व्वेषां सस्यानां वापनं हितम् ।
मुहूर्त्ते वाभिजित्ख्याते वृक्षरोपणमुत्तमम् ॥ ४३ ॥
शुक्लपक्षे तु पञ्चम्यां चन्द्रे पुष्यमुपागते ।
मुहूर्त्ते वाभिजित्ख्याते वपनं रोपणं हितम् ॥ ४४ ॥
मूलप्रधानं दिवसे खरांशोः स्कन्धप्रधानं शशिनश्च वारे ।
पत्रप्रधानं कुजकोणयोश्च पुष्पप्रधानं बुधवासरे च ॥ ४५ ॥
फलप्रधानं सितजीवयोश्च सारप्रधानं गुरुवासरे च ।
त्वक्पेशलं मन्ददिने विदध्याद् वृन्तप्रधानं* शशिवासरे च ॥४६॥
अर्कोदये सूर्य्यवारे सस्यबीजानि वापयेत् ।
मन्दस्य वारे मध्याह्ने कृष्णधान्यानि वापयेत् ॥ ४७ ॥
भौमस्य वारे तल्लग्ने कोद्रवान् वापयेद् बुधः ।
शुक्रस्य वारे तल्लग्ने वापयेत् कौसुमांस्तरून् ॥ ४८ ॥
अश्विनी क्रमुकेक्षूणामिक्षूणामदितिस्तथा ।
रोहिणी वृक्षजातीनां वृहसाः भरणी तथा ॥ ४९ ॥
हस्तोरगे नागवल्ल्याः पुष्यं पुष्पमहीरुहाम् ।
मघा च तृणपूर्व्वाणामुत्पले चोत्तरत्रयम् ॥ ५० ॥
मुद्गानां त्वाष्ट्रभं श्रेष्ठं सस्यबीजप्रभञ्जनः ।
राधा साङ्कुरसस्यानामनुराधा च शालिषु ॥ ५१ ॥

---

१ विहन्तौ । २ थान्तौनयुतायुतौ । ३ शेनास्वान्नस्यातौ । ४ मधु ।
* बुधवासरे ।

मूलं मलयवल्लयस्तु कृष्णधान्ये च वारुणम् ।
रेवती सर्व्वशालीनां रोपणे मुनिभिर्मताः ॥ ५२ ॥
राधानुराधा मूलश्च हस्तश्चित्रेति पञ्चकम् ।
चन्द्रशुक्रसमायोगे[1] ताम्बूली रोपणे हितम् ॥ ५३ ॥
ब्रह्माद्यास्तारकावाष्टौ हस्तं पुष्याश्विनी तथा ।
चन्द्रशुक्रसमायोगे[2] इक्षुरोपे शुभावहम् ॥ ५४ ॥
उत्तरत्रयमादित्यपितृचित्रार्कयोनयः ।
ब्रह्मविष्णुमृगा मूलं हितमुत्पलरोपणे ॥ ५५ ॥
उत्तरत्रयविश्वान्त्यसर्पमूलानि धीधनैः ।
अङ्कुरीभूतसस्यानां प्रशस्तानि हि रोपणे ॥५६॥
मन्दवारे च विश्वर्क्षे ऽप्यग्रे सूर्य्यसुतस्य च ।
सस्यरक्षाविधानार्थमुटजं कारयेद् बुधः ॥ ५७ ॥
सिंहोदये शनेर्वारे याम्ये नक्षत्रसङ्गते ।
प्रतिमां स्थापयेत् क्षेत्रे पशूनां शस्यविद्विषाम् ॥ ५८ ॥

स्वस्ति किष्कन्धाधिपप्रकटपराक्रमाविष्कारादिङ्मण्डलोपजीवितः श्रीहनुमानाज्ञापयति मूषिकपतङ्गपिपोलिकशरभसारम्भङ्गमृगप्रेतीकीटाद्यैर्नस्थातव्यमाज्ञामतिक्रम्यमानस्य शरीरं निग्रहं समावर्त्तयते तस्य वानरसिंहस्याक्रममानस्य सागरं कक्षारं तरङ्गतो वायुर्जीमूत इव गर्ज्जति हुं फट्नमः ॥

मन्त्रं पत्रे समालिख्य जप्त्वा तन्निखने तदा ।
भुवि कीटप्लवङ्गाखुपिपोल्यादिर्विनश्यति ॥ ५९ ॥
समभ्यज्य महातैलैः सर्प्पत्वन्मयवर्त्तिकाम् ।
नयेत् प्रदीपं वामेन सस्यकीटास्त्यजन्ति तत् ॥ ६० ॥
विलिख्य तुम्बुरो बीजमिष्टिकायां विचक्षणः ।

---

१ यथायोगे। २ समायोगादिक्षुरोपे।

Aho ! Shrutgyanam

स्फुटयेदग्निचक्रेण वारि मार्गेषु तत् खनेत् ।
एतेन सस्यकीटास्तु व्यपयान्ति ततो बहिः ॥ ६१ ॥
आर्द्रं चटकतैलेन निर्म्मोकं जुहुयात्ततः ।
ऊर्ध्वमारुतधूपेन यान्ति सस्य*द्रुहस्ततः ॥ ६२ ॥
श्वभ्रेऽग्निदग्धे सम्पूर्य्य सार्द्धमंकोलचूर्णकैः ।
शुष्कगोमयचूर्णानि तत्र [1]भञ्जनपेशिनाम् ॥ ६३ ॥
सूत्रेण गाढमावेष्ट्य निहितः रोहितोदरे ।
पुष्येण रोपयेद् वृक्षं सन्ततं स्वादुशाकदम् ॥ ६४ ॥
इदमेव विधानं हि वृहसादौ विधीयताम् ।
ततो भवन्ति स्वादूनि मधुराणि फलानि च ॥ ६५ ॥

इति वापविधिः ।

———o———

शतर्क्षविश्वार्य्यमसर्प्परुद्र-
स्त्राद्यर्कपौष्णेषु दिने शुभानाम् ।
लग्ने कुलीरेऽलिनि वा सुरेज्ये
चतुर्थगे लावनकर्म्म कुर्य्यात् ॥ ६६ ॥

द्वितीयं क्षेत्रपालेभ्यो दधि कं बलिमादितः ।
पद्मपत्रगतं पञ्चगव्यञ्च निखनेत्खले ॥ ६७ ॥
विष्णुराधाग्नियम्यानामंशकेषु यथाक्रमम् ।
कर्कटे वाथ कीटे वा विदध्याद्धान्यसङ्ग्रहम् ॥ ६८ ॥
अच्छिद्रास्तिथयः शस्ताः सौम्यवारोदयादयः ।
त्रिषडायगताः पापाः शुभाः केन्द्रत्रिकोणगाः ॥ ६९ ॥
वारः शनेर्वा भानोर्वा प्रतिपद्वा चतुर्दशी ।

---

१ भञ्जकपेशिताम् । * मृगस्तथा ॥

Aho ! Shrutgyanam

स्वातिर्वा रोहिणी वाथ लग्नं जीवस्य वा रवेः ।
योगोऽयमुत्तमर्णाय व्ययाय च सुशोभनः ॥ ७० ॥

इति सङ्ग्रहविधिः ।

गृहीत्वा मेषगे भानौ ग्रीष्मधान्यान्यथोक्षगे ।
मूलादीनां च विक्रेता तुरिये मासि लाभभाक् ॥ ७१ ॥
मिथुनस्थे रसद्रव्यं गृहीत्वा मासपञ्चके ।
व्यतीते बहु विक्रेता त्रिगुणं लाभमाप्नुयात् ॥ ७२ ॥
फलम्पत्रञ्च वासश्च क्रीत्वा कर्कटके रवौ ।
मासषट्केन विक्रेता लभते लाभमुत्तमम् ।
मौक्तिकं रजतं लोहं गाङ्गेयं वापि सिंहगे ।
उपादायाष्टभिर्मासैर्विक्रेता लाभमाप्नुयात् ।
कन्यासमागते सर्व्वमौषधं द्रव्यमाहरेत् ।
लाभाय सप्तमे मासि प्रयुञ्जीत व्यये बुधः ॥ ७३ ॥
तुलाधिरूढे रत्नानि वस्तुजातञ्च तन्नवम् ।
गृहीत्वा मासषट्केन व्ययमानोऽश्नीयात्फलम् ॥ ७४ ॥
वृश्चिकोपगते क्रीत्वा भाण्डं मृद्धर्म्मनिर्म्मितम् ।
नवमे मासि विक्रीय चतुर्गुणमवाप्नुयात् ॥ ७५ ॥
क्रीत्वा चापोपगे शङ्खप्रवालभिदुरादिकम् ।
विक्रीय लाभमाप्नोति त्रिगुणं वा चतुर्गुणम् ॥ ७६ ॥
मकरे रत्नजातानि चर्म्माणि च विचक्षणः ।
क्रीत्वा मासाष्टकेनैव विक्रेता लाभमाप्नुयात् ॥ ७७ ॥
अयोदारुमयं कुम्भे क्रीत्वा तृणमयं तथा ।
मासात्रयेन विक्रेता फलं भूयोऽधिगच्छति ॥ ७८ ॥

Aho ! Shrutgyanam

भौने धान्यानि सर्व्वाणि पत्राण्यश्ममयानि च ।
गृहीत्वा मासषट्केन विक्रेता लभते फलम् ॥ ७९ ॥

इतिवाणिज्यविधिः ।

इत्युपक्षयदशाविधानं नामाष्टविंशोऽध्यायः ।

एकोनत्रिंशोऽध्यायः ।

अतःपरं वीरदशाविधानं
प्रणीयते प्राच्यमतानुकूलम् ।
सर्व्वत्र यात्राविधिरत्र भक्ष्याः
योगाश्चं तत्राहितसिद्धयःस्युः ॥ १ ॥
तारकाःसप्त सप्तैव पादोनाःबहुलादयः ।
क्रमशो विद्दतद्वारं पूर्व्वाद्ये दिक्चतुष्टये ॥ २ ॥
अश्वयुक्पुष्यमुष्णांशुरनुराधेति तारकाः ।
चतस्रःसर्व्वदिक्ष्वेव विद्दतद्वारसम्मताः ॥ ३ ॥
हस्ततिष्याश्वयुङ्मैत्रश्रविष्ठान्त्येन्दुविष्णवः ।
एताःस्युस्तारका वाष्टौ सर्व्वयात्रासु शोभनाः ॥ ४ ॥
त्रीणि पूर्व्वाणि चित्राहियाम्येन्द्रपवनाग्नयः ।
सर्प्पेशपितरःसर्व्वयात्रासु परिवर्ज्जिताः ॥ ५ ॥
पुष्यार्कमित्रतुरगाः प्रागादिषु सुशोभनाः ।
शुक्रज्ञचन्द्रजीवानां वाराःप्रागादिशोभनाः ॥ ६ ॥
विहाय दिक्पतेर्व्वाराः सर्व्वे सर्व्वत्र शोभनाः ।
इति व्याचक्षते केचित् सर्व्वत्र परिघं त्यजेत् ॥ ७ ॥

---

१ तत्रेहित सिद्धयःस्युः ।

नन्दा भद्रा जया पूर्णा पूर्व्वादिगमने शुभाः ।
चरेषु गरजं विष्टिं विहायान्यानि शर्म्मणे ।
स्थिराणि करणान्युच्चैर्नेष्टानि विबुधैःसदा ॥ ८ ॥
कुजवारश्च मध्याह्नः पूर्व्वस्यां दिशि शोभनः ।
याम्ये यामास्तकालश्च वारौ शनिशशाङ्कयोः ॥ ९ ॥
वारुण्यां मध्यरात्राश्च वारौ च गुरुसौम्ययोः ।
उदयश्चोत्तराशायां वारौ शुक्रार्कयोर्हितौ ॥ १० ॥
तत्तदाशां व्रजेत्तत्तद्राशिलग्नेषु बुद्धिमान् ।
योगिनीं पुरतः कृत्वा याति यःस विनश्यति ॥ ११ ॥
द्वितीया च तृतीया च पञ्चमी सप्तमी शुभाः ।
दशम्येकादशी या तु पौर्णमासी त्रयोदशी ॥ १२ ॥
आदश्रम्प्रतिपत्तिथेस्तिथिवशात्पूर्व्वादिकाष्टाष्टकं
क्रान्त्वा दैत्यगुरुःक्रमेण च दिवं भूमिं प्रयातो यदा ।
सर्व्वानर्थप्रसौकरोत्यसुमतां कार्य्योद्यतानां तदा
पृष्ठे दक्षिणतः प्रशस्तफलदो वामे मुखेऽनर्थकृत् ॥ १३ ॥
गोनृयुक्कार्कि कन्याश्च तुलाचापौ तु सर्व्वतः ।
यात्रायां केचिदिच्छन्ति कुम्भःसर्व्वत्र निन्दितः ॥ १४ ॥
मूर्द्धोदयं प्रशंसन्ति सर्व्वयात्रासु पण्डिताः ।
पापास्त्र्ययारिगाः शस्ताः सौम्याः सर्व्वे तथैव च ॥१५॥
नेष्टो लग्नेऽष्टमान्त्यस्थः पूर्णोऽपि शशलाञ्छनः ।
गुरुः षष्ठाष्टमान्त्यस्थो नेष्टः शुक्रोऽपि सप्तमे ।
पञ्चमं द्वादशञ्चैव शुद्धमिच्छन्ति कोविदाः ॥ १६ ॥
लग्नार्थबन्धुधीदारधर्म्मकर्म्मायगाः शुभाः ।
दशमस्थः शनिश्चेष्टः सर्व्वयात्रासु धीधनैः ॥ १७ ॥
याने श्रविष्टा विप्राणां श्रवणं धरणीभुजाम् ।

Aho ! Shrutgyanam

अनुराधा विशामिष्टा शूद्राणां रेवती हिता ॥ १८ ॥
तत्तद्यात्रासु शुभदा नरस्त्रीषण्डतारका[१]ः ।
रोहिण्यां वृषभे लग्ने गोयात्राक्षेमसाधनम् ॥ १९ ॥
अश्विन्यां चापपश्चार्द्धे हयानां गमनं हितम् ।
सोमभे मिथने लग्ने दन्तियात्रा प्रशस्यते ॥ २० ॥
तिरश्चां गमनम्पथ्यं पुष्यभे मिथुनोदये ।
पक्षिणां शुभदा यात्रा कन्यायां हस्ततारके ॥ २१ ॥
जलयात्रा प्रशस्ता स्याद्वारुणे चोत्तरत्रये ।
कन्याकुलीरमीनेषु वारयोर्जीवशुक्रयोः ॥ २२ ॥
स्वयं यातुमशक्यश्चेच्छत्रशय्यादिनिर्गमम् ।
पूर्व्ववत्र रात्रौ सम्पूज्य प्राप्ते काले तु कारयेत् ॥ २३ ॥
छत्रदण्डाक्षमालाग्निकमण्डल्वजिनाम्बरम् ।
विप्राणां ब्रह्मसूत्रञ्च निर्गमे कार्य्यसाधनम् ॥ २४ ॥
जीविकासाधनं सर्व्वं पुस्तकाभरणादिकम् ।
सर्व्वेषां निर्गमे शस्तमभिप्रेतार्थसिद्धये ॥ २५ ॥
श्रद्धायुतः शुचिस्नातः प्रसन्नेन्द्रियमानसः ।
भुक्त्वापूज्य तथापृच्छ्य निर्गच्छेद् गुरुतोषितः ॥२६॥
क्षौरं क्रोधं भयं लोभं मद्यं मांस[२]ञ्च रोदनम् ।
मैथुनं तैलमभ्यङ्गं यात्रायां प्राग्विविवर्ज्जयेत् ॥ २७ ॥
यःकृत्वा मैथुनं रात्रौ प्रभाते प्रस्थितो भवेत् ।
नासौ फलमवाप्नोति कृच्छ्रेण च निवर्त्तते ॥ २८ ॥
गच्छ जीव जय प्रेहि याहि मुञ्च विवर्ज्जय ।
प्रापयोत्तिष्ट निर्गच्छ शब्दद्या गमने शुभाः ॥ २९ ॥
तिष्ट मागा निवर्त्तस्व मूढ मूर्ख जलेति च ।

---

१ नरस्त्रीषण्ढतारका । २ मांशनारोदरम् ॥

यात्रायां विघ्नदाःशब्दा विषादप्रतिपादकाः ॥ ३० ॥
विना बलात्कृतं वृद्धबाल*पीतासिनां क्षुतम् ।
क्षुतं सर्व्वत्र नेष्टं स्याद् गोक्षुतं मरणप्रदम् ॥ ३१ ॥
यात्रायां दक्षिणे रुत्वा पश्चाद्वामे विरौति चेत् ।
श्रेष्टा वाभिमुखे दृष्टा नेष्टा गोली च दक्षिणे ॥३२॥
प्रस्थाने मङ्गलं वाक्यं गर्ज्जनं मेघहस्तिनम् ।
दक्षिणे सफलो वृक्षो वायसस्य च कूजितम् ।
गीतवादितशब्दाश्च सिद्धये श्रुतिरीदृशी ॥ ३३ ॥
आक्रन्दो वञ्जुलादीनां दक्षिणे विरुतं क्षुतम् ।
अनर्थसूचकं वाक्यमीदृशं स्यादसिद्धये ॥ ३४ ॥
वैश्यो विप्रो नृपः कन्या गौर्दन्ती मुरजध्वजौ ।
क्षीराज्यदधिशङ्खाम्बुच्छत्रं भेरि फलं सुरा ॥ ३५ ॥
तण्डुलं हेम रूप्यञ्च सिद्धयेऽभिमुखा अमी ।
सकाष्टः सानलःकारुर्मलिनाम्बरभारहृत् ॥ ३६ ॥
गलस्पटङ्गोगोमायुः गृद्धोलूककपिञ्जलाः ।
महिषाभिषवो मांसे निषेधः पतनं वधः ॥ ३७ ॥
कलशःसर्व्वजातीनां सम्मार्ज्जनविलेपने ।
तैलं कपालं कार्पासं भस्मन्येतान्यसिद्धये ॥ ३८ ॥
भुजङ्गदर्शनं यातुः शत्रुभ्यो भयमावहेत् ।
लवनञ्च गुडं काष्टमभ्यक्तञ्च कषायितम् ।
नग्नं विमुक्तकेशञ्च दृष्ट्वा गेहं पुनर्व्रजेत् ॥ ३९ ॥
भारद्वाजस्य शिखिनो मृगस्य नकुलस्य च ।
दर्शनं सर्व्वतःश्रेष्टमतिश्रेष्टम्प्रदक्षिणम् ॥ ४० ॥
यदुक्तश्चरितादेशो वायसानां शुनामपि ।

---

* पीनासिना । १ कार्पासिकाः ।

Aho ! Shrutgyanam

उन्नेयं तच्च यात्रायामनुरूपवशादिह ॥ ४१ ॥
क्रोशादूर्ध्वं गमनविरुतं निष्फलं प्राहु*राख्र्या
स्तत्रानिष्टे प्रथमशकुने मानयेत् पञ्चपद्वा ।
प्राणायामान्नृपतिरशुभे षोडशैतान् द्वितीये
प्रत्यागच्छेत स्वभवनमधुना यद्यनिष्टं तृतीये ॥ ४२ ॥

इतियात्राविधिः ।

———:o:———

प्राच्यां प्राश्य घृतं गच्छेद्दक्षिणञ्च तिलौदनम् ।
मत्स्यभोजी व्रजेत्पश्चात् सौम्यं पायसभोजनम् ॥ ४३ ॥
अभिन्नभाषाःसतिलाश्च तण्डुलाःगवां दधि कव्यमफेनसम्भवम् ।
फलञ्च मार्गं रुधिरंपटोलकं घृतञ्च सार्पिं पिशितंतिलोदनः ॥४४॥
षष्टिकान्धश्च शाकञ्च प्रियङ्गुञ्चित्रभोजनम् ।
आमलक्यं कुलत्थाञ्च माक्षिकं सर्पिरेव च ॥ ४५ ॥
मूलान्यम्बुनि सक्तुर्वा शालिं निश्राववारि च ।
वीजपूरं तिलान्नञ्च मधु शर्करया युतम् ।
वाराहं पिशितं क्षीरमश्विन्यादिषु भक्षयेत् ॥ ४६ ॥
पूपं दधि तथा लाजां वटकं पायसं तिलम् ।
पिष्टञ्चैव तु वाराणामशनाय प्रकीर्त्तितम् ॥ ४७ ॥
नन्दायां सान्नशाकञ्च भद्रायां गव्यपायसम् ।
पूपं जयायां सक्तूनां रिक्तायाञ्च गुलोदकम् ।
पूर्णायां [1]कन्दकुल्माषं भुक्त्वा गच्छन् सुखं व्रजेत् ॥ ४८ ॥
अर्कस्य पत्रं मधु तण्डुलोदकं घृतं यवागुश्च भाविष्यभोजनम् ।
सौवर्ण्यमम्भो मधु बीजपूरकं तोयञ्च गोमूत्रमथो यवाश्च ॥ ४९ ॥

---

* रेके । [1] कन्दकुष्माषम्

सपायसश्चैव गुडं सितोत्थं मुद्‌गान्नकश्च प्रथमाद्यनुत्क्रमात् ।
अभ्यक्ष्यसस्पर्शमलभ्यकानां स्मृतिश्च सिद्धिं गमने ददाति ॥५०॥

इति यात्राभक्ष्याविधिः ।

नृपाणां गमनं योगैर्भगनैश्च द्विजन्मनाम् ।
शकुनैश्चरचोराणां शेषाणां क्षणवीर्य्यकैः ॥ ५१ ॥
यथावात्तिथिनक्षत्रवारराशिग्रहोदयाः ।
गमने दुर्लभास्तस्माद्योगान् वक्ष्याम्यहं लघु ॥ ५२॥
होरा कुटुम्बसहजस्थानेषु क्रमशो गताः ।
शुक्रगुर्विन्दवः शत्रुविनाशायार्थसिद्धये ॥ ५३ ॥
सपापके भ्रातरि सेन्दुसप्तमे सितज्ञयुक्ते हिबुके च निर्गतः ।
सजीवलग्ने विनिहन्ति शत्रून् शुभोदये नात्मगृहं प्रतीयात् ॥ ५४॥
स्वलाभगेषु शेषेषु जीवे लग्नगते गतः ।
अर्थलाभमरेनाशमारोग्यं लभते नरः ॥ ५५ ॥
अनष्टमगते चन्द्रे षष्टे चण्डांशुसंश्रिते ।
बृहस्पत्युदये यायाच्छत्रुजिल्लभते धनम् ॥ ५६ ॥
गुरुशुक्रार्कसौम्येषु लग्नाद्येषु चतुर्ष्वपि ।
कुजमन्दयुते षष्टे चन्द्रे च दशमं गते ।
यात्रा सुफलदा नित्यं शत्रुनाशकरी सदा ॥ ५७ ॥
शुक्रवार्ज्जितजामित्रे लग्ने गुरुयुते गतः ।
त्रिषडेकादशस्थेषु मन्दारार्केष्वभिष्टदा ॥ ५८ ॥
लग्नयुक्ते गुरौ यायाज्जामित्रे शशिनि स्थिते ।
शुभेषु च धनस्थेषु धनवाहादिलाभभाक् ॥ ५९ ॥
होरा शुभप्रदा याते सर्व्वैःसंसेविताःशुभैः ।
अशुभारुढदृश्चिक्या निधने चन्द्रवार्ज्जिताः ॥ ६० ॥

Aho ! Shrutgyanam

होरा गुरुमती लाभे पापसंघसमाश्रिते ।
इन्द्वारङ्गसमायुक्ते यातुःसर्व्वार्थसिद्धिदा ॥ ६१ ॥
लग्नार्थगेषु सौम्येषु दशमे रविसंयुते ।
गमनं विजयारोग्यमर्थसिद्धिं प्रदास्यति ॥ ६२ ॥
त्रिकोणकेन्द्राश्रितसर्व्वसौम्यास्तृतीयषष्ठायगताश्च पापाः ।
फलन्ति यातुः शुभमिन्दुरेको लग्नाच्चतुर्थङ्गतवांश्च तद्वत् ॥६३॥
यदा कलत्रगश्चेन्दुः शुक्रज्ञौ गृहमागतौ ।
गन्तव्यमपि चारेण तदा सर्व्वार्थसिद्धये ॥ ६४ ॥
पञ्चम्यां शुक्लपक्षस्य स्वातौ गुरुदिनोदये ।
क्रयाविक्रययात्रायां योगोऽयं परमो मतः ॥ ६५ ॥
मित्रर्क्षेण प्रयातस्य शक्रे पर्य्युषितस्य च
पुनर्मूले प्रयातस्य कार्य्यसिद्धिर्भविष्यति ॥ ६६ ॥
हस्तेन गत्वा प्रथममपर्य्युष्य द्वये ततः ।
पुनश्चतुर्थे सम्प्राप्तः शत्रुवर्गं स बाधयेत् ॥ ६७ ॥
स्थित्वैकं दिवसं तिष्ये रेवत्यां वाथ वासवे ।
सीम्नि भूयः प्रविष्टोऽन्तर्बहुलाभमवाप्नुयात् ॥ ६८ ॥

इति यात्रायोगः ।

गुरावत्युच्चगे लग्ने लाभे शुक्रसमागते ।
शनेर्द्दकाणे संदृष्टो राजावश्यं वशी भवेत् ॥ ६९ ॥
चरे वर्गोत्तमे भागे तत्स्थयोः सोमजीवयोः ।
सदृष्टश्चन्द्रहोरायां राजावश्यं वशी भवेत् ॥ ७० ॥
भोमवारे बुधक्षेत्रे द्दकाणे वसुधाभुजः ।
मन्दे व्ययगते युद्धं कुर्व्वाणो लभते जयम् ॥ ७१ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शत्रोरष्टमगे चन्द्रे विषनाडीमुपागते ।
मन्दे शत्रौ च षष्ठस्थे विजयं लभते युधि ॥ ७२ ॥
अतिनीचगते मन्दे षष्ठस्थे लेयलग्नतः ।
चन्द्रे वर्गोत्तमांशस्थे दृष्टः शत्रुवशी भवेत् ॥ ७३ ॥
इन्दावत्युच्चगे सौम्ये स्वक्षेत्रांशगतेऽपि वा ।
जैवे दृकाणे संदृष्टो द्विजोऽवश्यं वशी भवेत् ॥ ७४ ॥
शुक्रे निजत्रिकोणस्थे तुलांशकगते बुधे ।
मन्दे परमनीचस्थे दृष्टो वैश्यो वशी भवेत् ॥ ७५ ॥
शनौ परमनीचस्थे बुधस्य त्रिंशदंशके ।
होराया तरणेर्दृष्टः शूद्रोऽवश्यवंशी भवेत् ॥ ७६ ॥
मषायने वृषनृयुग्मकुलीरसिंह कन्यातुलाजजलवृश्चिकवीथिकायाम् ।
कुम्भालिचापमकरा मिथुनायने स्युरारूढवर्त्मभरतःसमभातपत्रम् ॥
आरुह्योदयराशिं यश्छत्रस्थं वीक्षते नरः ।
स तस्य वसतां याति दारैरपि धनैरपि ॥ ७८ ॥
विपरीतविधानेन वैपरीत्यं विनिर्दिशेत् ।
दृष्टे तु जीवशुक्राभ्यां न दोषस्तत्र जायते ॥ ७९ ॥
स्वयन्तूदयमारूढो वेश्यामस्तमये स्थिताम् ।
वीक्षते गुरुणा दृष्टो वशगा तस्य सा भवेत् ॥ ८० ॥
गुरौ लाभगते मन्दे षष्ठस्थे भार्गवांशके ।
उत्तमर्णमवाप्नोति याचमानोऽपि दुःस्थितम् ॥ ८१ ॥
दातुर्व्ययगते जीवे लग्नारूढे च भार्गवे ।
[1]स्पृहयन्निन्दुहोरायामधमर्णमवाप्नुयात् ॥ ८२ ॥
वह्न्यात्मा वदने न्यस्तो द्राङ्कारो रसनान्दहन् ।
मन्त्रसिद्धिं हरेत् पुंसो वादे च प्रतिभां तथा ॥ ८३ ॥

---

१ स्पृहायन्तीन्दुहोरायाम् ।

Aho ! Shrutgyanam

जीवेऽप्युच्चगते स्वस्य दशमस्थे विवादिनः ।
त्रिकोणस्थे शनौ मीनलग्ने वादे जयी भवेत् ॥ ८४ ॥
सहादेवीदुर्वामधुपमुषली विष्णुदयिता ।
सदा भद्रा लक्ष्मी शतमसलतामाञ्जलिकरी ।
य एतान् भ्रातः स्वे शिरसि कलयेच्छ्रीपारिकरान् ।
यतो जातस्येदं भूवनमखिलं तिष्ठति वशे ॥ ८५ ॥

इत्यभीष्टसिद्धिविधिः ॥

——:o:——

इति वीरदशाविधानं नाम एकोनत्रिंशोऽध्याय ः ।

त्रिंशोऽध्यायः ।

———ooo———

ब्रवीमि संकीर्णदशाविधान
मतःपरं तत्र च सङ्गृहीतम् ।
दीक्षाप्रतिष्ठा पितृकर्म्मभूत-
विषामयानां प्रशमाः क्रमेण ॥ १ ॥
उत्तराणां त्रयं मूलमदितिर्वारुणाश्विनौ ।
ब्रह्मानुराधा पुंसा च पुंसां दीक्षाविधौ हिताः ॥ २ ॥
चित्रा स्वातिश्च मैत्रश्च प्रव्रज्यायां स्त्रियो हितम् ।
तत्र दीक्षासु सर्व्वेषां तत्तद्वारादयः शुभाः ॥ ३ ॥
कन्यातौलिनृयुग्मवर्ज्याः शेषाः स्युरुदयाःशुभाः ।
अच्छिद्रास्तिथयःशस्ता मन्दांशःसर्व्वसिद्धिदः ॥ ४ ॥
केन्द्रत्रिकोणेषु शुभाःप्रशस्ताः
पापास्त्रिलाभारिगताःशुभाय ।

Aho ! Shrutgyanam

ग्रहानभिष्टा मरणप्रयाता
व्रतक्षयायास्तगतश्च शुक्रः ॥ ५ ॥
यदि भावाश्रितश्चन्द्रो लग्नस्थःशुभदःसदा ।
चतुर्थे दशमे जीवस्तपस्सिद्धिं प्रयच्छति ॥ ६ ॥
धर्म्मस्थानगताःपापा न चिराद् व्रतभङ्गदाः ।
प्रव्रज्याभिहिता योगाः प्रव्रज्यायां सुशोभनाः ॥ ७ ॥
पञ्चमस्थश्च माहेयः चन्द्रश्च नवमं गतः ।
मन्दश्च सहजस्थाने व्रतसिद्धिं प्रयच्छति ॥ ८ ॥

इतिप्रव्रज्याविधिः ।

उत्तराणां त्रयं पुष्यमनुराधा च रोहिणी ।
वारुणं वसु मित्रेति नवव्रतविमुक्तये ॥ ९ ॥
तौलिकन्यानृयुग्मीनाः शुभवारांशकादयः ।
त्रिकोणगौ सितेन्दू च व्रतमुक्तौ शुभावहाः ॥ १० ॥

इतिप्रव्रज्यामुक्तविधिः ।

उत्तरायणगे भानौ मासि कुम्भविवर्जिते ।
यजमानानुकूलर्क्षे बलयुक्ते निशाकरे ॥ ११ ॥
अस्तशैशववार्द्धक्यमुक्तयोर्जीवशुक्रयोः ।
ब्रह्मादितीन्दुतिष्यान्तहस्ताश्वात्युत्तरत्रये ॥ १२ ॥
देवप्रतिष्ठा कर्त्तव्या सौम्यवारोदयादिषु ।
अयुग्मास्तिथयःशस्ताः युग्मासु दशमी तथा ॥ १३ ॥
स्थिरक्षेत्रगतश्चन्द्रः स्थिरराश्युदयःशुभः ।
उच्चस्थानगतश्चन्द्रो यजमानःशुभावहः ॥ १४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

मित्रस्थानगतश्चन्द्रो मित्रसौम्यधनावहः ।
नीचराशिगतःसोऽयं दारिद्र्यं सम्प्रयच्छति ॥ १५ ॥
शत्रुक्षेत्रगतश्चन्द्रः शत्रुवृद्धिं समावहेत् ।
अर्केन्दुराहुसौरास्तु स्थापने लग्नसंस्थिताः ।
भ्रातृस्थानगताःसर्व्वे ग्रहास्तुष्टिविवृद्धिदाः ॥ १६ ॥
बन्धुस्थानगताःक्रूराः कुर्व्वन्ति सुखनाशनम् ।
तदेव वर्द्धयिष्यन्ति सौम्याश्चन्द्रविवर्जिताः ॥ १७ ॥
सुतस्थानगतास्तीक्ष्णाः पुत्रमृत्युप्रदाःसदा ।
तत्र स्थिताःशुभाश्चन्द्रवर्ज्याः सर्व्वे सुखप्रदाः ॥ १८ ॥
नाशयन्ति रिपुं क्रूराः शत्रुस्थानसमाश्रिताः ।
जीवस्तत्र स्थितःकुर्य्याच्छत्रुवृद्धिं विशेषतः ॥ १९ ॥
कुरुतःस्थानविभ्रंशं तत्रस्थौ भृगुचन्द्रजौ ।
कुर्य्याज्जामित्रगो भानुर्यजमानविनाशनम् ॥ २० ॥
सौरःसौख्यविनाशाय बुधःपुत्रविनाशकृत् ॥
कुजस्त्वग्निभयं कुर्य्यात् पिशाचव्यसनं भृगुः ।
जीवेन्दू सप्तमस्थौ तु कुर्य्यास्तां धनवर्द्धनम् ॥ २१ ॥
अष्टमस्था ग्रहाःसर्व्वे कुर्व्वन्ति कुलनाशनम् ।
धर्म्मस्थानगताःसौम्याः कुर्य्युर्धर्म्मविवर्द्धनम् ॥ २२ ॥
पापाश्चन्द्रयुताःकुर्य्युः सौख्यधर्म्मधनक्षयम् ।
नभःस्थानगताःक्रूराः कुर्व्वन्ति स्थाननाशनम् ॥ २३ ॥
चन्द्रयुक्ताःसदा सौम्याः पुत्रवित्तसुखप्रदाः ।
ग्रहाःसर्व्वेऽपि लाभस्थाः कुर्य्युरारोग्यसम्पदम् ॥ २४ ॥
द्वादशस्थानगाःपापाः शुक्रचन्द्रसमायुताः ।
दारिद्र्यं सम्प्रयच्छन्ति यजमानाय नित्यशः ।
तत्रस्थौ वित्तवृद्धिश्च कुर्य्यास्तां गुरुचन्द्रजौ ॥ २५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

ज्येष्ठोत्तरत्रयकरान्त्यचतुर्मुखाश्वि-
कृष्णान्विते शुभतिथिग्रहवारवर्गे ।
तिर्य्यङ्मुखोदययुतेष्वथ सम्मुहुर्त्ते-
षून्मीलनं नयनयोः प्रतिमासि कुर्य्यात् ॥ २६ ॥
अनेनैव विधानेन गर्भनाशश्च बुद्धिमान् ।
ऊष्णीषस्थापनश्चैव वर्णलेपादिकां क्रियाम् ॥ २७ ॥

इतिदेवप्रतिष्ठापनविधिः ।

——oo——

विप्राणां हितमाधत्ते श्राद्धमेकादशेऽहनि ।
नृपाणां षोडशे वच्मि विशां विंशे दिने भवेत् ॥
शूद्राणां मासि पूर्णे तु पितृकर्म्म विधीयते ॥ २८ ॥
अपराह्नःशुभःपापदिनस्य च चरोदयः ।
श्राद्धस्य नूतनस्यैव विधिरेष विनिश्चितः ॥ २९ ॥
पितरो मित्रयाम्येन्दुहस्ताश्विश्रवणादयः ।
श्रविष्ठापुष्यचित्राश्च प्रशस्ताः पितृकर्म्मणि ॥ ३० ॥
विशाखा रोहिणी भाग्यपौष्णादित्योत्तरत्रयम् ।
वर्ज्जनीया नवश्राद्धे विधातुर्मरणप्रदा ॥ ३१ ॥
विष्कुम्भाद्याःकुयोगाश्च विष्टिश्च गुलिकाःशुभाः ।
प्रथमैकादशी षष्ठी पौर्णमासी चतुर्द्दशी ।
तिथिस्त्रयोदशी चैव श्राद्धकर्म्मणि वर्ज्जिता ॥ ३२ ॥
श्राद्धे मन्दार्कयोःपूज्याः द्रेष्काणदिवसादयः ।
क्षीणेन्दोर्भूसुतस्यापि कैश्चिद्वारादिरिष्यते ॥ ३३ ॥
पापान्तर्गतसौम्यस्य शोभनं दिवसादिकम् ।
कुलीरमकराजानामुदयाःश्राद्धसम्मताः ॥ ३४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

जन्मराश्युदयो नेष्टः पञ्चमःसप्तमोऽपि च ॥
ऊर्ध्ववक्त्रोदयो वर्ज्यो दृष्टो युक्तोऽपि सद्ग्रहैः ॥ ३५ ॥
विपदप्रत्ययोरेव वधे वैनाशिकेऽपि च ।
चन्द्राष्टमे च कर्त्तव्यं द्वादशाष्टमहोदये ॥ ३६ ॥
कर्तुस्त्रीजन्मनक्षत्रं दाराणां स्वसुतस्य च ।
सप्तविंशादिनं कर्त्तुः श्राद्धकर्म्मणि वर्जितम् ॥ ३७ ॥
केन्द्रत्रिकोणगाःपापाः सौख्यमित्रधनावहाः ।
व्ययारिव्ययरन्ध्रस्थाः ग्रहाःसौम्याः शुभप्रदाः ॥ ३८ ॥
शुक्रस्य दिवसांशाद्यास्तस्यं केन्द्रस्तिथिःक्षणम् ।
कर्तुर्मृत्युं करोत्येव नवश्राद्धे विचार्यते ॥ ३९ ॥
एवमेवाष्टकश्राद्धं मासश्राद्धञ्च पैत्रिकम् ।
चन्द्रसूर्य्योपरागे वा सङ्क्रमेऽप्ययनेऽथवा ॥
व्यतीपातेऽप्यमावास्यां सदा श्राद्धं विधीयते ॥ ४० ॥
त्रयोदश्यामवावस्यां गृही श्राद्धं करोति चेत् ।
युवैव मृत्युमाप्नोति ज्येष्ठपुत्रो विनश्यति ॥ ४१ ॥
मासि प्रोष्ठपदे माघे सर्व्वेषां कृष्णपक्षतः ।
कर्त्तव्यमष्टकश्राद्धं गृहस्थानां विशेषतः ॥ ४२ ॥

इतिश्राद्धविधिः ।

———:o:———

हर्षेच्छाभयशोकादेर्विरुद्धा शुचिशोभनात् ।
गुरुदेवादिकोपाच्च पञ्चोन्मादा भवन्त्यमी ॥ ४३ ॥
आगन्तुः सन्निपातश्च त्रिदोष इति ते स्मृताः ।
हर्षणस्फोटनाक्रन्दगीतसङ्गीतरोदनम् ॥ ४४ ॥

---

१ केन्द्रस्तितीक्ष्णम् ।

Aho ! Shrutgyanam

आस्थानमङ्गविक्षेपस्ताम्रा मृदुकृशा तनुः ।
जीर्णे बलञ्च बागबह्वी वातोन्मादस्य लक्षणम् ॥
तच्चिकित्सायनिष्ठायां विहिताशकुनध्रुवैः ॥ ४५ ॥
वरी विदारी खर्ज्जूरी कशेरुःशर्करा मधुः ।
कृष्णसर्प्पिश्च मधुकं बातोन्मादे पिबेदिदम् ॥ ४६ ॥
संरम्भामर्षवैदग्ध्यमभिद्रवणतर्ज्जनम् ।
छाया शीता न तोयेच्छा रोषःपीतोष्णदेहता ॥ ४७ ॥
नारो विविक्तप्रियता निद्रारोचौ मनाग्वच ।
लालाच्छर्दिर्बलं भुक्ते नखादिषु च शुक्लताम् ॥
एताःपित्तकफोन्मादे चेष्टास्तत्र चिकित्सितम् ।
नागे रुद्रस्य नक्षत्रे मन्दवारे च शस्यते ॥ ४८ ॥
चक्रे तैलं सधूस्तूरमूलचूर्णं भुवि न्यसेत् ।
सप्तरात्रात्तदुद्धृत्य लिम्पेदुन्मादशान्तये ॥ ४९ ॥
सम्मिश्रलक्षणं वर्ज्यमुन्मादःसान्निपातिकः ।
आगन्तुर्बहुभेदःस्या दष्टादशमहाग्रही ॥ ५० ॥
केशरं कर्णिकारस्य कपिलागोमयाम्बु च ।
स्तन्येन पाननस्याभ्यामुन्मादं हन्ति तत्पृथक् ॥ ५१ ॥
मधूकयष्टिमृद्वीका कृष्णखर्ज्जूरचन्दनम् ।
गोजीजलाभ्रस्तन्येक्षुरसाज्यमधुशर्कराः ॥ ५२ ॥
एतैर्नस्यक्रिया कार्य्या नूतने पित्तविभ्रमे ।
मातृघाती भूततरुर्ग्रहघ्नःसर्व्वथा पृथक् ॥ ५३ ॥
शूनाक्षफलकस्थेन तिलैर्भुक्तैःशकृन्मयैः ।
कृतं तैलमपस्मारं नाशयेन्नस्यकर्म्मणा ॥ ५४ ॥
पाठापथ्यावचाशीग्रु सिन्धुव्योसैःपृथक् फलैः ।
अजाक्षीरादके पक्वं सर्पिः सर्व्वग्रहापहम् ॥ ५५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

वृश्चिककालीकणाकुष्टलवणानि च भार्गिका ।
अपस्मारविनाशाय तच्चूर्णं नसि योजयेत् ॥ ५६ ॥
सर्व्वोन्मादविनाशेषु सर्व्वग्रहविधिष्वपि ।
रुद्रभश्च चतुष्पादो मन्दाभं वृश्चिकोदयः ॥ ५७ ॥
मले द्वयं क्रमाद्विष्णु विपूर्व्वं वह्निसुन्दरी ।
कर्णे जपाद्ग्रहं हन्याद्भूतेशध्यानतोऽथवा ॥ ५८ ॥
हृदयश्च चतुर्थ्यन्तो भगवान् रुद्र इत्यपि ।
शत्रुन्ते महिरप्यस्माद्भैरवो देव इत्यपि ।
समस्तोऽयं चतुर्थ्यन्ते पदान्येतानि योजयेत् ॥ ५९ ॥
ग्रहान् नर्त्तय मोटय वल्गय क्रीडय उग्रचण्डहुंफट्ठठ ।
एषभूतपिशाचादौ सर्व्वकर्म्मकरो मनुः ।
अस्य स्मरणमात्रेण प्रलीयन्ते ग्रहादयः ॥ ६० ॥

इतिग्रहध्वंसविधिः ।

कृत्तिकाभरणीस्वातिर्मूलं पूर्व्वत्रयाश्विनी ।
विशाखार्द्रामघाश्लेषा चित्रा श्रवणरोहिणी ॥ ६१ ॥
तारास्तास्सर्पदष्टस्य दुष्टा मन्दकुजौ तथा ।
पञ्चमी चाष्टमी षष्ठी रिक्ता दष्टस्य निन्दिता ॥ ६२ ॥
तस्यातिनिन्दिता कृष्णे पञ्चमी च चतुर्दशी ।
सन्ध्याचतुष्टयं दुष्टं दग्धयोगाश्च राशयः ॥ ६३ ॥
देवालये शून्यगृहे वल्मीकोद्यानकोटरे ।
रथ्यां सन्धौ चैत्यतरौ श्मशाने सिन्धुसङ्गमे ॥ ६४ ॥
द्वीपे चतुष्पथे सौधे गहने वेत्रपद्मयोः ।
पर्व्वताग्रे बिलद्वारे जीर्णकूपाश्मकूटयोः ॥ ६५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

शीग्रुश्लेष्मातकाक्षेषु जम्बूदुम्बरवेणुषु ।
वटेषु जीर्णप्राकारे दंशःसर्प्पस्य निन्दितः ॥ ६६ ॥
इन्द्रियाण्योष्ठहृत्वकक्षस्तनभ्रूमध्यकुक्षयः ।
तालु शङ्खो गलं मूर्द्धा चुबुकं नाभिमस्तकम् ॥ ६७ ॥
द्वौ पादमध्यं स्कन्धश्च सर्पदंशस्तु निन्दितः ।
पुष्पादिहस्तःशुभवाक् धीरःशुल्काम्बरोऽमलः ॥ ६८ ॥
लिङ्गवर्णसमानश्च हृष्टो दूतःशुभो मतः ।
अपद्वारगतःसस्त्री प्रमादीभू*गतेक्षणः ॥ ६९ ॥
विवर्णवासाः पाशादिहस्तो गद्गदतूर्णवाक् ।
शुष्ककाष्ठाश्रितःखिन्नस्तैलोक्तस्कन्धरांशुकः ॥ ७० ॥
आर्द्रवासाःकृष्णरक्तपुष्पो मुक्ताशिरोरुहः ।
कुचमर्द्दी नखच्छेदी गुदस्पृक् पादलेखकः ॥ ७१ ॥
केशलुञ्छी तृणादिच्छेद्रदुर्व्यङ्गःखरादिशः ।
सद्वितीयोरुदं मुण्डी दुष्टा दूताःस्युरीदृशाः ॥ ७२ ॥
दिशादिषु स्थितो दूतो वन्यादीन् सूचयेदहीन् ।
दूतःस्थितश्चेद्वामेऽङ्घ्रौ दक्षिणे वा द्वयोरतः ॥ ७३ ॥
इयन्यावावेहद् दिग्वा यदि दूतस्य वात्मनः ।
अह्यान् वाह्यान् पृथक् सर्प्पान् विद्यात् स्त्रीपुंनपुंसकान् ७४
दूतःस्पृशति यद्गात्रं तस्मिन् दंशमुदाहरेत् ।
नभो गीताद्विषं वादेन्नाविषंवेति निर्द्दिशेत् ॥ ७५ ॥
दूतकाले यतो जीवः पर्व्वे दंशस्ततोऽन्यतः ।
अग्रे दूतस्य वामाङ्घ्री शुभोऽन्यस्थादृशोऽन्यथा ॥ ७६ ॥
दूताङ्घ्रिचलनं दुष्टं तत्स्थितिर्निश्चला शुभा ।
जीवपार्श्वे शुभो दूतो दुष्टोऽन्यत्र समागतः ॥ ७७ ॥

---

* ततेच्चणः ।

Aho ! Shrutgyanam

दूतस्य वाक्यं दष्टाख्या पूर्व्वमाहुर्विनिन्दितम् ।
त्रिभक्तैस्तस्यं वाक्यार्णैर्विषणिर्विषकालता ॥ ७८ ॥
आद्यैःस्वरैश्चकाद्यैश्च वर्गैर्भिन्नालिपिर्विधा ।
स्वरो जीवस्तनुर्वर्ग इतिज्ञेया च मात्रका ॥ ७९ ॥
वाताग्नीन्द्रजलात्मनो वर्गेष्वर्णाश्चतुष्टयाः ।
नपुंसकाःपञ्चमाःस्युः स्वराःशक्राम्बुयोनयः ॥ ८० ॥
दुष्टो दूतस्य वाक्यादौ वाताग्निमध्यमो हरिः ।
प्रशस्ता वारुणा वर्णा श्रुतिदुष्टा नपुसंकाः ॥ ८१ ॥
जीवकाव्योदयौ श्रेष्ठौ स्वक्षेत्रेषु तदोदयौ ।
शुक्रगुर्वोर्विधोर्दृष्टिर्दूतकाले शुभा मता ।
मुक्ता मन्दग्रहाः सर्व्वे गच्छन्तोऽस्तं न शोभनाः ॥ ८२ ॥
ग्रहामयचिकित्सानां प्रश्नेष्वपि विचक्षणः ।
परीक्ष्य विधिनानेन सिद्धौषध्यां प्रवर्त्तते ॥ ८३ ॥
धातोर्धात्वन्तरापत्तिर्विषवेग इतिस्मृतः ।
दंशे स्थित्वा त्रिपञ्चाशन्मात्राः संवर्द्धते विषम् ॥ ८४ ॥
विषं दंशाल्ललाटं यात्यतो नेत्रे ततो मुखम् ।
आस्याच्चधमनीम्नाभ्यो धातून् व्याप्नोति हि क्रमात् ॥८५॥
वेगो रोमाञ्चमाद्यो रचयति विषजस्वेदवक्त्रोपशोषौ
तस्योर्ध्वस्तत्परौद्वौ वपुषि जनयतो वर्णभेदप्रवेपौ ।
यो वेगःपञ्चमोऽसौ नयनविवसतां कण्ठभङ्गञ्च हि क्कां
षष्ठो निश्वासमोहौ वितरति च मृतिं सप्तमो दष्टकस्य ॥८६॥
यस्याङ्गानां जलत्वं श्वयथुरवयवोद्वेगदाहौ प्रलाभो
विड्भेदःकेशलुच्छः सुकरमरुणतापाङ्गयोर्भ्रान्तिरक्ष्णोः ।
कृष्णाश्रक्कम्पशूलौ हृदि च विघटनादन्तदन्तच्छदानां

१ वाक्यर्णे ।

Aho ! Shrutgyanam

श्यावश्च श्लेष्मपित्तो वमनमश्रुगलं रोमकूपादिषु स्यात्॥८७॥
हक्फुक्का विहृतं सभायुवदनं भ्रान्तिःशनैः षष्ठतो
वर्गाद्यन्ततले च दंशमुदकोत्थेकान्नरोमोद्गमः ।
कीलालोत्प्लवनन्तताडनपदं[2] यष्टा न शस्त्राक्षता
द्रक्ताविष्करणश्च यस्य नियतं नष्टःस मृत्युं गतः ॥ ८८ ॥
एतान्येवं सम्यगालोच्य सर्व्वा-
नुच्चैःसाध्यं दष्टमासाद्य विद्वान् ।
अव्यग्रात्मा तच्चिकित्साः विदध्या
द्ध्यानैर्मन्त्रैरौषधैश्चात्मसिद्धैः* ॥ ८९ ॥
भृगौ दण्डिनि जीवाख्ये साध्यं हृत्पद्मकोशगे ।
तन्नामार्णावृते चन्द्रं[3] च्छन्नेः†भूसद्मनि न्यसेत् ॥ ९० ॥
कण्ठे सुधाढ्यविन्दुं भ्रूमध्ये विन्दुश्च चिन्तयेत् ।
कार्य्यादौ जीवरक्षेयं बन्धखण्डेति भाषणात् ।
अथवा चिन्तयित्वैव मन्त्री मन्त्रमिमं जपेत् ॥ ९१ ॥
ओं नमो भगवते नीलकण्ठाय ठठ ॥
साज्यः शक्रदृशः पेयाः सर्प्पिर्वा जीवरक्षणम् ।
अर्ज्जयित्वा करञ्जार्द्रत्वचं दष्टपरीक्षणे ॥
फणी स्यान्मधुरो तिक्तो राजिलो मण्डली कटौ ॥ ९२ ॥
पुरःपादो गतस्तावत् पारःपदचतुष्टयम् ।
अलापुतैलसंयुक्तो मृतसञ्जीवनं वरम् ॥ ९३ ॥
कररागबीजनिषपुङ्खिताथवा वरकन्यका हरितमञ्जरी तथा ॥
पृथगेव मूत्रकृत्पाननस्यतो विषमुद्धरन्ति किमु योगसम्भवात्॥९४
देवदालिदलं मूलं बीजकोषश्च पेषयेत्
सेवनाभ्यङ्गपानादि योगः फणिविषापहः ॥ ९५ ॥

---

१ पश्यतां ॥ २ यष्टानशस्त्रक्षता ॥ ३ छन्नेदूधू सद्म ॥ * सिद्धौ-सत्यां ॥ † भूसद्मविन्यसेत् ॥

Aho ! Shrutgyanam

मरिचं वा कुलं बीजं गुञ्जाश्च नरवारिणा ।
नस्यपाने प्रकुर्व्वीत त्यक्तसंज्ञेऽपि दष्टके ॥ ९६ ॥
मातृसंघातहस्तेन रामठं पास्नवान्वितम् ।
नस्याञ्जादिना रक्षेदष्टमप्यष्टभोगिभिः ॥ ९७ ॥
मूत्रेण वा कुलं बीजं नस्यपानादिना जयेत् ।
विषमेतत् फणीन्द्राणां वृष्टिदावानलं तथा ॥ ९८ ॥
विंशतिकृत्वःशकृदपि दिनकरदुग्धेन भावितं (तच्च) ॥
विश्वं खादेदाश्म स्वस्थावेशश्च कारयति ॥ ९९ ॥
श्वेतार्कमूलं गिरिकर्णिकश्च भृङ्गप्रवालं लवणश्च कुष्ठम् ।
नस्याञ्जनाभ्यञ्जपानयोगादुत्तिष्ठते वा सुखिनापि दष्टः१००
तरुणतरकतकफलरसबहुभावितमेलखण्डपरिमृदितम् ।
सलिलं सतैलमखिलं हरति विषं नासिकानिहितम् ॥१०१॥

इति दर्व्वीकरचिकित्सा ।

कुमारीं कारवल्लीश्च कतकारीं शीग्रुणा सह ।
भृङ्गराजं नृमूत्रेण लिम्पेन्मण्डलिग्लानये ॥ १०२ ॥
गोक्षीरेण तु सम्पिष्टवज्रवल्ली मरुन्धृतः ।
तेनैव पाययेत् सर्व्वं विषं मण्डलिनां जयेत् ॥ १०३ ॥
स्नुङ्मूलमाजदुग्धेन जलेनार्कशिफाथवा ।
पानादपहरेत्सद्यः सर्व्वमण्डलिनां विषम् ॥ १०४ ॥
कृष्णवल्लीदलं वाथ तुम्बिकां वा सपम्फनम् ।
धान्याम्लरसलेपेन रक्तमण्मलिनां हरेत् ॥ १०५ ॥
अन्यत्तदलकल्को वा माहिषच्छकनो ऽथवा ।

---

१ तक्कारी ॥

विषशोफौ कटूष्णौ तौ घ्नान्त्यपोन्तलको ऽपि वा ॥ १०६ ॥

इति मण्डलिचिकित्सा ॥

———:o:———

अटवीं कारवल्लीश्च कन्दक्षीरेण पाययेत् ।
शारिबायास्तथा मूत्रैर्नस्यं वा हन्ति राजिलम् ॥ १०७ ॥
वचा चिर्भिट वर्षाभू मूलानि सह कञ्जिकैः ।
पिवेद्राजिलजं सर्व्वं विषं नश्यति निश्चितम् ॥ १०८ ॥
तैलेन गृहधूमस्य नस्यं राजिलदंशिनाम् ।
तदहर्वत्सविरं मूत्र नस्यं तत्र फणोन्यपि ॥ १०९ ॥
मागधक्षौद्रसिन्धूत्थान् गोशकृद्वारिणा सह ।
पाययेद्राजिलैर्दष्टं क्षणं निर्व्विषतां व्रजेत् ॥ ११० ॥
परिशुष्कन्तु सम्पिष्टय नरगूथं तदम्भसा ।
पाययेदुद्गतौ व्यालविषसंहरणाय तु ॥ १११ ॥

इति राजिलचिकित्सा ॥

———:o:———

सर्व्वाहिविषनाशाय टङ्कनस्य रजोऽम्भसा ।
नस्य लेपन पानाद्यैरुपदेशोऽयमुत्तमः ॥ ११२ ॥
पुनर्नवरसेनैव रामठं कीर्त्तितं बुधः ।
नस्यं कुर्व्वीत सर्व्वेष्वप्येकं वैकुण्ठिकारसम् ॥ ११३ ॥
चम्पकस्य रसैर्नस्यं सर्व्वसर्प्पविषापहम् ।
बहुमूलस्य सौवीरैर्नस्यपानाञ्जनादयः ॥ ११४ ॥
अर्कपत्रेण लवणं नृमूत्रेण च पेषयेत् ।
लिम्पेत् सर्व्वविषं जयमिति प्रोक्तं पुरातनैः ॥ ११५ ॥

इति सर्व्वविषचिकित्सा ॥

———:o:———

Aho ! Shrutgyanam

नागवल्लीदलरसं रामठेन समन्वितम् ।
कंसे करेण सम्पिष्टं लिम्पेद् वृश्चिकनाशनम् ११६ ॥
कराभ्यां नक्तमालस्य दलं पिष्ट्वा विचक्षणः ।
विद्धप्रदेशे बध्नीयात् सद्यो वृश्चिकमस्यति ॥ ११७ ॥
वचा दिनकरक्षीरे लिप्ता वृश्चिकनाशिनी ।
लाजया सह संयुक्ता श्रवणान्तर्गतं मलम् ।
वेधे सङ्कर्षणेनैव विषं वृश्चिकजं जयेत् ॥ ११८ ॥
पलासबीजमर्कस्य क्षीरेण सह पेषितम् ।
लिम्पेद् वृश्चिकवेधे तु बहुभिः किं वितर्कनैः ॥ ११९ ॥

इति वृश्चिकविषचिकित्सा ॥

———:o:———

कपित्थोत्थितवन्दार्कक्षीरेण सह पेषयेत् ।
अष्टादशविधं घोरं मौषिकं नाशयेद्विषम् ॥ १२० ॥
असाध्याखुविषे दष्टे सरटेन सिनाखुना ।
प्रातर्माहिषतक्रेण शालिपानश्च पूजितम् ॥ १२१ ॥
समूलं हंसनादिन्तु गुञ्जां वा क्षीरपेषिताम् ।
पाययेल्लेपयेच्चैव मूषिकस्य विषं जयेत् ॥ १२२ ॥

इति मूषिकचिकित्सा ॥

———:o:———

रसेन लेपनं कुर्य्याच्च् छिरीषमुनिपत्रयोः ।
लूत ग्रस्यापि वा तोयैर्लूता सद्यो विनश्यति ॥ १२३ ॥
पुष्पं दलं फलं कल्कं मूलश्चैव शिरीषजम् ।
योगो ऽयं लूतकोटादि विषध्वान्तस्य भास्करः ॥ १२४ ॥

इति लूताविषचिकित्सा ॥

———:o:———

Aho ! Shrutgyanam

अङ्कोलस्येशदिङ्मूलं क्षीरेण सह पाययेत् ।
घोराणामप्यलर्कानां विषं सद्यो विनश्यति ॥ १२५ ॥
यष्ट्यश्वगन्धया चैव जतुना गरकेन च ।
शृता क्षीरयवागुस्तु रुधिराश्रवनाशिनी ॥ १२६ ॥
पिप्फली भद्रमुस्ता च रोहिणी विश्वभेषजम् ।
एतत् प्रशमनं दद्याद्विषसुप्तप्रबोधनम् ॥ १२७ ॥

इति स्थावरविषचिकित्सा ॥

——:o:——

इति विषद्धंसविधिः ॥

——:o:——

आधाने जन्मनक्षत्रे चन्द्रे वाष्टमराशिगे ।
आमयो यदि जायेत क्लेशाय मरणाय सः ॥ १२८ ॥
पुष्यार्कविष्णुदस्राब्धिपौष्णब्रह्मादितीन्दवः ।
भौमार्कयोश्च वाराद्याः सर्व्वभैषज्यसम्मताः ॥ १२९ ॥
सर्व्वरोगप्रतीकारेष्वधोमुखदिनोदये ।
विधेयं शशिनो वारे स्वानुकूलं विरेचनम् ॥ १३० ॥
गुडसिक्तत्रिवृद्भिश्वःशैन्धवांशरजोयुतः ।
त्रिवृत् क्राथःलताक्राथः सगुडःस्याद्विरेचकः ॥ १३१ ॥
द्राक्षाक्राथस्त्रिवृत्खण्डगुडयुक्तश्च रेचकः ।
विदध्याद्वमनं धीमान् प्रशस्तोऽर्द्धदिनोदये ॥ १३२ ॥
फकराठा कषायोत्थं पयोवमनकृद्भवेत् ।
शस्तौ कोशातकीक्ष्वाकू वमने राठबीजवत् ॥ १३३ ॥
आद्यान्तब्रह्महस्तेन्दुजीववारुणभेषु च ।
जीवार्कयोश्च वाराद्ये हिता चक्षुःप्रतिक्रिया ॥ १३४ ॥

Aho ! Shrutgyanam

तापिञ्जषत्वरजनी सेव्या गोपीपयोधरौ ।
त्रिफलावेति तत् क्वाथः मधुना नेत्ररोगजित् ॥ १३५ ॥
वस्तार्कतूलैःकृतया शशविड्गर्भचूर्णया ।
आज्याक्तयामगीग्राह्याः सर्व्वनेत्रभयान्तकृत् ॥ १३६ ॥
त्रिफलाभृङ्गविश्वानां रसेषु मधुसर्पिषौ ॥
मेषीक्षीरे च गोमूत्रे सिक्तं नागदशो हितम् ॥ १३७ ॥
जातिसिन्धुनिशाकृष्णकुनटीवनठीग्रहम् ।
सक्षौद्रकं सताम्राभ्रां निर्घृष्टं पिल्लहृद्द्रवेत् ॥ १३८ ॥
लोध्रत्वग्धृतसम्भृष्टा खार्य्या पिष्टा ससैन्धवा ।
वस्त्रस्थाश्चोतिना दृग्भ्योऽभिस्यन्दनमपोहति ॥ १३९ ॥
सतैलद्रोणपुष्पाभ्रकृष्णवायसकृद्दशा ।
कर्णं पिष्ट्वाथ सक्षौद्रमञ्जनादीक्षणार्त्तिनुत् ॥ १४० ॥
कुर्य्यान्नासिक्यरोगेषु चिकित्सामर्कहोदये ।
स्तन्यं दुर्व्वाम्बुना नस्यं नासिका शृक् श्रमं हरेत् ।
नासाम्बुश्रवहृज्जिघ्रेद्वस्त्रस्थं कौरवी रजः ॥ १४१ ॥
चिकित्सां श्रुतिरोगेषु विदध्याच्छ्रवणोदये ।
रसः ससैन्धवः कोष्मे रम्भाग्रञ्जनमूलजः ॥
पृथगार्द्रकजोवापि पूरणात् कर्णशूलहा ॥ १४२ ॥
मेषोदयेऽश्विनक्षत्रे मुखरोगचिकित्सितम् ।
महिषी नवनीपेक्षुपत्रभस्मानुलेपनम् ॥ १४३ ॥
जातिपत्रोष्मनिशाककवलम्फलमूत्रयुक् ।
नाशयेदोष्ठजं रोगं योगद्वयमिदम्पृथक् ।
पुङ्खाक्वाथे भयाकल्के सिद्धं तैलं द्विजार्त्तिनी ॥ १४४ ॥
धान्याम्लनारिकेलं गोमूत्रं क्रमुकविस्रयुक् ।
माथितं कवलं कार्य्यमधिजिह्वादिशान्तये ॥ १४५ ॥

Aho ! Shrutgyanam

यमवारे च याम्यर्क्षे यमलग्ने विशेषतः ।
गण्डमालादिरोगेषु कण्ठजेषु चिकित्सितम् ॥ १४६ ॥
साधित लाङ्गलीकल्के तैलं निर्गुण्डिकारसे ।
गण्डमालाश्च गलगण्डौ नाशयेन्नस्यकर्मणा ॥ १४७ ॥
हस्तर्क्षे भानुवाराद्ये कुर्य्यात् कुष्ठचिकित्सितम् ।
पल्लवैरर्कपूतीकस्नुहीव्याघातजातिजैः ॥
उद्वर्त्तयेत् सगोमूत्रैः सर्व्वत्वग्दोषशान्तये ॥ १४८ ॥
वाकुची सतिला भुक्ता वत्सरं कुष्ठनाशिनी ।
भल्लातकं तिलश्चैव गुडपिण्डीच कुष्ठजित् ॥ १४९ ॥
मूले वा पुष्यनक्षत्रे गुदरोगचिकित्सितम् ।
पूतीकवह्निरजनी त्रिफला तिलचूर्णयुक् ।
तक्रं गुदाङ्कुरे पेयं भक्ष्या वा सगुडाभया ॥ १५० ॥
रौद्रे सार्प्पेच शक्रेच कुर्यान्मेहचिकित्सितम् ।
फलदार्व्वी विशालाभ्रकाथो दार्व्विरसोऽथवा ।
पातव्यो रजनीकल्कक्षौद्रयुक्तः प्रमेहिनाम् ॥ १५१ ॥
स्वातौ वा मित्रनक्षत्रे चिकित्सा श्रोणिते हिता ।
वासा गुडीची व्याघातक्काथस्त्वेरण्डतैलयुक् ।
वातश्रोणितहृत् पीतः पिप्फली स्यात् प्लिहाहरी ॥१५२॥
दस्रभे शनिवारे च चिकित्सा जठरामये ।
सेव्या जठरिणा कृष्णस्नुक्क्षीरबहुभाविता ।
पयो वा चव्यदन्त्यज्ञविषगौ व्योषकल्कयुक् ॥ १५३ ॥
ग्रन्थिकान्यभया कृष्णा बिलङ्गाक्ते घटे स्थितम् ।
मसन्तकं ग्रहण्यर्शः पाण्डुगुल्मक्रिमीन् हरेत् ॥ १५४ ॥
फलत्रयामृतावासा तिक्तभूनिम्बनिम्बजः ।
क्काथः समाक्षिको हन्यात् पाण्डुरोगं सकामिलम् ॥१५५॥

Aho ! Shrutgyanam

रक्तपित्ती पिबेद्द्रासा स्वरसं ससिता मधु ।
वरी द्राक्षा बला शुण्ठो साधितं वा पयः पृथक् ॥ १५६ ॥
भाग्ये च पितृनक्षत्रे क्षयरोगचिकित्सितम् ।
वरीविदारीपथ्याश्च बलात्रयनवायुतम् ॥
स्वदंष्ट्रां मधुसर्प्पिभ्यामालिहेत् क्षयरोगवान् ॥ १५७ ॥
रौद्रे मुहुर्त्ते विहिता विद्रध्यादिप्रतिक्रियाम् ।
पथ्या शीग्रुकरञ्जार्कत्वगेला विश्वसिन्धुयुक् ।
समूत्राविद्रधिग्रन्थिपिलकोपाचिकादिहृत् ॥ १५८ ॥
त्रिवृत्तेजस्वती वन्ती मञ्जिष्ठा रजनी द्वयम् ।
तार्क्ष्यगं निम्बपत्रञ्च पिष्ट्वा लिम्पेद्भगन्दरे ॥ १५९ ॥
व्याघातरजनी लाक्षा चूर्णज्यक्षौद्रसंयुता ।
वासवर्त्तिव्रणे योज्या शोधिनी गतिनाशिनी ॥ १६० ॥
शामा यष्ठि निशा लोध्रपद्मकोत्पलचन्दनैः ।
सशारिवे श्रुतं तैलं क्षीरे स्याद्व्रणरोपणम् ॥ १६१ ॥
श्रीकार्प्पासदलैर्भस्मफलोषणवरी निशा ।
तत्पिण्डी स्वेदनं ताम्रे सतैलं स्यात् क्षतौषधम् ॥ १६२ ॥
कुम्भी शामपयोयुक्तं वह्निदग्धव्रणे दिशेत् ।
तदेव नाशयेत् शोकान्नारिकेलरजो घृतम् ।
दूर्व्वापत्रमपामार्गपत्रं स्यादश्रबन्धनम् ॥ १६३ ॥
अतीसारचिकित्सा स्यान्मुहुर्त्ते रौद्रसंज्ञिते ।
नाभौ लिम्पेत्तण्डुलाभिस्तालीमूलं विसूचिहृत् ।
नश्येद् भृङ्गाम्बुमुष्णाभिः कृष्णाविश्वे पिबेदपि ॥१६४॥
विश्वाजमोदसिन्धूत्थचिञ्चात्वग्भिः समाभया ।
तक्रेणोष्णाम्बुना वापि पीतातीसारनाशिनी ॥ १६५ ॥
वत्सकातिविषोदीच्यबिल्वमुस्तुश्रुतं जलम् ।

Aho ! Shrutgyanam

सामे पुराणेतीसारे साऽष्टकुशूले च पाययेत् ॥ १६६ ॥
अङ्गारदग्धं स्नुहहतं सिन्धुमुष्णाम्बुना पिवेत् ।
शूलवानथवा तद्वत् सिन्धुहिङ्गुकणाभया ॥ १६७ ॥
वरारोहोत्पलातङ्कराजचूर्णं मधुप्लुतम् ।
वस्त्रच्छन्नगतं वक्त्रे न्यस्तं तृष्णा विनाशयेत् ॥ १६८ ॥
यासदार्व्वीजातिफलद्राक्षाम्रतफलत्रयैः ।
साधितं समधुयुक्तं कवलं मुखपाकहृत् ॥ १६९ ॥
कृष्णातिविषतिक्तेन्द्रदारुपाठापयोमुचाम् ।
काथो मूत्रेशृतः क्षौद्री सर्व्वकण्ठगदापहः ॥ १७० ॥
पथ्या गोक्षुर दुस्पर्श राजवृक्षशिलाभिदाम् ।
कषायः समधुः पीतो मूत्रकृच्छ्रामपोहति ।
सस्नुहत्वग्वरणाकाथः शर्करास्मरिपातनः ॥ १७१ ॥
शाक्रे मुहूर्त्ते भाग्यर्क्षे वृद्धिरोगचिकित्सितम् ।
ऐन्द्रिमूलं कुबेराक्षि शृङ्गं वा वृद्धिमान् पिवेत् ।
तद्वयं सिन्धुयुक्तं वा तक्रेणोष्णाम्बुनाथवा ॥ १७२ ॥
गुल्मरोगचिकित्सा स्यादुत्तरत्रयवारिभे ।
सौवर्चलाजहिङ्गुनां सदीप्यानां रजोयुतम् ।
विल्वं दीपकयुक्तं वा वातगुल्मातुरःपिवेत् ॥ १७३ ॥
सार्प्पे सर्प्पमुहूर्त्ते च विसर्प्पानां चिकित्सितम् ।
धात्री पटोलमुस्तानां काथः सर्व्वविसर्प्पनुत् ॥ १७४ ॥
शोफप्रातिक्रिया स्वातिरेवतीरोहिणीषु च ।
शुण्ठी दारु नवा क्षीर काथो मूत्रान्वितः परम् ।
सव्योपयो रजक्षारफलकाथश्च शोफनुत् ॥ १७५ ॥
बहुलासु शनेर्वारे जठराग्निचिकित्सितम् ।
सिन्धुद्विज्जीरकौ व्योषदीप्याहिङ्गुरजोण्णुयात् ।

Aho ! Shrutgyanam

आज्याक्ते प्रथमग्रासे वह्निकृद्वातनाशनः ॥ १७६ ॥
सार्पे मुहूर्त्ते सर्पर्क्षे भवेत् काशचिकित्सितम् ।
वातरोगचिकित्सा च कैश्चित्तत्रैव पठ्यते ॥ १७७ ॥
कटुत्रयी पद्मकदेवदारुराष्णविडङ्गत्रिफलामृतानाम् ।
चूर्णं समांशं सितयावलीढं काशान् हरेत् कृष्णकमेव पापान्१७८
कर्पासास्थिशिलाकटूनि बदरीपत्रश्च भृङ्गीरस
स्तद्वर्त्ती कुणटी कटुत्रयरविक्षीरान्विता वर्त्तिका ।
गोपी मागधिका शिलांशविहिता वर्त्तिः शिलाविश्वयोः
वर्त्तिश्च क्रियया यथाविहितया काशानशेषान् हरेत्॥१७९॥
यस्मिन् वातरुजास्तित्रह्निग्रहगोदण्डाकनेत्रोज्ज्वलान्
गात्रे तत्र विनीततो हरति तान् सूर्य्यस्तमिस्रामिव ।
ध्यातो हन्ति तथैव नाभिवलये यः स्वाशकाशादि काम्
श्लेष्मानश्च गलेक्षणेऽतिजठरे मन्दानलन्दापयेत् ॥१८०॥
चतुः षष्ठिपुटे क्षेत्रे षट्त्रिंशच्छूलदीपिते ।
जरानारित्रयाभानुकोष्ठासु वृत्तिषु क्रमात् ॥ १८१ ॥
लिखेत् सबिन्दुरत्नस्थश्चक्रं तद्भूस्थमर्प्पयेत् ।
न स्युस्तत्र शयानस्य ज्वराःसर्व्वे विधानतः ॥ १८२ ॥
कुल्याभ्यां साग्रशूलाभ्यां कृत्वा कान्तं शशिद्वयम् ।
कुल्यासन्धौ लिखेत्तारं याम्ये कोष्ठद्वये विषम् ।
सान्तं सौम्ये च तच्चक्रं मद्यात्ताम्बूलगं ज्वरी ॥ १८३ ॥
तक्रे वाज्ये पिबेद्बिल्ववन्दाकां विषमज्वरे ।
वङ्गासुरसयोर्मूले बध्नीयाद्द्व्याह्निकज्वरे ॥ १८४ ॥
गुञ्जापक्कफलं चिञ्चावेष्ठितं शिरसि न्यसेत् ।
त्र्याहिकज्वरनाशाय न याम्ये यदि वार्त्तुतत् ॥ १८५ ॥

---

१ साम्ये । वावरैरुजास्ति ।

रम्भाफलं मूलशतं निःस्वासं हन्ति भक्षितम् ।
कृष्णोषणानिशाराष्णाद्राक्षातैलं गुडं लिहेत् ॥
धात्री लाजा सिताक्षौद्रतैलाज्यं स्वाशकाशहृत् ॥ १८६ ।
धात्री विश्वसिता कृष्णा मुस्ताखर्जूरमागधी ।
पिञ्जभस्मा च हिक्काग्रस्तत्रायं मधुना लिहेत् ॥ १८७ ॥
रेखाभ्यामग्रशूलाभ्यामाक्रम्येन्दुं लिखेद्विषम् ।
कोष्ठेषु तारं मध्ये च चक्रं हस्ततलेऽर्पितम् ।
दुष्टं हन्ति शिरोरोगं चिन्त्यमानं यथामृतम् ॥ १८८ ॥
निर्व्वीरजस्य चक्रस्य सान्तं कोष्ठेषु बिन्दुमत् ।
तथैकरुद्रं वा तस्य लिखेत् कोष्ठेषु दण्डिनम् ।
न्यसेन्मूर्ध्न्युपधाने च शिरोरोगस्य शान्तये ॥ १८९ ॥
स्वेदयेत् पायसेनापि कुष्माण्डैरण्डयोःशिफे ।
खार्य्यं लिम्पेच्छिरोरोगे पारिभद्रत्वचं तथा ॥ १९० ॥
आर्की सौम्यशिफापेया मारिहृत् तण्डुलाम्भसा ।
पाठोपानच्च पानेन हरेत् सद्यो मसूरिकाम् ॥ १९१ ॥
तुरगार्कशिफा तुटी निशा द्वयहंसाङ्घ्रिहिराशृतं घृतम् ।
उपसेवनतो विनाशयेदुपदंशास्तनावद्रुधिक्षताम् ॥ १९२ ॥
सिंही यष्टी निशागुग्मवत्सककाथसेवितम् ।
शिशोस्सर्व्वातिसारे च स्तन्यदोषे च शस्यते ॥ १९३ ॥
सकृष्णातिविषा शृङ्गी चूर्णितं मधुना लिहेत् ।
एकावती विषा काशश्छर्दि ज्वरहिता शिशोः ॥ १९४ ॥
देवदारुसहाशीग्रुफलत्रयपयोमुचाम् ।
क्राथः सकृष्णमृद्वीकः कल्कः सर्व्वान् कृमीन् हरेत् ॥१९५॥
हरिद्राराजवृक्षत्वग्चिञ्चालवणलोलिता ।
पीताखारि हरेद्राशु गवामुदररं[1]संहनम् ॥ १९६ ॥

---

१ हृद्धनम ।

Aho ! Shrutgyanam

क्षीरपिष्टं तिलम्पाठा कार्पासदलमेव च ।
तक्रेण सहितं पीतं नाशयेद्गोविशूचिकाम् ॥ १९७ ॥
सलिलं नारिकेलस्य खारीक्षीरं बलारसम् ।
चतुष्टयमिदम्पानात् करीषाश्रं हरेद्गवाम् ॥ १९८ ॥
वचालशुनानिर्गुण्डी दीप्यकं सफनीतकम् ।
खार्य्या कुष्माण्डा पुर्य्याके करीषे पाययेत् पशुम् ॥ १९९ ॥
सहस्ररश्मिरादित्योऽग्निठठ ।
पत्रे लिखितमेतद्गाः पालयेत् कलितं गले ।
वाक्लीं हुं पुं क्लीं हंहं क्लीं ह हुं क्लीं कलंठठ ॥ २०० ॥
षड्गुणषड्दिवसं त्रिसहस्रं नियमक्षवलयेन च जप्या ।
साधितमन्त्ररयन्त्रितजप्य स्पर्शनेन जनतामयहृत् स्यात् २०१
*अङ्गुष्ठोऽङ्घ्रिकगुल्फजानुमदनावासाश्च नाभिश्च हृद्

* अस्याः बहुविशेषा मतान्तरेषु दृश्यन्ते । तस्मादिह केषाञ्चि-न्मतानि हि सन्दर्शयामि । तेषु प्रायो जयदेवाचार्य्यमतमायुर्व्वेदा-गतक्रमश्चेत्युभयमेतत्पूर्व्वं प्रमाणीकृतम् । अन्ये तु कलाशब्दमङ्ग-प्रत्यङ्गेष्वामनन्ति । तद्यथा । शिरो ग्रीवा पाणि पाद पार्श्वपृष्ठोदरा-स्येत्यष्टाङ्गानि । चिबुकनासौष्ठश्रवणाङ्गुष्ठाङ्गुलिपार्ष्णिगुल्फाः प्रत्य-ङ्गानीति । स्वतन्त्र परतन्त्राभिप्रायानुवर्त्तिभिः आचार्य्यैः कलाशब्दो गुणवाची पठितः । तस्य पुरुषस्य सुखदुःखेच्छादयो भूतचिन्ता-शारीरोक्ताः षोड़शगुणाः चतुष्पादं षोडशकलं भेषजं चरकाचार्य्ये-णोक्तम् । तत्र षोडशकलं षोडशगुणमिति व्याख्यानयन्ति । अग्निः सोमो वायुः सत्त्वं रजस्तमः पञ्चेन्द्रियाणि भूतात्मेति प्राणाः । यो-ऽसौ भूतात्मा स तु षोडशकलः संयोगिन एव प्राणव्यपदेशभा-जइत्येकादशत्वम् । रोगाणान्तु सहस्रं यच्छतं विंशतिरेव चेति ॥

जयदेवाचार्य्यमतम् ।

अङ्गुष्ठे चरणे च गुल्फनिलये जानुद्वये वस्तिके
नाभौ वक्षसि जङ्घयोर्निगदिता कण्ठे कपोलेऽधरे ।
नेत्रे कर्णयुगे ललाटफलके मौलौ च वामभ्रुवां
मूर्द्धाधश्चलनक्रमेण कथिता चान्द्री कला पक्षयोः ॥

Aho ! Shrutgyanam

ग्रीवा चाप्यथ नासिका च नयनं कर्णश्च चिल्ली तथा ।
तन्मध्यास्त्वथ शङ्खमस्तकमिति प्रारभ्य शुक्लादिमम्
पुंसां दक्षिणतश्चरेत्तिथिवशाद्देहे सुधायाः कला ॥२०२॥

अस्यार्थः । पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः कथिता निरूपिता चान्द्री कला चन्द्रसम्बन्धी अंशविशेषः ऊर्ध्वाधश्चलनक्रमेण शुक्ले ऊर्द्धचलनेन कृष्णे अधश्चलनेनेत्यर्थः वामभ्रुवां रमणीनाम् अङ्गुष्ठे, चरणे, गुल्फनिलये गुल्फस्थाने, जानुद्वये, वस्तिके नाभ्यधोभागे, नाभौ, वक्षसि, जङ्घयोः, कण्ठे, कपोले गण्डे, अधरे, नेत्रे, कर्णयुगे, ललाटफलके, मौली शिरसि, च निगदिता उक्ता ॥

सीमन्ते नयनेऽधरे च गलके कक्षस्तवे चूचुके
नाभौ श्रोणितटे मनोभवगृहे जङ्घातवे गण्डके ।
गुल्फे पादतले तदङ्गुलितटेऽङ्गुष्ठे च तिष्ठत्यसौ
वृद्धिक्षीणतया समं शशिकला पक्षद्वये योषताम् ॥

अस्यार्थः । पक्षद्वये शुक्लकृष्णयोः असौ शशिकला चन्द्रकला वृद्धिक्षीणतया शुक्ले वृद्धया कृष्णे क्षीणतया क्षयेण समं समभावेनेत्यर्थः योषितां नारीणां सीमन्ते केशे, नयने, अधरे, गलके कण्ठे, वक्षस्तटे, उरसि, चूचुके कुचाग्रे, नाभौ, श्रोणितटे नितम्बे, मनोभवगृहे योनौ, जङ्घातटे, गण्डके कपोले, गुल्फे, पादतले, चरणतले तदङ्गुलितटे तस्य चरणस्य अङ्गुलिदेशे, अङ्गुष्ठे वृद्धाङ्गुली च तिष्ठति ॥

शुक्लपक्षे वसेद्वामे पादाङ्गुलिकनिष्ठके ।
शुक्लप्रतिपदादौ च कृष्णे चाधः प्रलम्बते ॥
पुंसः सव्ये स्त्रिया वामे शुक्ले कृष्णे विपर्य्ययः ।

अस्यार्थः । शुक्लपक्ष वामे वामभागे, योषितामिति शेषः । शुक्लप्रतिपदादौ च पादाङ्गुलिकनिष्ठके वसेत् शशिकलेति शेषः । कृष्णे कृष्णपक्षे, अधः प्रलम्बते च ॥

शुक्ले शुक्लपक्षे, पुंसः पुरुषस्य, सव्ये दक्षिणे, स्त्रियाः वामे शशिकला वसेदिति शेषः । कृष्णे विपर्य्ययः पुंसः वामे स्त्रियाः दक्षिणे शशिकला वसेदित्यर्थः ॥

Aho ! Shrutgyanam

सुधारोहावरोहौ तु पार्श्वयोर्व्यत्ययात् स्त्रियाम् ।
सुधायास्सप्तमे स्थाने कला क्ष्वेडस्य तिष्ठति ॥ २०३ ॥
आस्थेयत्रामृतमवयवे तस्य खुर्दाविषघ्न
स्तस्मिन् दष्टो यदि च गुलिको नापि न स्याद्विपत् ।
स्थाने यस्मिन्*नहि विषकला मर्दनं तस्य कुर्य्यात्
क्ष्वेडस्योग्रं वितरति मृतिं तक्षदंशश्शुभोऽपि ॥ २०४ ॥
क्ष्वेडे कण्ठगताम्बुदण्डिसमुधं ध्यानोपभोगाङ्गले
भुक्तश्चेद्विषमप्युदग्रमभृतञ्जायेत निर्दोषतः ।
अस्त्रैवमहर्निशं बलमनस्तेजोऽङ्गपुष्ट्यादिभाग्
जीवेद् दुःखजरापमृत्युपलितातङ्कादिमुक्तश्चिरम् ॥२०५॥
गुह्यं यदा याति कला सुधाया वश्यन्न भोगेऽपि तदाशु याति।
भोगे सुधास्थानविमर्दचुम्बोऽवश्याय शुक्रक्षरणाय च स्यात्२०६
स्थाने यस्मिन् सा सुधायाः कलास्थे
तत्स्थान् प्राणान् सन्ततं चिन्तयेद्यः ।

अन्यमतम् ।

अङ्गुष्ठाङ्घ्रिकपादसन्धिषु तथा जानूरुगुह्येष्वतो
नाभौ हृत्कुचकण्ठनासश्रुतिधृग्नेत्रे ललाटेऽप्यथ ।
शीर्षे तिथ्यवसानगा शशिकला प्रारभ्य नृणां स्त्रियां
दाक्षिण्ये विचरेत् परामृतकलायाःस्थे विषं सप्तमे ॥

अस्यार्थः । शशिकला चन्द्रकला, प्रारभ्य शुक्लप्रतिपदारभ्य, नृणां पुरुषाणाम् । दाक्षिण्ये दक्षिणभागे च । स्त्रियां नारीणाम् । वामभागे इति शेषः । अङ्गुष्ठे चरणे पादतले, तथा तद्वत्, जानुयुगले, जानूपरिभागे, लिङ्गे, अतः नाभौ, वक्षसि, स्तने, कण्ठे, नासिकायाम्, श्रुतिधृक् कर्णः तस्मिन् युगले, नेत्रे, ललाटे, शीर्षे शिरसि, तिथ्यवसानगा तिथीनां अवसानात् गच्छतीत्यर्थः । अमृतकलायाः सप्तमेस्थे सप्तमस्थाने, अपरं विषम् अन्यविषकला, विचरेत् । अमृतकलायाः सप्तमं स्थानं विषवद्भवतीत्यर्थः ॥

* दिह ।

Aho ! Shrutgyanam

आयुःपुष्टिश्रीवयःस्तम्भसम्पत्
तेजोरूपाः शक्तयस्तस्य सन्ति ॥ २०७ ॥
पथ्याचित्रकशृङ्गिवेरमुशलीछिन्नोद्भवानां रजः
तुल्यांशङ्गुडपाकिमं दिनमुखे लेह्यं जनैर्निसशः ।
वृष्यं पुष्टिकरं जरापलितहृत् तेजोवयोवर्द्धनं
सर्व्वव्याधिहरं रसायनमिदं वर्षोपयोगाद्भवेत् ॥ २०८ ॥

इति रोगध्वंसविधिः

इति सङ्कीर्णदशाविधानं नाम त्रिंशोऽध्यायः ।

इत्यनवमदर्शिनः स्थविरस्य कृतौ दैवज्ञकामधेन्वां मङ्गल्यविधानप्रकरणं नाम तृतीयम् ।

विश्रामद्वीपभूमिर्ग्रहचरितफलग्रन्थसिन्धूपगाना
मादेशग्रन्थचिन्तातपविवशधियां निर्वृतस्वर्गगङ्गा ।
भास्वद्रत्नावलीयं विविधविधिमयालङ्कृतौ सस्पृहाणां
सन्तुष्ट्यै कस्य न स्यात् सुचिरमनुश्रुता दैववित् कामधेनुः ॥१॥
ग्रहगणितविधानं तत्फलं जातकाख्यं
विधिमपि च निमित्तं सत्क्रियाणां विधानम् ।
स्पृहयितुरलमेके नैव शास्त्रेण वेत्तुं
परिलघु लिखितेयं दैववित् कामधेनुः ॥ २ ॥

इत्यनवमदर्शिना स्थविरेण कृता दैवज्ञकामधेनुः समाप्ता ।

शिवमस्तु ।

१ पाक्तिं ॥

Aho ! Shrutgyanam

भूमिका ।

विज्ञप्तिः ॥

दिनपतिकुलक्रमकेन श्रीशाक्यमुनिं प्रणम्य भक्त्यादौ ।
सद्धर्मसङ्घसहितं गुरुञ्च सर्व्वार्थसिद्धिकरम् ॥ १ ॥
ज्योतिःशास्त्राभिज्ञैर्मुनिभिर्दिनकरवाशिष्ठपूर्व्वैर्यत् ।
विहितं दैविकशास्त्रं सारांशांस्तस्य चाहृत्य ॥ २ ॥
श्रीमान् नवमदर्शी पण्डितवृन्दैर्निसेवितो धीमान् ।
दैवज्ञकामधेनुं विदधौ लोकार्थसंसिद्ध्यै ॥ ३ ॥
प्रागवज्ज्योतिर्विद्भिः सम्भावितमपि समादरं बहुधा ।
कालात्ययेन विविधैर्दोषैस्तत् समभिकीर्णमभूत् ॥ ४ ॥
तत् संस्क्रियतेऽत्र मया ग्रन्थान्तराणि विलोक्य यथामति ।
बहुधा ग्रन्थाभावात् स्खलितानि भवन्ति यानि यदि ॥ ५ ॥
स्वधिया तानि समीक्ष्य लोकार्थरता विशुद्धधीमन्तः ।
करुणाकठोरचित्ताः स्खलितानि च शोधयन्त्वार्य्याः ॥ ६ ॥

एतत् खलु ज्योतिःशास्त्रं ग्रहनक्षत्रादीनां गतिस्वरूपादिनिर्णायकं शिक्षाकल्पव्याकरणनिरुक्तच्छन्दश्ज्योतिषादिषु षट्सु वेदाङ्गेष्वेवान्तर्भूतं होरागणितसंहिताकेरलीशकुनवशात् पञ्चधाऽपि भिन्नं सकलानां लोकानां शुभाशुभफलप्रदर्शने परमोत्कर्षभूतम् । तद्विषयानां सर्व्वेषां होराग्रन्थानाम् उज्जयिनीपुरवासिना श्रीमता वराहमिहिराचार्य्येण कृतानि वृहज्जातक वृहत्संहितालघुजातकादीनि पुस्तकानि च नारदेन मुनिना प्रणीता नारदसंहिता च श्रीमता कालिदासनामकेन कृतं ज्योतिर्विदाभरणञ्च भारत-

Aho ! Shrutgyanam

वर्षीयैर्बहुभिर्ज्योतिर्विद्भिः पण्डितैः प्रायः सर्व्वोत्कर्षतया सादरं परिगण्यन्ते तथा लाङ्क्कैर्दैवविद्भिश्च ॥ ज्योतिर्विदाभरणन्तु श्रीमता कालिदासेन महाकविवरेण कृतमिति केचिद् वदन्ति ।

अस्मिंस्तु ज्योतिःशास्त्रे पौलिशो रोमको वाशिष्ठः सौरः पैतामहश्चेति आदिमाः परमोत्कृष्टाः पञ्च सिद्धान्ता भवन्ति । पुरा किल सूर्य्यारुणसंवादानुसारेण गंगादिषु मुनिषु एतच्छास्त्रविषयकं यज्ज्ञानं पुलिशेन महर्षिणा समुत्पादितं स पौलिशः सिद्धान्तो नाम । यद्वसिष्ठेन महर्षिणा स्वपुत्राय पराशराय दत्तं स वासिष्ठः सिद्धान्तो नाम । यत्तु सूर्य्येण मयाय दैत्याय प्रकाशितं स सौरः सिद्धान्तो नाम । यच्च ब्रह्मणा स्वपुत्राय वशिष्ठाय दत्तं स पैतामहःसिद्धान्तो नाम जातः । तथाचोक्तमरुणम्प्रति सूर्य्येण;—"पैतामहञ्च सौरञ्च वासिष्ठं पौलिशं तथा । रोमकञ्चेति गणितं पञ्चकं परमाद्भुतमि"ति । अतः पश्चात्तत्कालिकैरन्यैः पण्डितैरपि कृतास्तन्नामका नवीनाः सिद्धान्ता अपि सन्ति । साम्प्रतं भारतवर्षे ऋषिप्रणीतानामेव परमाद्भुतानां सिद्धान्तानां प्रमाणं कुर्व्वन्ति नापरेषाम् । तथापि वराहमिहिराचार्य्यकृतायां पञ्चसिद्धान्तिकायान्तु,—"पञ्चभ्यो द्वावाद्यौ व्याख्यातौ लाटदेवेने" ति वचनाल्लाटाचार्य्येणाऽपि पौलिशरोमकौ द्वौ सिद्धान्तावेव स्वकृते सिद्धान्ते व्याख्यातौ तयोर्भगणादिषु बीजं दत्वा विस्तारितावेत्युक्तम् । अत्रेदमुच्यते लाटाचार्य्येण पौलिशरोमकौ द्वै सिद्धान्तौ स्वीकृत्य तयोर्बीजादिविशेषं विधाय कृतोऽन्यः सिद्धान्तोऽपि स्यात् । अत एव ममेदं करणं सर्व्वजनस्वीकृतं भवेदिति मत्वा पञ्चानां सिद्धान्तानां मतान्यवलम्ब्य वराहमिहिराचार्य्येण पञ्चसिद्धान्तिका रचितेतिभावः । तत्र कालनियमादयः श्रीसुधाकरद्विजन्मना कृतायां पञ्चसिद्धान्तिकाप्रकाशिकायामुक्तानुसारेणावगन्तव्याः ॥

यतस्तु यः कश्चित् दैवचिन्तको होरागणितादिकमेतत् कृत्स्नम्

आचार्य्यस्य सकाशाद् ग्रन्थतश्चार्थतश्च जानाति स वै संहितापारगो भवति। तदा तेन दिनकरादीनां ग्रहाणां चारप्रकृतिविकृतिप्रमाणवर्णकिरणद्युति संस्थानास्तमयोदयमार्गमार्गान्तरवक्रानुवक्रर्क्षग्रहसमागमादिभिः फलानि सूचयितुं शक्यन्ते। ततो राजमहामात्यादिभिः प्रभुजनैरपि संमानितः पूजितश्च भवति दैवचिन्तकः। तथोक्तं गर्गेण महर्षिणा,।

"कृत्स्नाङ्गोपाङ्गकुशलं होरागणितनैष्ठिकम्।
यो न पूजयते राजा स नाशमुपगच्छति॥

वनं समाश्रिता येऽपि निर्ममा निष्परिग्रहाः।
अपि ते परिपृच्छन्ति ज्योतिषां गतिकोविदम्॥

अप्रदीपा यथा रात्रिरनादित्यं यथा नभः।
तथा सांवत्सरो राजा भ्रमत्यन्धइवाध्वनि॥

मुहूर्त्त तिथिनक्षत्रमृतवश्चायने तथा।
सर्व्वाण्येवाकुलानि स्युर्न स्यात् सांवत्सरो यदि॥

तस्माद्राज्ञाभिगन्तव्यो विद्वान् सांवत्सरोऽग्रणीः।
जयं यशः श्रियं भोगान् श्रेयश्च समभीप्सता॥

नासांवत्सरिके देशे वस्तव्यं भूतिमिच्छता।
चक्षुर्भूतो हि यत्रैष पापं तत्र न विद्यते॥

न सांवत्सरपाठी च नरकेषूपपद्यते।
ब्रह्मलोकप्रतिष्ठाञ्च लभते दैवचिन्तकः॥

ग्रन्थतश्चार्थतश्चैतत् कृत्स्नं जानाति यो द्विजः।
अग्रभुक् स भवेच्छ्राद्धे पूजितःपङ्क्तिपावनः॥

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्।
ऋषिवत्तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्दैवविद्द्विजः॥

कुहकावेशपिहितैः कर्णोपश्रुतिहेतुभिः ।
कृतादेशो न सर्व्वत्र प्रष्टव्यो न स दैववित् ॥

अविदित्वैव यः शास्त्रं दैवज्ञत्वं प्रपद्यते ।
स पङ्क्तिदूषकः पापो ज्ञेयो नक्षत्रसूचकः ॥

नक्षत्रसूचकोद्दिष्टमुपहासं करोति यः ।
स व्रजत्यन्धतामिस्रं सार्द्धमृक्षविडम्बिना ॥

नगरद्वारलोष्ठस्य यद्वत् स्यादुपयाचितम् ।
आदेशस्तत्वदज्ञानां यःसत्यः स विभाव्यते ॥

सम्परया योजितादेशस्तद्विच्छिन्नकथाप्रियः ।
मत्तः शास्त्रैकदेशेन त्याज्यस्तादृग्महीक्षिता ॥

यस्तु सम्यग्विजानाति होरागणितसंहिताः ।
अभ्यर्च्यः स नरेन्द्रेण स्वीकर्तव्यो जयैषिणा ॥

न तत् सहस्रं करिणां वाजिनां वा चतुर्गुणम् ।
करोति देशकालज्ञो यदेको दैवचिन्तकः ॥

दुःस्वप्नदुर्विचिन्तितदुःप्रेक्षितदुष्कृतानि कर्माणि ।
क्षिप्रं प्रयान्ति नाशं शशिनः श्रुत्वा भसंवादम् ॥

तथेच्छति भूपतेः पिता जननी वा स्वजनोऽथवा सुहृत् ।
स्वयशोऽभिवृद्धये यथा हितमाप्तः सबलस्य दैववित् ॥"

इत्थमस्मिन् ज्योतिःशास्त्रे कथङ्कारं स्वल्पेन समयेन अनायासेन नैपुण्यसाधनाय अल्पमतिर्मानवः समुद्योगं कुर्य्यात् । तथोक्तमार्य्यविष्णुगुप्तेन ।

अप्यर्णवस्य पुरुषः प्रतरन् कदाचि
दासादयेदनिलवेगवशेन पारम् ।
नत्वस्य कालपुरुषाख्यमहार्णवस्य
गच्छेत् कदाचिदनृषिर्मनसापि पारम् ॥

Aho ! Shrutgyanam

अत एव शुचिना दक्षेण प्रगल्भेन वाग्मिना प्रतिभानवता देशकालविदा सात्त्विकेन न पर्षद्भीरुणा सहाध्यायिभिरनभिभवनीयेन कुशलेनाऽव्यसनिना शान्तिपौष्टिकाभिचारस्नानविद्याभिज्ञेन विबुधार्चनव्रतोपवास निरतेन स्वतन्त्राश्चर्य्योत्पादितज्ञानप्रभावेन अभिजातेन प्रियदर्शनेन विनीतवेशेन सत्यवचनेनाऽनसूयकेन समेन सुसंहतोपचितगात्रसन्धिनाऽविकलेन चारुकरचरणनखनयनचिबुकदशनश्रवणललाटभ्रूत्तमाङ्गेन वपुष्मता गम्भीरोदात्तघोषेण येन केनचिन्मानवेन अस्मिन्ज्योतिःशास्त्रे उद्ग्रहणधारणाय समुद्योगं करणीयमेवेति सूचितम् ॥

इयं खलु दैवज्ञकामधेनुर्नाम आब्रह्मादिविनिःसृते वेदाङ्गभूते निरतिशये ज्योतिषागमे नानानयविभागपरिकल्पनाभिजिज्ञासूनां सकलानां दैवचिन्तकानां रत्नमुकुरसन्निभा स्यात् । सेऽयं निखिला भीष्टार्थप्रदायिनी सुरभिकेव ज्योतिःशास्त्राभिजिज्ञासूनाम् । तस्यास्तत्तत् सदुपदेशावबोधकरणन्तु दैवज्ञकामधेनुरिति स्वनाम्नैव याथार्थ्यात् सम्यक् प्रतीयते मनस्विनाम् । अस्यास्तु दैवज्ञकामधेनोर्निर्माता भूसुरवंशैककेतुः पूज्यपादःसर्व्वविद्याकलासु पारदर्शी पण्डितशिरोमणीभूतः श्रीमान् अनवमदर्शी नाम स्थविरवरः अतस्त्वेकपष्ट्युत्तरषट्शतसंवत्सरादुपरि त्रिषष्ट्यधिके एकादशशतपरिमिते शाकेऽब्दे लङ्कायां नेकराज्यश्रीविभूतिसमुदयसमुल्लसिते सकलशत्रुकुञ्जरदर्पनिहतकेशरिविक्रमे विदितसमयान्तरे विज्ञातविद्यानिचये धन्यपुण्यलक्षणोपशोभिते कलिकालसाहित्यसर्व्वज्ञपण्डितपराक्रमबाहौ नाम नृपवरे राज्यमनुशासति तस्यैव राज्ञो यथोचितविधिनियोगात् तत् साहाय्येन दक्षिणलङ्काधरणेः परिरक्षितेन रत्नत्रयातिप्रसन्नेन परिशुद्धाशयेन प्रतिराजदेवनामकेन पण्डितेन महामन्त्रिणा प्रतिसंस्कृते प्रासादनिकरसमलङ्कृते निर्मलशीतलाम्बुपरिपूर्णपुष्करणीमनोहरे विविधयतिगणनिसेविते उत्तुङ्गायातधवलवर्णप्राकारपरिक्षिप्ते प्रियदर्शने विश्रुते हस्तवनगल्यनामके महाविहारे चिरमुवास ॥

Aho ! Shrutgyanam

स च महास्थविरवरः सकलेषु वेदवेदाङ्गादिषु च न्यायालङ्कृतिस्मृतिप्रभृतिशास्त्रेषु च चतुःषष्टिकलासु च पारदर्शी जिनवरप्रणीतेषु परमोत्कृष्टेषु सुत्राभिधर्म्मविनयसङ्ख्यातेषु त्रिषु पिटकेषु च विशेषदर्शी विबुधाग्रणीः सज्जनपरिजननिसेवितचरणयुगलो वशीकृतेन्द्रियः शान्तो दान्तो गुणवान् शीलवांश्चाऽभूत् । स चाऽयं महास्थविरवरो राज्ञा पण्डितपराक्रमबाहुना सकलेऽपिलङ्कादीपे सङ्घराजधुरि नियुक्तः सन् सुतरां सगौरव सबहुमानपुरःसरं चतुर्भिःप्रत्ययैः सर्व्वदा सङ्गृहीतः संमानितश्च । स हि सङ्घराजवरो लोकोपकृतिं कर्तुकामःसन् गर्गपराशरवशिष्ठभोजमणित्थबादरायणप्रह्लादनवृहस्पतिव्याससुबोधसारस्वतविष्णुगुप्तवराहमिहिरादीनां पूर्व्वीयाणां निर्मलबुद्धीनां महाशयानां मतांश्च पौलिशरोमकवाशिष्ठसौरपैतामहादीनां परमाद्भुतानां सिद्धान्तानां क्रमांश्चानुगम्य मधुरकोमलपदावलीमिमां दैवज्ञकामधेनुं नात्यल्पां नातिविस्तरामुद्ग्रहणधारणसुकरां कृत्वा एतत्कालीयानां गणकानां दैवचिन्तकनाञ्च हितार्थसाधनाय निरमीमात् ॥

अनेन श्रीमता अनवमदर्शिना सङ्घराजवरेणा ऽपि अस्याः प्रारम्भे,— " प्राच्यैर्वराहमिहिरादिभिरभ्ययायी " ति वचनात् ज्योतिःशास्त्रे विख्यातकीर्त्तिमतेर्वराहमिहिराचार्य्यस्य मतान्येव अस्यां दैवज्ञकामधेन्वां प्रायः स्वीकृतानीत्यवगम्यते । तथा होराफलप्रदर्शने ऽपि व्यासभोजमतानि चातस्मादेषा सर्व्वैर्ज्योतिर्विद्भिः सम्भावनीया । एतत्कालीयानां नानातन्त्रावलोकने विरलोत्साहानां मन्दबुद्धीनां दैवचिन्तकानां स्वल्पेन कालेन अनायासेन ज्जोतिश्शास्त्रमहार्णवं तीर्त्वा यथेप्सितार्थसिद्धै एषा दैवज्ञकामधेनुः क्षुद्रनौकावद्भवति । अत एषा जयश्रीयशःकामैर्दैवचिन्तकैः सादरं सततं भावनीया । एषा दैवज्ञकामधेनुस्त्रिंशदध्यायैरन्विता । तेष्वेवाध्यायेषु यानि यानि निर्दिष्टानि तानि सर्व्वाणि चिह्नद्वारेण संज्ञापूर्व्वकं कृत्वा अत्रैवानुक्रमणिकायां पृथक् पृथक् सन्दर्शितानि । तानि तत्रागतानुसारेणैव अवगन्तव्यानि ॥

Aho ! Shrutgyanam

अस्य च पुस्तकस्य एतद्देशे इदानीं विरलोपलम्भाद्येषां केषाञ्चित्तेन पुस्तकेन अर्थे सति तदर्थं सुखं साधयितुं न शक्यते । अपि च कथङ्कार-मपि महता उत्साहेन पुस्तकं लब्ध्वा विलोकयतस्तस्य चित्तमतो ऽत्रबाध्यते तद्व्याकुलतया दुर्घटतया च । एतस्य पुस्तकस्य बहुकालमनधीतशास्त्राणां केषाञ्चिद्दैवचिन्तकानामेवान्तरे व्यवहारोपगतत्वात्तेषां यथामति बोधवशात् तत्तत् पाठादीनां परिवर्त्तनाल्लिपिकरप्रमादाच्चातीवव्याकुलतामापेदे । इह खलु पुस्तके कस्मिंश्चिदध्याये पठितानां श्लोकानाम् अपरस्मिन्नध्याये लेखनादाकुलतायां बहूनि वक्तव्यानि सन्ति । अपरेऽधिका दोषाश्च प्रायो दृश्यन्ते । अपरे श्लोका वा पाठा वेति निश्चयेन ज्ञातुमपि दुष्कराः । तेषां तेषां यथारुचि लिखिता अपि पाठाअभिनवा ऽदृश्यन्ते । ततश्चेह ग्रन्थे कालान्तरसम्भूतान् बहून् लिपिकरदोषान् शोधयित्वा लोकार्थं कार-यितुकामैः प्रामाणिकैः कतिपयैर्विज्ञैस्तदर्थमहंविज्ञापितः ॥

अहन्त्वनेन पुस्तकेन सर्व्वेषां ज्योतिश्शास्त्रमभ्यसितुमीहमानाना-मतीवप्रयोजनताञ्च संलक्ष्य तत् तदर्थसिद्ध्यै अनैषम् । अथापि यस्य कस्यचित् सकाशे एतस्य पुस्तकस्य विद्यमानभावः श्रूयते अनुमीयते बा तदपि तत-श्चाहर्तुं न शक्यते । किन्तु मया तत्तद्दिशाभागात् अस्या दैवज्ञकामधेनो श्चत्वारि आदर्शपुस्तकानि अधिगतानि । तानि सर्व्वाणि मदीयेन पुस्त-केन सह संवाद्य सम्यग्विचारितानि । तेषु प्रायशो विसदृशानि पाठान्त-राणि दृष्टानि । तेषामत्र कानिचित् पाठान्तराणि अधोलिखितानि । तान्यवलोकयद्भिः कैश्चिन्मनस्विभिरेतस्मिन् परिशोधने मम गाढपरिश्रमो ज्ञातुं शक्यते । एतस्य परिशोधने मया भूयान् परिश्रमः स्वीकृतः तथापि सर्व्वथा एतत् पुस्तकं परिशुद्धमिति वक्तुं न शक्यते । ततो यदत्रावशेषं किञ्चिन्मम स्खलनं सुधीभिः समुद्भाव्यते तत्तैर्निजगुणेन परिशोधनीयम् ॥

अपिचैतस्मिन् पुस्तके सिंहलाक्षरैर्मुद्रिते केषाञ्चित् स्वदेशीयानामेव तस्य प्रयोजनं भविष्यति । यथा तत् स्वदेशीयानां परदेशीयानां सर्व्वेषामपि

Aho ! Shrutgyanam

प्रायः प्रयोजनं भविष्यति तथाकर्तुमर्हतीति देवनागराक्षरैर्मुद्रयितुम् एकेन मन्मित्रमहाशयेन निवेदितम् । तस्मात् तद्वचनं समाकर्ण्य बहूनां स्वदेशीयानां परदेशीयानामपि प्रयोजनलाभे सार्थकताञ्च समभिचिन्त्य वाराणसी नामके नगरे चौखम्भासंस्कृतपुस्तकालयकार्य्याध्यक्षाय श्रीमते हरिदास गुप्तमहाशयाय दत्वा देवनागराक्षरैस्तन्मुद्रापितवान् । अलं पल्लवितेन । गुरुभ्यो नमः । शिवमस्तु ॥

श्री शीलस्कन्धस्थविरस्य ॥

लङ्कायां शैलबिम्बारामे
१८२४ शाके संवत्सरे ॥

Aho ! Shrutgyanam

अनुक्रमणिका ।

प्रकरणाङ्काः	प्रकरणानि	पृष्ठाङ्काः
	प्रथमोऽध्यायः	**१–४**
१	सामान्यविधिः	१–४
	द्वितीयोऽध्यायः	**५–१२**
२	संवत्सरफलम्	५–११
३	आदित्यचारः	११–१२
	तृतीयोऽध्यायः	**१२–२८**
४	नक्षत्रवर्गनिर्णयः	१२–१६
५	तिथिनिर्णयः	१६–१६
६	योगनिर्णयः	१६–१६
७	करणनिर्णयः	२०–२०
८	वारदेवताः	२०–२०
९	पंचाङ्गनिर्णयः	२०–२०
१०	अस्तोदयनिर्णयः	२१–२१
११	छायानिर्णयः	२१–२२
१२	बिम्बनिर्णयः	२३–२३
१३	समागमनिर्णयः	२३–२५
१४	स्वातियोगः	२५–२५
१५	आषाढ्योगः	२५–२५
१६	रोहिणीयोगः	२५–२७
१७	वर्षाधिपतिफलम्	२५–२७
१८	चन्द्रचरितम्	२७–२८
	चतुर्थोऽध्यायः	**२८–३४**
१९	संक्रान्तिनिर्णयः	२८–३०
२०	उदयास्तमयनिर्णयः	३०–३१
२१	गतिनिर्णयः	३१–३२
२२	वर्षाधिपतिफलम्	३३–३४
२३	भौमचरितम्	३४–३४
	पञ्चमोऽध्यायः	**३४–३६**
२४	वर्षाधिपतिफलम्	३४–३६
२५	बुधचरितम्	३६–३६
	षष्ठोऽध्यायः	**३६–४२**
२६	आग्नेयादिवर्षफलम्	३६–३६
२७	षष्टिसंवत्सरनिर्णयः	३६–४१
२८	वर्षाधिपतिफलम्	४२–४२
२९	जीवचरितम्	४२–४२
	सप्तमोऽध्यायः	**४२–४६**
	वर्षाधिपफलम्	४२–४५
३०	शुक्रचरितम्	४५–४६
	अष्टमोऽध्यायः	**४६–४९**
३१	वर्षाधिपफलम्	४६–४८
३२	शनैश्चरचरितम्	४८–४६
	नवमोऽध्यायः	**४९–५६**
३३	सूर्योपरागनिर्णयः	४६–५३
३४	चन्द्रोपरागनिर्णयः	५३–५४
३५	राहुचरितम्	५४–५६

Aho ! Shrutgyanam

प्रकरणाङ्काः प्रकरणानि पृष्ठाङ्काः

दशमोऽध्यायः ५६–६५

३६ सप्तमुनिचारनिर्णयः ५६–५७
३७ अगस्त्याचारनिर्णयः ५७–५८
३८ परिवेशनिर्णयः ५८–५९
३९ इन्द्रचापनिर्णयः ६०–६०
४० निर्घातपातनिर्णयः ६०–६१
४१ उल्कानिर्णयः ६१–६१
४२ दिग्दाहनिर्णयः ६२–६२
४३ गन्धर्वनिर्णयः ६२–६२
४४ भूचलननिर्णयः ६२–६२
४५ उत्पातनिर्णयः ६२–६५
४६ सङ्कीर्णचरितम् ६५–६५

एकादशोऽध्यायः ६५–७१

४७ सामान्यदेशविधिः ६५–७१

द्वादशोऽध्यायः ७१–७८

४८ आयुर्दायादेशः ७२–७८

त्रयोदशोऽध्यायः ७८-८८

४९ रविदशा ७८–८०
५० चन्द्रदशा ८०–८१
५१ शुक्रदशा ८१–८३
५२ जीवदशा ८३–८४
५३ बुधदशा ८४–८५
५४ कुजदशा ८५–८६
५५ शनिदशा ८६–८७
५६ दशाविपाकादेशः ८८–८८

चतुर्दशोऽध्यायः ८८–९३

५७ अष्टकवर्गादेशः ८८–९३

प्रकरणाङ्काः प्रकरणानि पृष्ठाङ्काः

पञ्चदशोऽध्यायः ९३-१०६

५८ योगगुणादेशः ९३–१०६

षोडशोऽध्यायः १०६-११२

५९ पुरुषलक्षणम् १०६–११०
६० अङ्गलक्षणादेशः ११०–११२

सप्तदशोऽध्यायः ११२-११६

६१ माषकोत्पातादेशः ११२–११३
६२ तिलकादेशः ११३–११४
६३ स्पन्दनादेशः ११४–११५
६४ मोषादेशः ११५–११६
६५ देहोत्पातादेशः ११६–११६

अष्टादशोऽध्यायः ११६-१२१

६६ स्वप्नादेशः ११६–१२०

एकोनविंशोऽध्यायः

" " १२१–१२९

६७ गजचरितादेशः १२१–१२१
६८ अश्वचरितादेशः १२१–१२२
६९ वायसचरितादेशः १२२–१२६
७० श्वगोमायुचरितादेशः
" " १२६–१२८
७१ तिर्य्यग्चरितादेशः
" " १२८–१२९

विंशोऽध्यायः १२९-१५६

७२ शुभाशुभादेशः १२६–१३३
७३ सपत्नागमादेशः १३३–१३४
७४ समागमादेशः १३४–१३५

Aho ! Shrutgyanam

प्रकरणाङ्काः	प्रकरणानि	पृष्ठाङ्काः
७५	प्रोषितसमागमादेशः " "	१३५–१३५
७६	यात्रादेशः	१३५–१३६
७७	विजयादेशः	१३६–१३८
७८	सन्धानादेशः	१३९–१३९
७९	आश्रयणीयादेशः	१३९–१३९
८०	बन्धनमोक्षादेशः	१३९–१४०
८१	जीवोपद्रवादेशः " "	१४०–१४२
८२	कन्यावरलाभादेशः " "	१४२–१४३
८३	गर्भसम्भवादेशः	१४३–१४४
८४	पुत्रस्त्रीजन्मादेशः	१४४–१४४
८५	ऊर्ध्वजलादेशः	१४४–१४६
८६	अधोजलादेशः	१४६–१५२
८७	नष्टलाभादेशः	१५२–१५४
८८	नष्टकादेशः	१५४–१५५
८९	निधानादेशः	१५५–१५६
९०	संकीर्णादेशः	१५६–१५६
	एकविंशोऽध्यायः	**१५६–१६३**
९१	अभिमङ्गलसंशयनम् " "	१५६–
९२	दिवामुहूर्त्तम्	
९३	निशामुहूर्त्तम्	१५६–१५६
९४	कालहोरा	१५९–१५६
९५	चन्द्रावस्था	१५९–१६०
९६	सामान्यविधिः	१६०–१६३
	द्वाविंशोऽध्यायः	**१६३–१७४**
९७	अवयोगः	१६३–१६५
९८	विषयोगः	१६५–१६५
९९	रिक्ता	१६६–१६६
१००	वधयोगः	१६६–१६६
१०१	मासशून्यम्	१६६–१६६
१०२	तिथिशून्यम्	१६७–१६७
१०३	लग्नशून्यम्	१६७–१६७
१०४	अन्धयोगः	१६७–१६७
१०५	विष्टिः	१६७–१६७
१०६	पापनक्षत्रम्	१६७–१६७
१०७	दिनमृत्युः	१६८–१६८
१०८	षडाशीतिमुखम्	१६८–१६८
१०९	सप्तसूर्य्यदोषः	१६८–१६८
११०	रश्मिदोषः	१६८–१६९
१११	सूर्य्यशूलम्	१६९–१६९
११२	चन्द्रशूलम्	१६९–१६९
११३	चतुर्दोषः	१७०–१७०
११४	सप्तदोषः	१७०–१७०
११५	अष्टमहादोषः	१७०–१७०
११६	अर्धप्रहारयमदण्ड गुलिका	१७१–१७१
११७	नक्षत्रविषघटिका	१७१–१७१
११८	लग्नविषघटिका	१७१–१७१
११९	पक्षच्छिद्रः	१७२–१७२
१२०	वर्ज्यमासः	१७२–१७२
१२१	रश्मिकूपः	१७२–१७२
१२२	अन्नदोषः	१७२–१७३
१२३	शकटयोगः	१७३–१७३
१२४	षड्विंशतिदोषनामानि " "	१७३–१७४
१२५	दोषापवादः	१७४–१७४

Aho ! Shrutgyanam

प्रकरणाङ्काः प्रकरणानि पृष्टाङ्काः

१२६ दोषशुद्धिविधानम् १७४–१७४

त्रयोविंशोऽध्यायः १७४–१७८

१२६ गर्भदानम् १७४–१७६

१२७ पुंसवनविधिः १७६–१७७

१२८ सीमन्ताचधानम् १७७-१७८

१२९ प्रसूतविधानम् १७८–१७८

चतुर्विंशोऽध्यायः १७८–१९५

१३० बातकर्म्मविधिः १७८–१८०

१३१ बालग्रहेषु बलिदानक्षेपमन्त्रः १८०–१८६

१३२ नीराञ्जनाय बलिकर्म्मविधिः १८६–१८६

१३३ बालग्रहविधिः १८६–१८७

१३४ नामविधिः १८७–१८८

१३५ कर्णवेधविधिः १८८–१९०

१३६ उपनिष्क्रमणविधिः " " १९०–१९०

१३७ अन्नप्रासविधिः १९०–१९२

१३८ चौरविधिः १९२–१९४

पञ्चविंशोऽध्यायः १९५-२०२

१३९ आच्छादनविधिः " " १९५–१९७

१३९ उपनयनविधिः १९७–१९८

१४० अध्ययनविधिः १९८–२०१

१४१ समावर्त्तनविधिः २०१–२०१

१४२ गोदानविधिः २०१–२०२

प्रकरणाङ्काः प्रकरणानि पृष्टाङ्काः

षड्विंशोऽध्यायः २०२–२१५

१४३ वाथसबलिदानविधिः " " २०२–२०३

१४४ विवाहप्रश्ने शुभाशुभनियमः २०४–२०४

१४५ दिननियमः २०५–२०५

१४६ गणनियमः २०५–२०५

१४७ माहेन्द्रनियमः २०५–२०५

१४८ पुम्नक्षत्रम् २०६–२०६

१४९ स्त्रीदीर्घनियमः २०६–२०६

१५० योनिनियमः २०६–२०६

१५१ राशिनियमः २०६–२०७

१५२ राश्यधिपतिनियमः " " २०७–२०७

१५३ वश्यानियमः २०७–२०७

१५४ रज्जुनियमः २०७–२०८

१५५ बेधकनियमः २०८–२०८

१५६ भूतनियमः २०८–२०८

१५७ लिङ्गनियमः २०९–२०९

१५८ जातिनियमः २०९–२०९

१५९ गोत्रनियमः २०९–२०९

१६० पक्षिनियमः २०९–२१०

१६१ योगिनीनियमः २१०–२१०

१६२ आयनियमः २११–२११

१६३ दैवनियमः २११–२११

१६४ विवाहविधिः २११–२१४

१६५ राजाभिषेकविधिः " " २१४–२१५

सप्तविंशोऽध्यायः २१५–२३१

Aho ! Shrutgyanam

प्रकरणाङ्काः	प्रकरणानि	पृष्ठाङ्काः
१६६	वास्तुविधानम्	२१५–२२४
१६७	प्रवेशविधानम्	२२४–२२६
१६८	शयनासनविधिः	२२६–२२७
१६९	भूषणविधिः	२२७–२२६
१७०	स्त्रीविधानम्	२२६–२२९
१७१	पट्टविधिः	२२६–२३०
१७२	खड्गविधिः	२३०–२३०
	अष्टविंशोऽध्यायः	२३१–२३९
१७३	प्रवेशविधिः	२३१–२३१
१७४	कृषिकर्मविधिः	२३१–
१७५	विशिष्टवस्तुविधिः	–२३३
१७६	वापविधिः	२३४–२३७
१७७	संग्रहविधिः	२३७–२३८
१७८	वाणिज्यविधिः	२३८–२३९
	एकोनत्रिंशोऽध्यायः	२३९–२४७
१७९	यात्राविधिः	२३९–२४३
१८०	यात्राभक्षविधिः	२४३–२४४
१८१	यात्रायोगः	२४३–२४४
१८२	अभिष्टसिद्धिविधिः	२४५–२४७
	त्रिंशोऽध्यायः	२४७–२७०
१८३	प्रव्रज्याविधिः	२४७–२४८
१८४	प्रव्रज्यामुक्तविधिः	२४८–२४८
१८५	देवप्रतिष्ठापनविधिः	२४८–२५०
१८६	श्राद्धविधिः	२५०–२५१
१८७	ग्रहध्वंसविधिः	२५१–२५३
१८८	दर्वीकराचिकित्सा	२५३–२५७
१८९	मण्डलचिकित्सा	२५७–२५८
१९०	राजिलचिकित्सा	२५८–२५८
१९१	सर्व्वविषचिकित्सा	२५८–२५८
१९२	वृश्चिकविषचिकित्सा	२५६–२५६
१९३	मूषिकविषचिकित्सा	२५६–२५६
१९४	लूताविषचिकित्सा	२५६–२५९
१९५	स्थावरविषचिकित्सा	२६०–२६०
१९६	सङ्कीर्णदशाविधानम्	२६०–२७०
१९७	रोगध्वंसविधिः	२६०–२७०
	इति त्रिंशोऽध्यायः	२४७–२७०
१९८	ग्रन्थसमाप्तिः	२७०

Aho ! Shrutgyanam

Aho ! Shrutgyanam

दैवज्ञकामधेनोः ।

शोधनपत्रम् ।

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
२	१२	त्तिपत्	क्षिपेत्
४	४	स्युवर्जिराशयः	स्युर्वजिराशयः
,,	१७	गान्तममर्मो	गान्तमर्मो
,,	१८	विहिता	विहिताः
५	२०	विकालापिण्डं	विकलापिण्डं
७	२१	सम्प्राप्तमगुङ्लं	सम्प्राप्तमङ्गुलं
,,	२३	द्यगुङ्लं	द्यङ्गुलं
८	२	सम्भेवत्	सम्भवेत्
१२	३	बुधादिर्कः	बुधादिर्क
१३	१७	त्वंष्टमारुत	त्वष्ट्रमारुत
१८	२२	यप्रोत्कृष्ट	यत्प्रोत्कृष्ट
२३	२०	सोभाग्य	सौभाग्य
२४	११	क्षत्रियाञ्च	क्षत्रियाणाञ्च
२५	६	स्वत्पाषाढाभेव	स्वात्याषाढाभेव
२६	८	स्त्रिययस्तु	स्त्रियस्तु
,,	१८	विदधावि	विदधाति
,,	२०	स्यञ्च	सस्यञ्च
२८	४	षस्मासा	षण्मासा
२९	१	तदप्यर्द्धीकृतं	तदप्यर्द्धीकृतं
३०	२२	महीयसीस्य	महीयस्य
३१	१९	चलोञ्चत	चलोच्चत
३२	२	स्फुटग्रह	स्फुटग्रह
,,	१९	चन्द्रामं	चन्द्राभं

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
३३	३	वक्रमश्रु	वक्रश्मश्रु
३४	८	देशाः	देशा ये
३५	२	सय	शयनं
,,	,,	खरनुतो	खरनुत्
,,	३	नदीधनतो	नदीधनम्
,,	१२	प्राग्वदिशः	प्राग्वद्दिशः
,,	२१	पौष्णषु	पौष्णेषु
,,	२३	कर्तिके	कार्तिके
,,	२४	कुरुत	कुरुते
३७	७	मतेच्च	मेतच्च
,,	९	दिवाकिणु	दिवाकिण्णु
,,	१०	सुरेद्यस्य	सुरेढ्यस्य
,,	२१	विभ्रान्त	विभ्रान्ति
३८	१	भानुनाभ्यश्च	भानुना ह्रत्य
३८	४	कुर्य्यत्	कुर्य्यात्
,,	१३	वाष्ट्रदीनि	स्वाष्ट्रदीनि
,,	१८	तारावक्रः	ताराचक्रः
४०	३	राजान्विता भूः	राजान्विता च भूः
,,	१२	तारणसाथ	तारणश्चाथ
,,	२१	रशादो	शरदो
४१	१५	ल्यवङ्गः	प्लवङ्गः
,,	२१	नृपघ्नो	नृपघ्नो
४४	५	केशाशिबलान्	केशास्थिबलवान्
,,	११	महामात्थ	महामात्य
४५	१३	घ्नन्तिः	घ्नन्ति
,,	१६	गान्धरा	गान्धार
,,	१८	सूक्षवस्त्र	सूक्ष्मवस्त्र
,,	२३	तोगजातं	रोगजातं
,,	२४	विषदमूर्त्तिःप्यर्तवान्	विशदमूर्त्तिःपूर्णवान्
४६	१२	नलवद्	नलवद्
,,	१७	र्शानः	शानिः

Aho ! Shrutgyanam

पृष्टम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	२०	श्रवणानिलगः	श्रवणानिलगः
४७	११	जलोदूभूता	जलोदूभूता
,,	२५	कृदभिष	कृद्भिष
४७	१७	स्वात्तौं	स्वातौ
,,	१६	मित्रेभिनति	मित्रेभिनत्ति
४८	१६	हितात्मनः	हितमात्मनः
,,	२०	पश्वारणस्व	पश्चालश्च
४६	७	राहोश्चरितं	राहोश्चरितं
,,	१०	ऋक्षो	ऋक्षाम
५०	४	अथेचैवं	अथचैवं
,,	५	महान् योगोस्य उदाहृतः	महानन्ययोगानुदाहृतः
५१	१७	प्राक् कृत्वा	प्राग्वत्कृत्वा
५२	३	नातिविक्षेपः	नातिविक्षेपः
,,	११	क्षुणं	क्षुण्णे
,,	१७	विश्लिप्यपुवर्गयेत्	विश्लिष्याप्यथ वर्गये
,,	१८	विमर्द्धनम्	विवर्द्धनम्
५३	१	भेवत्	भवेत्
५८	२१	निम्बप	निम्बपत्रं
,,	२२	विभजेऽष्टमोजे	विभजेच्छिष्टमोजे
,,	२४	नतूर्द्धं	नतूर्द्धं
५६	१	अभिष्ट	अभीष्ट
,,	८	मासवः	मासतः
६०	१६	निर्घीतो	निर्घातो
६१	३	राष्टूशून्यताम्	राष्ट्रशून्यताम्
,,	१९	वर्षमात्रणे	वर्षमात्रेण
६२	१६	वत्सरा ङ्कितया	वत्सराङ्कितया
,,	१८	दुर्भिक्षकर्तारः	दुर्भिक्षकर्त्तारः
६५	३	शेषषु	शेषेषु
,,	१४	दैवज्ञकामधन्वाचारिति	दैवज्ञकामधेन्वां चरित
६८	२१	दुर्द्धषणः	दुर्द्धर्षणः

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	२३	विंशोशकः	विंशोंशकः
६६	३	कृशोनुहग्र	कृशोनुग्रह
७०	१०	भवत्	भवेत्
७३	११	युतश्चद्रो	युतश्चन्द्रो
,,	१७	निसेविन	निषेविन
७४	१७	समस्तग्रैह	समस्तग्रहैः
७५	१०	तास्त्रादेव	मस्तादेव
८२	१७	मनङ्गनार्त्तित्तम	मनङ्गनार्त्तिम
८२	३	तनुपित	तनुपित्त
८३	१५	पितज्वरं	पित्तज्वरं
८५	१७	पितश्च	पित्तश्च
८७	४	मरणपीति	मरणभीति
,,	१९	र्रकतनस्य	र्रकतनयस्य
८८	२१	विचरज्ञन्मिनां	विचरञ्जन्मिनां
८९	२	वितनाशश्च	वित्तनाशश्च
,,	१२	दुखपरम्परा	दुःखपरम्परा
९१	१४	चन्द्राक्त्याज्ञारि	चन्द्राद्याज्ञारि
,,	१५	व्ययधीर्धर्म्मगः	व्ययधीधर्म्मगः
,,	१७	स्वस्माद्दपन्चये	स्वस्मादुपचये
,,	१८	सुतधीर्धर्म्म	सुतधीधर्म्म
९२	५	निभनलाभाच्च	निधनलाभाच्च
,,	६	प्रथभा	प्रथमा
,,	१४	सूर्व्बाद्रिफा	सूर्य्याद्रिष्फा
,,	१६	लग्नाषट	लग्नात्षड्
९४	१५	चद्रे	चन्द्रे
९७	१२	सञ्चातो	सञ्जातो
,,	२०	यमारार्कैः	यमाराक्र्वैः
९८	२०	तत्रो	तत्र
९९	७	सर्खलितो	स्खलितो
१००	२०	तुङ्गधान	तुङ्गधान
१०१	१७	रुतर	रुत्तर

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	२३	कटोर	कठोर
१०५	१०	ल्यवङ्गमः	प्लवङ्गमः
१०६	७	निसेवनाञ्च	निषेवनाञ्च
,,	१६	सनान	समान
,,	२६	रुज्वलान्ती	रुज्ज्वलन्ती
,,	२०	कुटिलावसना:	कुटिलावसाना:
२०६	६	सुप्रस्ता	सुप्रशस्ता
११३	८	प्रियविप्रयौ	प्रियविप्रियौ
,,	१६	पीत श्वेतो	पीत श्वेतौ
११४	२२	व्यवसन	वसन
,,	,,	श्रवणप्रिम	श्रवणप्रियम्
११५	१७	जङ्घाया:	जङ्घायां
,,	१६	स्यन्दुना	स्यन्दना
११६	८	सत्वसंयुक्तम्	सत्वसंयुत
,,	१६	प्रयतोल्यं	प्रयतोल्पं
११७	६	पश्याज्जन्मनि	पश्यज्जन्मनि
,,	११	प्रघूणु	प्रघूण
,,	१६	सदत्फलाप्तिः	सदसत्फलाप्तिः
११८	४	निसेवनञ्च	निषेवनञ्च
,,	६	कन्थायां	कन्यायां
११६	११	श्वश्रुकेशगख	श्मश्रुकेशनख
,,	१५	जतुमाण्ड	जतुभाण्ड
,,	२०	विष्टने	विष्ठने
१२०	६	ल्यव	प्लव
१२०	११	नः प्रशास्यते	नप्रशास्यते
,,	२२	निसेवन	निषेवन
,,	२४	विध्वसनम्	विध्वंसनम्
१२१	३	स्वानञ्च	श्वानञ्च
,,	६	वृहति	वृंहति
,,	१२	गजचारिता	गजचरिता

३७

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
१२२	४	वृत्त	वृक्षो
१२३	२	सुतत्त	सुतक्षय
,,	५	वाहनशास्त्रो	वाहनशास्त्रो
१२४	१	प्रप्तिः	प्राप्तः
१२५	१८	स्त्रीभालो	स्त्रीलाभो
१२७	११	जिघ्रेश्त	जिघ्रते
१२९	१	नगहेष	गृहेषु
,,	५	तर्य्यग्	तिर्य्यग्
,,	१३	मङ्गलद्रव्यानां	मङ्गलद्रव्याणां
१३०	१७	चाणप्रकृति	घ्राणप्रकृति
१३२	१८	पुंसाकिवातङ्क	पुंसांकीटातङ्क
,,	२४	रुजामिहव	रुजामिह च
१३३	६	प्रवदे तदा	प्रवदेत्तदा
,,	२१	विर्य्यये	विपर्य्यये
१३४	४	उदयर्क्षगतामरार्तवश्च	उदयाद्विगतामरार्चितश्च
,,	१४	चरविलग्नतः	चरविलग्नगतः
,,	१६	प्रयातुन्नियमेन मासै	प्रयातुर्नियमेन मासैः
,,	२२	सुरस्थान	स्मरस्थान
१३६	५	शुभायसासितां	शुभं यियासितां
१३७	२	बिद्विषकस्तदा	विद्विषतस्तदा
,,	१४	साम्यगति	याम्यगति
१३८	१२	ज्यास्थितं	कुज्यास्थित
१३९	२	प्रवेदन्नृप	प्रवदेन्नृप
,,	६	हेते	हेतौ
,,	१९	प्रीतिस्ववाटेव	प्रीतिश्चवासैव
१४०	१	पापात्त्रं	पापक्षेत्रं
,,	३	स्यादिचेरण	स्यादचिरेण
१४१	१	गृद्धकाखवदानाभुजगेन्द्रै	गृद्धकोलवदनाभुजगेन्द्रै
,,	३	माधष्ठिताः	माधिष्ठिताः
,,	४	गात्रिभवां	गात्रभवां

Aho ! Shrutgyanam

पृष्टम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	९	कुय्यु	कुर्य्यु
,,	१३	रायकेनाड्यास्तो	रायिकनाडयास्थितो
१४१	१७	द्विचतुरर्द्धेक	द्विचतुरर्द्धेकं
,,	२०	निमसः	निमेषः
,,	२१	स्वेता	श्वेता
,,	२२	समे	सचे
,,	,,	देहार्द्धेघ्री	देहार्द्धाङ्घ्री
१४२	१	माराहति	मारोहति
,,	३	भङ्गमद्दन्यनटुखते	भङ्गमर्द्देननाम्रनिर्द्दिशेत्
,,	१०	रुद्धस्चवा	रुद्धश्रवाः
,,	१६	सकर्म्म	सत्कर्म्म
१४४	१	नावानास्थिन्	तावानास्मिन्
१४५	१०	जलसश्रयौ	जलसंश्रयौ
,,	१८	वेहभृतिश्चुवं	देहभृतिर्भुवं
१४६	१	जललुलितपानिः	जललुलितपाणिः
,,	३	स्तोषकाय्यौ	स्तोयकार्य्यौ
१४६	१२	———	इत्यूर्द्धजलादेशः
,,	२३	ज्जलाभाव	ज्जलाभावं
१५०	५	उदकत्रिपि	उदकत्रिभि
,,	८	सलिल	सलिलं
,,	२३	विभातकस्य	विभीतकस्य
१५१	५	सर्व्वषामेव	सर्व्वेषामेव
१५१	५	मुन्दुरोध	मुन्दुरोध
,,	८	यवारि	वारि
,,	१०	पञ्चक	पञ्चकं
१५२	१६	कतकफल	कतकफल
,,	२३	वर्गोतमे	वर्गोत्तमे
१५३	६	सोम्य	सौम्य
१५५	१८	सूय्यदि	स्युर्य्यदि
१५६	२	सल्यस्योक्तः	संलक्ष्योक्तः

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पाङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
,,	६	नश्यतिप्लुत	नश्यति
,,	११	इत्यनवद्शनः	इत्यनवदर्शिनः
,,	,,	देवज्ञ	दैवज्ञ
१५७	५	कृतिका	कृत्तिका
१६१	२०	बीजलं वा ग्रहश्च	बीजलवं गृहश्च
१६३	२२	निञ	मित्र
१६४	१५	त्रिसड्	त्रिषड्
१६५	१३	नागाख्याः स्वास्तिथयो	नागाख्यास्तिथयो
,,	१६	विक्द्दश्च	दिक्द्दश्च
१६६	७	व्युत्तरा	त्र्युत्तरा
१६७	९	इत्यस्य योगः	इत्यन्धयोगः
,,	१४	गाजिझढ	ग्राजिझे च
१६७	१६	ईदसे	ईदशे
१६८	१०	रविस्यतक्षांद्दशमे	रविस्थधिष्णाद्दशमे
,,	१६	चन्द्रे	चान्द्रे
,,	१७	ज्ञानदय	ज्ञानदया
१६६	४	इद्रभम्	रुद्रभम्
,,	९	जीवेन्मूढे	जीवे मूढे
१७०	३	रविन्दु	रवीन्दु
,,	८	नयानिति	नयं नेयं
,,	१३	चन्द्रसूर्य्यो	चन्द्रसूर्य्यौ
,,	१४	नीङ्ग जन्म	नागजन्म
१७१	२	———	इत्यष्टमहादोषः
,,	६	गुधिकाः	गुलिकाः
,,	१०	नरफलननग	नरफलनग
१७२	९	रविन्दुयोग	रवीन्दुयोग
,,	१४	वर्णान्ते	वर्षान्ते
,,	२०	विशभम	विंशभम
१७४	१३	पराभिन्नारकर्म्मदो	पराभिचारकर्म्मादौ
१७६	११	कतकास्ति	कतकाक्षि

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
१७७	२०	विभिरेखाहितं नस्याद्	विभिरेवहितस्तस्या
१७८	२	पापा न्म न्याय	पापात्मन्याय
१७८	२	विद्वद्	विद्वित्
१८१	२१	तच्छुर्द्दि	तच्छर्द्दि
१८३	१	मलिनम्	मीलनम्
,,	२	पित्तं	पीतं
,,	५	मेकादेशे	मेकादशे
,,	१६	फलगषम्	फलगुषम्
१८४	१३	च्छार्द्दिनानाहोरो	च्छार्द्दिनानाहारो
१८५	२	कलहंसौ	कलहंसी
१८६	५	स्नानं	स्नानञ्च
,,	६	सप्तदीशे	सप्तदशे
,,	२३	तिलाविभिरन्नेः	तिलादिभिरन्नैः
१८७	४	पाभिरन्नेः	पाभिरन्नैः
१८८	३	रवतीयुजौ	रेवतीयुजौ
,,	४	खचटतपादावर्गाः	कचटतपादावर्गाः
१८६	१०	रुन्ध्रारि	रन्ध्रारि
,,	१५	वृहष्पतिच्त्रं	वृहस्पातिक्षेत्रं
,,	१८	नरवीरञ्चसाङ्गली	करवीरञ्चलाङ्गली
,,	२०	कर्णावल्यन्तु	कर्णावल्यान्तु
,,	,,	मांसलाबास्थिरा	मांसलाचस्थिरा
,,	२४	संचा	संज्ञा
१८६	२४	दाशानाञ्च	दासानाञ्च
१६०	३	ग्रहात्	गृह्णात्
,,	१६	नवक्तेतत्	नवत्वैतत्
,,	२१	वश्यरुद्रयोः	वैश्यरुद्रयोः
,,	२२	पञ्चश	पञ्चाश
,,	२३	सावणात्	सावनात्
१६१	३	ह्वेते	ह्येते
,,	८	बारासा	वरांशा

Aho ! Shrutgyanam

पृष्टम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
१९२	१२	मरणभभ्येति	मरणमभ्येति
,,	१३	शिषो	शिशो
१९४	१५	सयुक्ता	संयुक्ता
१९६	१७	रुद्राक्षर्शांगेष्टथवरश्य	रुद्राक्षेङ्गेष्टबरस्य
१९७	८	वेश्यः	वैश्यः
१९६	२१	श्रांश्वनीबाश्वीगक्षमु	अश्विनीचाश्वशिक्षामु
१०२	२१	शिक्षावधानं	शिक्षाविधानं
१०७	३	स्तृनीयैकदशौ	स्तृनीयैकादशौ
२०४	११	द्वितीयं	द्वितीये
,,	२६	शुभाशुग	शुभाशुभ
१०६	४	प्रतिलोभकाः	प्रतिलोमकाः
,,	२६	गात्रनिर	गोत्रनियमः
२१०	२३	चरुणः	वरुणः
२१२	२३	ग्रहाणाङ	ग्रहाणाञ्च
२१४	२२	मानिति	मानिनि
२२६	२२	वदीयननयना	तदीयनयना
२२७	६	चोध्वमुखी	चोर्ध्वमुखी
,,	२०	षण्माश	षण्मास
२२८	६	मूर्ध्वनि	मूर्द्ध्नि
,,	१०	न्निकने	न्निखने
,,	२६	त्यंशुमालिनी	त्यंशुमालिनि
२२०	२५	स्त्रायोदश	स्त्रयोदश
२११	७	रुद्रछमान्तरे	रुद्रोब्रकुम्भन्तरे
२२५	१४	बिशालभमरुदयश्च	विफलभ्रमरुचिर्यश्च
२२६	१२	पृकथ	पृथक्
२२७	१	शितांशुगुलम्	शताङ्गुलम्
,,	१०	त्यङ्गुलोतरः	त्यङ्गुलोत्तरः
२३०	२	शोभानाः	शोभनाः
२३२	१४	कुदनैश्चव	केदनैश्चैव
,,	२५	———	इति कृषिकर्मविधिः ।

Aho ! Shrutgyanam

पृष्ठम्	पङ्क्तिः	अशुद्धम्	शुद्धम्
२३३	१४	सन्येशः	सैन्येशः
२३४	२३	मधादया	मघादया
२३४	१७	तल्लुगने	तल्लग्ने
२३७	१९	विदध्या	विदध्या
२३९	१३	दिक्त्वेव	दिक्ष्वेव
२४१	५	मिथने	मिथुने
२४५	१३	चुस्तेन	चुस्तेन
,,	२२	भोमवारे	भौमवारे
२४६	११	मषायने	मघायने
२४०	३	मघुप	मधुप
२५०	९	वाच्मि	चाह्मि
२५१	२	उर्ध्ववक्त्रो	उर्ध्ववक्त्रो

Aho ! Shrutgyanam

Aho ! Shrutgyanam

बनारससंस्कृतसीरीज़नाम्नी वाराणसेयसंस्कृतपुस्तकावली ।

इयं पुस्तकावली खण्डशो मुद्रिता भवति । अस्यां संस्कृतभाषानिबद्धा बहवः प्राचीना दुर्लभा उत्तमोत्तमाः केचिदङ्गलभाषानुवादसहिताश्च ग्रन्था मुद्रिता भवन्ति । तांश्च ग्रन्थान् काशिकराजकीयसंस्कृतपाठशालीयपण्डिता अन्येऽपि विद्वांसः शोधयन्ति । यैर्ग्राहकमहाशयैरियं पुस्तकावली नियमेनाविच्छेदेन संग्राह्या तैस्तदेकैकस्य खण्डस्य ।॥) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देयः । अन्यैर्महाशयैर्यैः कानिचित् खण्डानि संग्राह्याणि तैश्च प्रत्येकं खण्डानां १) मूल्यं प्रापणव्ययश्च =) देय इति ॥

तत्र मुद्रिता ग्रन्थाः ।	रु०	आ०
सिद्धान्ततत्त्वविवेकः खण्डानि ५	५	०
अर्थसङ्ग्रह अंग्रेजीभाषानुवादसहितः	१	०
[illegible]न्त्रवार्त्तिकम् खण्डानि १३	१३	०
[illegible]त्यायनमहर्षिप्रणीतं शुक्लयजुःप्रातिशाख्यम् सभाष्यं ख० ६	६	०
[illegible]ांख्यकारिका चन्द्रिकाटीकागौडपादभाष्यसहिता	१	०
वाक्यपदीयम् खण्डानि ५ (प्रथमभागः प्रथमद्वितीयकाण्डे पुण्यराजटीकासहित खण्ड ३ । द्वितीयभागः तृतीयाकाण्डम् हेलाराजटीकासहित खण्ड २)	५	०
रसगङ्गाधरः खण्डानि ९	९	[illegible]
परिभाषावृत्तिः खण्डे २	२	०
वैशेषिकदर्शनं किरणावलीटीकासंवलितप्रशस्तपादप्रणीतभाष्यसहितम् खण्डे २	२	०
शिक्षासङ्ग्रहः खण्डानि ५	५	०
नैष्कर्म्यसिद्धिः खण्डानि ४	४	०
महर्षिकात्यायनप्रणीतं शुक्लयजुस्सर्वानुक्रमसूत्रम् सभाष्यम्	३	०
ऋग्वेदीयशौनकप्रातिशाख्यं सभाष्यम् खण्डानि ४	४	०
(बृहत्) वैयाकरणभूषणम् पदार्थदीपिकासहितम् खण्डानि ४	४	०
विवरणोपन्यासः सटीकवाक्यसुधासहितः खण्डे २	२	०
तत्त्वदीपनम् (पञ्चपादिकाविवरणस्य व्याख्यानम्) ख० ८	८	०
वेदान्तदीपः (श्रीभगवद्रामानुजाचार्यविरचितः) खण्डानि ३	३	०
टुप्टीका खण्डानि ४	४	०

Aho ! Shrutgyanam

पातञ्जलदर्शनम्।श्रीरामानन्दयतिकृतमणिप्रभाऽऽख्यवृत्ति स०	१	०
व्याकरणमिताक्षरा। श्रीमदन्नंभट्टप्रणीता खण्डानि ७	७	०
रसमञ्जरी। व्यङ्ग्यार्थकौमुद्या प्रकाशेन च सहिता ख० ३	३	०
भेदधिक्कारः व्याख्यासहितः श्रीमदप्पयदीक्षितकृत उपक्रमपराक्रमसहितः खण्डे २	२	०
बोधसारो नरहरिकृतः तच्छिष्यदिवाकरकृतटीकया स० ख०	१०	०
ब्रह्मसूत्रदीपिका श्रीमच्छङ्करानन्दभगवद्भिरचिता।	२	०
दैवज्ञकामधेनुः अर्थात् प्राचीनज्योतिषग्रन्थः खण्डे ३	३	०
श्रीमदणुभाष्यम्। श्रीश्रीवल्लभाचार्यविरचितम्। गोस्वामिश्रीपुरुषोत्तमजी महाराजविरचितभाष्यप्रकाशाख्यव्याख्या समेतम् खण्डानि ६	६	०
तत्त्वशेखरः। श्रीभगवल्लोकाचार्यप्रणीतः। तथा–तत्त्वत्रयचुलुकसंग्रहः। कुमारवेदान्ताचार्यश्रीमद्वरदगुरुविरचितः।	१	०

व्रजभूषण दास और कम्पनी

चांदनीचौक के उत्तर नई सड़क बनारस

Aho ! Shrutgyanam